इस पुस्तक में पढ़िए—

* मॉस्को के व्यक्तिगत अनुभव
* सोवियत संघ के दर्शनीय स्थान
* भारत सोवियत मैत्री
* पारस्परिक सहयोग—आर्थिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक
* सोवियत जीवन की झाँकियाँ

• प्रकाशक
राजस्थान प्रकाशन
त्रिपोलिया, जयपुर-२

• मूल्य
पाँच रुपये पचास पैसे मात्र

• संस्करण :
अगस्त, १९६८

• मुद्रक
साधना प्रेस
जोधपुर

## Extracts from the letter of Shri K.P.S. Menon

(Ambassador in the USSR 1952-61)

**Chairman : Indo-Soviet Cultural Society**

......I have little doubt that the style of the book will be atonce elegant and effective.

The contents of the book, too, are atonce comprehensive and attractive. You seem to have covered every aspect of soviet life, with particular stress on IndoSoviet relations. I hope the book will be translated into English some time.

Palat House
OTTAPALAM

K.P.S. Menon

महापौर कार्यालय
नगर निगम
टाउन हाल
दिल्ली

## संदेश

मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता है कि भारत-सोवियत मैत्री पर आपकी पुस्तक 'मिलते क्षितिज' शीघ्र प्रकाशित होने जा रही है। भारत की सदैव यह इच्छा रही है कि उसके संबंध सभी देशों, विशेषकर अपने पड़ौसियों से, मैत्रीपूर्ण हों। यह संतोष का विषय है कि स्वाधीनता के पश्चात् भारत और रूस की मित्रता विश्व-शांति की प्रबल इच्छा और पारस्परिक सहयोग के ठोस आधार पर दिनोंदिन गहरी होती जा रही है। कभी-कभी राजनैतिक कारणों से जो भ्रम एवं संदेह उत्पन्न हो जाते हैं उन्हें दूर करने के लिये यह आवश्यक है कि दोनों देशों की जनता के बीच साहित्यिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में विचारों के आदान प्रदान के अधिक अवसर उपलब्ध किये जायें।

इस दिशा में आपने जो प्रयत्न किया है उसकी सफलता की मैं कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि प्रस्तुत पुस्तक भारत-सोवियत मैत्री की एक नई और मजबूत कड़ी सिद्ध होगी।

हंसराज गुप्त

# विषय-सूची

# मिलते क्षितिज

# मास्को में

## पूर्व प्रसंग

विश्व में सहयोग की भावना बढ़ती प्रतीत होती है और चेष्टा इस बात की है कि किसी देश की उन्नति में अन्य देश भी साझीदार हों। आज तो बहुत समय से चलती हुई अमरीकी-रूसी विरोध-भावना भी सहयोग के पथ की पथिक होती दिखाई देती है। मानव मात्र का सहयोग अपेक्षित है और सभी ओर यह प्रयास होता दिखाई देता है कि बढ़ते हुए ये कदम रुकें नहीं, मैत्री का यह सूत्र दृढ़तर होता जाय, सह-अस्तित्व एक सत्य बन जाय, मानवी एकता और सद्भावना का ऐसा सूर्य उद्भासित हो जिसका प्रकाश-पुंज विश्व के विरोधान्धकार को सर्वदा के लिए निष्कासित करदे। इसमें संदेह नहीं कि यदाकदा वैषम्य के बीजों का भी वपन होता है जिसकी फसल कभी-कभी ऐसी सबल और घनी होती है कि समता और साम्य की भावना तिरोहित होती दृष्टिगत होती है परन्तु विश्व का मस्तिष्क इस ओर भी सक्रिय है कि इस प्रकार के बीजों के मूल में ऐसा रसायन आरोपित किया जाए जो इन बीजों को सर्वदा के लिए नष्ट कर दे। इस प्रयत्न में कितनी सफलता मिलेगी यह तो भविष्य के गर्भ में है, किन्तु मानव की सहयोगी भावना को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। वर्ण-भेद, अर्थ-भेद, शिक्षा-भेद, भाषा-भेद आदि अनेक भेद इस प्रशस्त मार्ग की बाधाएँ हैं परन्तु मनुष्य इस ओर भी जागरूक है कि मूल रूप में भगवान ने प्राणिमात्र का अभेद स्थापित किया है—आज इसे नास्तिक-आस्तिक सभी स्वीकार करते हैं।

सहयोग की इस सामान्य भावना के संदर्भ में यह एक सर्व-स्वीकृत तथ्य है कि रूस और भारत एक दूसरे के बहुत निकट आ रहे हैं, राष्ट्र ही नहीं व्यक्तिगत जीवन में भी यह प्रभाव लक्षित होता है। दूर दूर दिखाई देने वाले ये क्षितिज मिलते प्रतीत होते हैं, या यों कहिए कि एक ऐसा क्षितिज निर्मित होता जा रहा है जो अभेद की स्थापना करता प्रतीत होता है। मिलन की इस प्रक्रिया को बोधगम्य रूप में प्रकाशित करना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है। इसके लेखन

में जहाँ व्यक्तिगत अनुभव, यात्राएँ और सम्पर्क है वहाँ मेनन जैसे राजदूत का नववर्षीय अनुभव निचोड़ भी है, विविध पुस्तकों के द्वारा प्रस्तावित तथ्यों का परीक्षण भी है और है एक ऐसी सुदृढ़ और सुपुष्ट भावना जो इस बात में विश्वास करती है कि जीवन के अग्रगामी चरणों में विकसित राष्ट्र एक ऐसा सबल प्रदान कर सकते हैं जिसे यदि सतर्कता के साथ ग्रहण किया जाए तो गति को प्रभावपूर्ण बना सकते हैं और सम्भावित निष्क्रियता को परम सक्रियता में परिवर्तित कर सकते हैं। परन्तु इस भावना को व्यक्त करने में जिस अभि-व्यक्ति प्रणाली का अनुगमन किया गया है वह दर्शन-निरूपण न होकर जीवन की सरलता और जिज्ञासा की तीव्रता से अनुप्राणित है।

## योरुप की ओर

अनेक वर्ष व्यतीत हुए, मन में एक महती आकांक्षा थी उन देशों का दर्शन करने की जो जीवन पथ पर द्रुतगति से अग्रसर हो रहे हैं, जो निर्माण-कार्य में सक्रिय हैं और जो कभी दूसरों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की चेष्टा भी कर चुके हैं। इंगलैंड, फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल अनेक देश अपने बौद्धिक कौशल से अपनी सत्ता को दूरस्थ देशों में स्थापित कर चुके हैं। रूस आदि देशों में इस प्रवृत्ति का अभाव उनकी विकास-योजना की कमी के कारण बताया जाता रहा है। पर यह इच्छा होती है कि इन देशों के जीवन दर्शन में प्रविष्ट होने का प्रयास इन देशों में जाकर ही किया जाए और फिर नव देश दर्शन मानवी स्वभाव भी है। यह एक खेद का विषय है कि हमारे देश में इस जिज्ञासा-पूर्ति के साधन नितांत सीमित हैं—कहीं कहीं तो यह भी देखा गया है कि आर्थिक आदि साधन होते हुए भी विदेश दर्शन की सुविधा प्राप्त नहीं होती—सरकारी बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। ऐसा देखने में आता है कि हम सामान्यतः विदेश यात्रा की बात तभी सोच सकते हैं जब या तो कोई विदेशी संस्था आमन्त्रित करे अथवा हमारी सरकार किसी कार्य विशेष से हमको विदेश भेजे। इसमें भी सीमाएँ हैं जो राजनैतिक क्षितिज को स्पर्श करने की प्रचुरता रखती हैं और अन्य क्षितिजों का बहिष्कार लक्षित होता है। पर विश्व, निश्चय ही, बहुत सीमित हो गया है और पारस्परिक सम्मिलन के अवसर बढ़े हैं। आवा-गमन के साधनों की उन्नति ने तो इस ओर युगांतर उपस्थित कर दिया है। मैं सुना करता था कि वर्तमान जेट उड़ान सुखप्रद ही नहीं नैकट्यप्रद भी है किन्तु

इसकी पुष्टि उस दिन हुई जब मैं मास्को से १ बजे उड़ा और ६॥ बजे दिल्ली आ गया (पर्याप्त समय-भेद के कारण दिल्ली की घड़ियों में काफी अधिक समय हो गया था)। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक और मानव प्रकृति के अनुकूल ही है कि किसी भी विचारशील व्यक्ति के मन में विदेश-यात्रा के भाव जाग्रत हों। यात्रा-संबंधी मेरी प्रवृत्ति का एक छोटा इतिहास भी है जिसका प्रथम भाग भारत की उन अनेक यात्राओं से संबधित है जिनके अंतर्गत स्वदेश के प्रायः सभी प्रान्तों का अनेक बार भ्रमण किया और मन में उस उमंग का अनुभव किया जो प्रत्येक यात्रा के मूल में प्रेरणा-शक्ति बनकर आगे बढ़ाने का कार्य करती है।

उक्ति है—

> 'जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू।
> सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू॥' (मानस)

मुझे अवसर मिला, और अनेक बाधाओं के होते हुए भी मिला। हिंदी के अध्ययनार्थ बाहर जाने के कम ही अवसर मिलते हैं, और ये भी आयु के ३५-४० वर्षों की सीमा से बँधे रहते हैं। मैं ४९ वर्ष का था जब यह अवसर आया कि विदेश जाकर अध्ययन करूँ—भाषा तथा ध्वनि-शास्त्र का।

## बलवती इच्छा

मैं विदेश गया एक महती आशा और आकांक्षा को हृदय में पिरोते हुए—और यह आकांक्षा थी 'रूस-दर्शन' की। रूस के अनेक साहित्यकारों की कृतियों का अँग्रेजी भाषा के माध्यम से परिचय हो चुका था, वहाँ की आर्थिक तथा राजनैतिक व्यवस्था विविध कृतियों के माध्यम से कुछ कुछ समझी जा चुकी थी परन्तु उस देश के दर्शन की अत्यंत बलवती इच्छा इन सभी बातों से पूरी होती दिखाई नहीं देती थी। मैं लन्दन में रहा, पश्चिम योरुप के देशों के देखने की संभावनाएँ स्पष्ट थीं—लौटते समय भी बिना अधिक अतिरिक्त व्यय के देखा जा सकता था, परन्तु रूस-दर्शन एक ऐसा दिवा-स्वप्न बनता रहता था जिस पर मेरा ध्यान बहुत अधिक था। विदेश में ऐसा यात्रा-साहित्य बहुत मिलता है जिसे यात्राओं की व्यवस्था करने वाली व्यावसायिक कम्पनियाँ बिना किसी मूल्य के वितरित करती हैं। मैं इस प्रकार की कई कम्पनियों में जाता रहता था और वहाँ से रूस-यात्रा के अनेक तथ्य एकत्र करता था। कैसे संभव होगा

रूस जाना—रूस जहाँ की राजधानी मास्को है, मास्को जहाँ का प्रसिद्ध स्थल क्रेमलिन है क्रेमलिन जिसके बाह्य प्रांगण में लालचौक है, लालचौक जहाँ लेनिन की समाधि है, लेनिन की समाधि जिसमें रूस का बहुत सा जीवन लिपटा हुआ है, रूस का जीवन जो योरुप में अपना अलग ही स्थान रखता है जिसे कुछ लोग श्लाघ्य समझते हैं और कुछ अग्राह्य। कैसे देखूं इस विचित्र देश को?—यह भावना घण्टों चिन्तन का विषय बनती थी। आज जब मैं इस आकांक्षा के बड़े भाग को पूरा कर चुका हूँ, ये बातें कुछ ऊल जलूल सी मालूम होती हैं। परन्तु कल्पना कीजिए उस जिज्ञासु की जो दो शताब्दियों का इतना अन्तर पढ चुका है, जिसके प्रवास के निकट ही यह देश विद्यमान है किन्तु जो यहाँ की यात्रा के साधन नहीं जुटा पाता। दो एक बार ऐसे अवसर आए भी किन्तु वही साधनों का अभाव। एक बार एक कम मूल्य की विशेष उड़ान थी। लन्दन विश्वविद्यालय के कई व्यक्ति इसमें शामिल भी हुए पर न्तु मेरे लिए यह सम्भव नहीं हो सका। जब लोग लौट कर आए तो कई सन्ध्याओं को इसी में लगाया कि उन लोगों के अनुभव सुनू। देश के विवरण सुनने से जिज्ञासा शान्त नहीं होती, और अधिक तीव्र होती है। मुझ में भी यही प्रतिक्रिया हुई। एक अवसर आया सन् १९६० में। मास्को में अखिल विश्व-प्राच्यविद्या सम्मेलन का आयोजन था। स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रिकन स्टडीज की एक विज्ञप्ति के अनुसार एक सस्ती उड़ान आयोजित की गई थी, किन्तु यह अगस्त में जाने को थी, मेरी योजना तब तक भारत पहुँचने की थी, द्रव्य का भी प्रश्न था, कैसे सम्भव होता, अतः उस बात को भी छोड़ा गया। परन्तु रूस देखने की बात मन से हटाई नहीं जा सकी। घण्टों सोचता, कैसे सम्भव हो? क्या कार्यक्रम बनाया जाए? द्रव्य का प्रबन्ध किस प्रकार हो? अन्त में यह बात कुछ जँचती प्रतीत हुई कि वापिसी यात्रा वायुयान द्वारा की जाए और वह मास्को होकर, इससे मास्को देखने का कुछ समय अवश्य मिलता। इस यात्रा के पक्ष में एक और बात थी कि उन दिनों मास्को नगर में ठहरने की मेरी व्यवस्था भी लगभग निश्चित थी, और वहाँ ठहरने का कोई व्यय भी, सम्भवत, मुझे नहीं करना पड़ता। पर मार्ग व्यय का सवाल तो था ही। मेरे पास केवल इतना द्रव्य था कि रेल द्वारा योरुप के कुछ देशों को देखता हुआ पानी के जहाज की सामान्य श्रेणी द्वारा भारत पहुँच सकूँ—कुछ रुपया बचता था, जिसका उपयोग घर के लोगों के लिए कुछ उपहार खरीदने में करना था। यदि मैं मास्को होकर आता तो

उपहार वाली बात तो समाप्त ही थी क्योंकि मेरे हिसाब में किराए भर की ही व्यवस्था बैठती थी; दूसरे रूस-दर्शन में पश्चिम योरुप के अन्य सभी देशों का दर्शन भी समाप्त हो रहा था। मैं इसके लिए भी तैयार था क्योंकि कुछ देश ब्रिटेन पहुंचते समय यात्रा में देख चुका था। पर संघर्ष समाप्त नहीं हो पाता था। लन्दन में मेरे दो अभिन्न मित्र थे। एक दिन हम तीनों की लम्बी बैठक हुई कि यात्रा संबंधी कार्यक्रम को अन्तिम रूप दे दिया जाए। जब मैं उस बैठक का स्मरण करता हूँ तो मेरे सामने अपने उस सौम्य मित्र की मूर्ति आ जाती है जो असमय में ही इस धराधाम को छोड़ गए—उनके तर्क मेरे सामने हैं; उनकी मूर्ति, कंधों पर बिखरते बाल, आँखों का तेज, ललाट की विशालता गम्भीर घोष सभी तो मेरे सामने हैं। हम बैठे हैं—बार्कले बैंक के सामने वाले उद्यान में, उधर रसैल स्क्वायर है, इधर रशन अध्यापन की शाला। पर लन्दन से लौटने के बाद मेरा उनका साक्षात्कार पत्रों में ही रहा, सुना वे भारत भी आए—मैं उनसे मिलने को व्यग्र था परन्तु वे शीघ्र ही पुनः लन्दन लौट गए और एक दिन अचानक बी०बी०सी० पर वह दुखद समाचार सुना। उनकी गम्भीर वाणी का एक अंश "गुप्ताजी आप भारी भरकम हैं......" न जाने कितने अवसरों पर मुझे शक्ति और प्रेरणा प्रदान करता रहा है। मेरे दूसरे मित्र भी उन्हीं की विचारधारा का समर्थन करते हुए मेरे प्रश्नों के उत्तर देने लगे। उनका योरुप-दर्शन-अनुभव बहुत विस्तृत था, उसी को आधार बना कर उन्होंने अकाट्य तर्क रखे और अन्त में निर्णय हुआ कि मैं रूस होता हुआ नहीं जाऊँगा, पूर्व कार्यक्रमानुसार रेल तथा पानी की यात्रा का ही उपयोग करूँगा। मेरे ये दूसरे मित्र इन दिनों कई वर्षों से हवाई के विश्वविद्यालय में काम कर रहे हैं। इस प्रकार मेरी प्रथम योरुप-यात्रा रूस-दर्शन के सुखानुभव से वंचित रही। परन्तु क्या वह ज्वाला शान्त हुई ? रूस देखने की जो प्रबल इच्छा एक बार जाग्रत हो गई थी वह प्रबलतर बनती रही और मैं दूसरी योरुप-यात्रा के स्वप्न देखने लगा जिसमें किसी भी परिस्थिति के आ जाने पर रूस को देखने की बात दृढ़ता के साथ निश्चित थी।

## मेरी दूसरी योरुप यात्रा

जैसा मैंने कहा अवसर आ ही जाते हैं। मेरी दूसरी योरुप यात्रा आयोजित हुई। द्रव्य का पुनः वही विकट प्रश्न— या यों कहिए, विदेशी मुद्रा का प्रश्न। मेरी यह यात्रा प्रमुख रूप से जर्मनी की थी और वहाँ की एक

अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस से मुझे पत्र-वाचन का निमंत्रण था। कांग्रेस के अध्यक्ष महोदय ने एक पुष्कल धन-राशि की मेरे लिए व्यवस्था की थी। यह उनकी महानता थी, मेरे प्रति—अनजाने के प्रति, सद्भावना थी। इतना ही नहीं प्रेजिडेण्ट प्रो० डॉ० स्विवर्नर ने मुझे काफी मात्रा में ट्रैवलर चेक भी भेज दिए, और मेरे योरप दर्शन का कार्यक्रम निश्चित हो गया।

बड़ी कठिनाई, विलम्ब और प्रतीक्षा के उपरान्त अनुमति मिलती है—विदेश गमन की। खैर, दिल्ली के कई चक्कर लगाने के उपरान्त मुझे बाहर जाने की आज्ञा तो मिल गई, पर जब मैं अपना टिकिट बनवाने एयर इंडिया के दफ्तर में पहुँचा और अपना यात्रा क्रम बताया, जिसमें लौटते समय रूस भी था, तो मुझे कहा गया कि टिकिट तो सिर्फ भारत से जर्मनी और जर्मनी से भारत का बनेगा उसमें अन्य बातें शामिल नहीं की जा सकतीं—'आप सीधे जर्मनी जाएं और वहाँ अपनी कांग्रेस में शामिल होकर भारत आ जाएं'। टिकट में कुछ ही रुपयों का फर्क था, मैंने बहुत कहा परन्तु टिकिट सीधा ही बना। हाँ, चलते समय एक 'हवाई बाबा' ने चुपके से सकेत किया, 'योरप से रिरूट करवा लेना—कुछ पैसा अवश्य लगेगा।' मैंने यह बात गांठ बाँध ली और इस का जप एक ऐसे मंत्र की तरह करता रहा जिसमें सफलता की पूरी सम्भावना होती है। रास्ते भर मैं सोचता रहा, परामर्श लेता रहा कि यह कैसे सम्भव होगा, किसी सरकारी आदेश का उल्लंघन तो नहीं होगा, व्यवस्था कसे होगी, वीज़ा किस प्रकार प्राप्त होगा—पर कुछ आश्वस्त सा था। कांग्रेस के दिनों में भी मेरा ध्यान इस ओर बराबर रहा।

## सोवियत सघ का वीजा

भाग्य से म्यूनस्टर में मेरी भेंट एक ऐसे व्यक्ति से हो गई जिसका कॉन्नोन-स्थित एयर इण्डिया के मैनेजर से घनिष्ट परिचय था, उसने पूरी व्यवस्था का भार लिया और जिस मार्ग से मैं लौटना चाहता था उसी के अनुसार टिकिट बदलवाने का आश्वासन दिया। सौभाग्य से जो देश मैं देखना चाहता था उन सभी का एंडोसमैंट मेरे पासपोर्ट पर पहले से ही था—अपनी प्रथम यात्रा में ही हाई कमिश्नर लन्दन के कार्यालय से मैंने यह कार्य करा लिया था। वहाँ सुविधा भी थी—आज की तो नहीं कहता, परन्तु तब एन्डोर्स कराने में भी दिल्ली के कई चक्कर काटने पड़ते थे। लन्दन में यह काम मिनटों में हो गया, फीस भी

वहाँ। अब वीज़ा लेने थे। मैं बॉन गया—वहाँ 'फटाफट' एक ही दिन में सभी स्थानों के वीज़ा मिल गए। देर ही नहीं लगती—पैसे दिए, सील लगाई और दस्तखतों सहित वीज़ा अंकित हो जाता है। सब देशों के वीज़ा मिल गए, परन्तु रूस का ?

रूस का वीज़ा प्राप्त नहीं हो सका। उसे प्राप्त करना कुछ कष्टप्रद है, कुछ द्रव्य का भी प्रबन्ध करना होता है और उसके लिए एक निर्धारित पद्धति है। रूस का वीज़ा 'इनटूरिस्ट' के माध्यम से प्राप्त होता है और उसके साथ निर्धारित द्रव्य-राशि के बराबर किसी मान्य मुद्रा में धन जमा कराना पड़ता है। अन्य स्थानों का वीज़ा प्राप्त करने के उपरांत मुझे रूस की वीज़ा-उपलब्धि पर ध्यान देना पड़ा और इसमें भी हमारे ऐसन वाले वही मित्र काम में आए—उनके द्वारा पासपोर्ट, निर्धारित द्रव्यराशि के चेक सहित, इनटूरिस्ट के पास भेज दिया गया कि वे शीघ्र ही कार्यवाही कर पासपोर्ट वापिस कर दें।

अब मेरे पास मेरा पासपोर्ट नहीं था, जर्मनी में तो कोई कठिनाई नहीं थी, परन्तु मुझे कई अन्य देश देखने के लिए जर्मनी से बाहर जाना था और बिना पास-पोर्ट के यह कैसे सम्भव होता। जाने का दिन निकट आता जाता था परन्तु बिना पासपोर्ट के कैसे संभव होता। हॉलैण्ड, बेलजियम आदि की यात्रा का कार्य-क्रम एक मित्र की मोटरगाड़ी द्वारा था। निश्चित दिन पर मोटरगाड़ी तो आ पहुंची पर बिना पासपोर्ट के कैसे बाहर निकला जाए। अगले दिन के लिए तै रहा, क्योंकि कुछ ऐसी सूचना का आभास था कि अगले दिन वीज़ा होकर पासपोर्ट मिल जाएगा। अगला दिन आया, गाड़ी भी आ गई, पर पासपोर्ट के दर्शन नहीं हुए। कब तक रुका जा सकता था ? मेरे एक मित्र ने सलाह दी और आवश्यक कार्यवाही भी की कि मैं अपनी यात्रा प्रारम्भ करूं और अगले दिन वीज़ा मुझे अगले पड़ाव पर मिल जाएगा। मुझे तो इतमीनान नहीं हुआ पर उनकी बात मान कर चल दिया। पूरे चार घण्टों की यात्रा के उपरान्त हम अगले पड़ाव पर पहुँचे। मोटर की गति १२०-१३० किलोमीटर प्रति घण्टा थी। राष्ट्रीय मार्ग पर गाड़ियों का इधर-उधर जाना बड़ा मनोरंजक लग रहा था, दृश्य भी सुंदर था—गाड़ी के साथी भी बहुत आकर्षक और स्नेह-युक्त थे; पर रह रह कर पासपोर्ट की याद आती थी। रात्रि को मिल कर हिंदु-स्तानी भोजन बनाया—दाल, सब्ज़ी, चावल। मैं बेतुका निरामिषी हूँ और अपने विदेशी मित्रों को बहुत कष्ट देता रहा हूँ। जापान में तो मेरे जापानी

पासपोर्ट तथा सामान की प्रतीक्षा की बात बताई। शीघ्र ही दोनों चीजें मिल गईं, और इन्टूरिस्ट के उस पथ प्रदर्शक के साथ अकेला मैं गाड़ी से रवाना हुआ। कुछ व्यस्त, कुछ व्यग्र—हवाईअड्डा अच्छी तरह नहीं देख सका, और जब लौटने को बारी आई तो हमें एक दूसरे हवाईअड्डे से यान आरोहण करना था।

मॉस्को में

मैं गाड़ी में बैठा, गाड़ी चलने लगी। तो मैं रूस आ गया, रूस की राज-धानी मॉस्को में ही तो मैं चल रहा हूँ। कुछ देर विश्वास नहीं हुआ—पर मॉस्को ही तो था। अभी रात नहीं हुई थी, सन्ध्या का झुटपुटा था—गाड़ी तेजी से बढ़ने लगी। 'यह मॉस्को है' अभी तक विश्वास क्यों नहीं हो रहा है। कभी कभी ऐसा होता है। आज से २०-२५ वर्ष पहले की बात है—रंगून पर हवाई आक्रमण हुआ, सारा जीवन अस्तव्यस्त हो गया। मेरे एक रिश्तेदार मुसी-बत में फँस गए, कोई समाचार नहीं—मैं बहुत परेशान था। अचानक एक रात किसी ने दरवाजा खटखटाया—मैंने खोला। सामने मेरे प्रिय रिश्तेदार अपने पुत्र के साथ खड़े थे। मुझे विश्वास नहीं हुआ, भौंचक्का रह गया। उन्होंने मुझे सम्बोधित किया। मैं ने समझा उनका भूत सामने खड़ा है—वे समाप्त हुए और अब यह भूत आ गया है। वे बताते थे—मैं कहने लगा 'आत्मा तुम जाओ, तुम्हें शांति मिले, इस संसार में भटकने से त्राण मिले—जाओ आत्मा जाओ, तुम्हें शान्ति मिले। मुझे तो याद नहीं कि मैंने ऐसा कहा परन्तु वे यह बात अब भी कहते हैं। जिस रूस की कल्पना इतने दिनों से मानस में निवास किए हुए थी जिसको देखने के लिये मैं इतना लालायित था, जो इतनी साधनाओं की अपेक्षा रखता था, जिसके लिये इतने समय से मैं दृढ़संकल्प था वह रूस, रूस की वह राजधानी मॉस्को, इस प्रकार मुझे प्राप्त हो जाएगी, कैसे विश्वास होता। पर सत्य की सर्वदा जय होती है, मेरा दिवा स्वप्न टूटने लगा, मैं इधर-उधर देखने लगा, मॉस्को की सड़कों पर कार आगे बढ़ रही थी। मेरी कल्पना साकार हो चुकी थी। बड़ा लम्बा रास्ता था, परन्तु सीधा। भवनों की समृद्धि दृष्टिगोचर हो रही थी, मार्गों का विस्तार सामने आ रहा था। अंधेरा बढ़ने लगा तो जुगनू जगमगाने लगे—प्रकाश होने लगा—मार्ग आलोकित हो गया, दुकानें जगमगाने लगीं, ऊपर की बत्तियां, विज्ञापन, सभी प्रकाशित होने लगे। रास्ता और रास्ता—मॉस्को का विस्तृत नगर। कितनी दूर और जाना है?

नगर तो देख ही रहा हूँ। रूसवासियों के दर्शन भी हो रहे हैं, कुछ भारी, कुछ कम भव्य पोशाकों में, बहुत ही विविधताओं के साथ रूसी नरनारी लक्षित हो रहे हैं, यान भी चल रहे हैं—लगभग एक ही प्रकार के। गाड़ी आगे बढ़ती गई और मेरे विचार भी चलते रहे। यकायक एक भव्य भवन के सामने मोटर-कार रुकी—यह मेरा होटल 'मिस्क' था। ड्राइवर ने सामान उतार कर स्वागतकक्ष में रखा।

## मिस्क होटल

होटलोपचार से मैं पूर्ण परिचित था। स्वागतकर्ता के समीप गया। उसने मेरा पासपोर्ट मांगा और कहा 'आपका पासपोर्ट कल प्रातः लौटा देंगे, आपका कमरा नं० १०२४ है— पोर्टर दिखाएगा'। पोर्टर सामान लेकर लिफ्ट पर गया, मैं उसके पीछे था। लिफ्ट की दो शृंखलाएँ थीं—दोनों चालू थीं, काफी बड़ी लिफ्टें थीं, पर कुछ विशेष सजी हुई या आकर्षक नहीं थीं। इस लिफ्ट को मैंने अनेक बार काम में लिया। इस में एक दोष था जब मैं नीचे से ऊपर १० वीं मंजिल पर जाता तो यह ९ वीं मंजिल पर ही रुक जाती थी—बहुत कुछ दबाने पर भी ऊपर नहीं चढ़ती थी, किन्तु जब मैं १० वीं मंजिल पर ऊपर बुलाता था तो निश्चय रूप से आ जाती थी। पोर्टर मेरा सामान मेरे कमरे में ले गया। मैंने इधर-उधर देखा—काफी बड़ा कमरा था, स्नान आदि की भी समुचित व्यवस्था थी। कॉट अपेक्षाकृत छोटी थी, फर्निचर भी अधिक भव्य नहीं था, पर सुविधा की सभी चीजें मौजूद थीं—लेखन सामग्री भी थी, होटल के नियमों की पुस्तिका थी। यह एक डबल बेड कमरा था, परन्तु मैं तो अकेला था, शायद कोई सिंगल बेड खाली न हो अथवा वहाँ के नियम के अनुसार इसी प्रकार की व्यवस्था हो। नीचे स्वागत-कक्ष से चलते समय मुझे कूपन-बुक दे दी गयी थी जिसमें मेरे सभी दिनों के भोजन की व्यवस्था थी। वही यूरोपियन प्रकार का भोजन— जलपान, दोपहर का खाना, चाय, रात्रि का भोजन। रात के ७॥-८ बजे थे, मेरी इच्छा थी कि कुछ खाया जाए—एक प्रकार से उस दिन भोजन का कुछ क्रम बैठा ही नहीं। प्रातः ९ बजे ही जल-पान के उपरान्त होटल से चल दिया था, उसके पश्चात एस.ए.एस. कार्यालय में आया, वहाँ से हवाई अड्डे पर। वायुयान के अन्दर जो कुछ मिला, उसका बहुत सीमित भाग ही मैं ग्रहण कर सका—मेरी अपनी सीमाएँ थीं। भाषा की कठिनाई थी। ऐसा प्रतीत होता था होटल के सभी परिचारक और परिचारि-

काएँ अंग्रेजी भाषा नहीं जानते थे, परन्तु वे यह समझ लेते थे कि मैं कौनसी भाषा बोल रहा हू और फौरन अंग्रेजी समझने वाले परिचारक अथवा परिचारिका को मेरे पास ले आते थे। वहाँ का मेनू समझना भी मेरे लिये एक कठिनाई थी। एक प्रकार से इतनी यात्राएँ करने के बाद भी मैं विदेशी मेनू समझने में असमर्थ रहा—किसी खाद्य वस्तु को देख कर ही निर्णय कर पाता हूँ कि यह मेरे लिये खाद्य है अथवा अखाद्य। इस बारे में मेरे भारतीय मित्रों ने मेरी बड़ी सहायता की है। लंदन मे मेरे एक अभिन्न मित्र इस कार्य के लिये मेरे साथ, कृपापूर्वक, रहते थे, जर्मनी मे एक अन्य, और जापान में एक ऐसी जापानी महिला इस विषय में मेरी सहायता करती थीं जो भारत में २।। वर्ष रह कर यहाँ की भोजन सबंधी आदतों से परिचित थीं—सामिष और निरामिष की पूरी व्यवस्था जानती थीं। विदेश मे यह कुछ कम समझा जाता है। एक घटना का स्मरण हो रहा है। मैं एडिनबरा से एक कण्डक्टेड टूर में गया हुआ था। १२-१ के आसपास भोजन के लिये बस एक होटल पर रुकी। मैं भी अन्दर गया—सॉफ्ट ड्रिंक के रूप मे नारंगी का रस तो ले लिया, अब भोजन की बारी आई। मैं अपनी टेबिल पर अकेला था। एक देवी आई, मेरी इच्छा पूछी, मैं ने 'वेज' कहा। यह कुछ चीजें लाई, मैंने मना कर दिया, फिर वह कुछ और, शायद मछली सहित, लाई उसके लिये भी मना कर दिया, तदुपरान्त वह अंडे वगैरा रख कर लाई मैं ने जोर देकर कहा 'वेज"। वह चकित हुई, और कुछ घास पात से रखकर लाई और ऊपर टमाटर तथा सेव के कुछ टुकड़े रखे हुए थे। जोर से रखकर बोली 'वेज"। मैं यह भोजन देखकर मुस्कराने लगा और धन्यवाद देकर उस घास-पात का निरीक्षण करने लगा। न जाने किस किस प्रकार की पत्तियां थीं, कुछ को चखा, फलों के टुकड़े तो खा ही लिये। वह मुझे देखती रही, सोचती होगी—'कैसा विचित्र वेजीटेरियन है', फिर एकायक मेरी टेबिल पर तर्जनी से शब्द करती बोली, 'वेट', और दौड़ गई। इस बार वह 'राइस पुडिंग' लेकर आई। 'मैं आशा करती हू आप यह खा सकेंगे'—मैं ने उसे धन्यवाद दिया और 'खीर खांड' का भोजन कर बस पर लौटा। मिस्र में भी कई बार भटकना-बदलती हुई पर खाने की कोई चीज नहीं जँची, अत में कुछ ब्रेड, दूध, फल खा कर रात्रि का भोजन पूरा किया। फिर उधर 'मुद्राविनिमय' काउण्टर पर गया, क्योंकि मेरे पास भोजन के कूपन तो थे परन्तु कोई मुद्रा नहीं थी, जेब में कुछ पैसे तो अनिवार्य होते ही हैं। मेरे पास अभी तक जापान-मुद्रा थी, उसमें से

काफी द्रव्य का परिवर्तन कराया क्योंकि मास्को ही मेरा अन्तिम पड़ाव था, उसके बाद तो एक सीधी उड़ान और भारत, जहाँ भारतीय मुद्रा लाने के लिये मैंने अपने संबन्धियों को लिख दिया था कि कहीं चुंगी वगैरा का प्रश्न आए तो मुझे सहायता मिल सके।

मैं बड़ी दूर घूमना चाहता था। मॉस्को में रात्रि की वह तड़क, भड़क, रंगीनी और मनमोहक रोशनी तो नहीं थी जो यूरोप के कई प्रसिद्ध नगरों में देखी गई, परन्तु काफी अच्छा था, और मौसम तो कमाल का था। लोगों ने बताया कि अभी दो दिन से ही इतना सुहावना मौसम हुआ है नहीं तो वर्षा थी, सर्दी थी। मैं तो जितने दिन रूस में रहा बहुत ही अच्छा मौसम रहा, और समय का पूरा पूरा उपयोग किया। सैलानियों को कभी कभी मौसम धोखा दे जाता है। बहुत से लोग जानते हैं कि भारत में सुदूर दक्षिण त्रिवेन्द्रम जाने पर स्वाभाविक रूप से यह इच्छा होती है कि कन्याकुमारी अंतरीप, जहाँ तीन समुद्र मिलते है, देखा जाए, और वहाँ के प्रमुख आकर्षण हैं—सूर्यास्त और सूर्योदय। लोग वहाँ हजारों की संख्या में प्रतिदिन जाते हैं पर घनाच्छादित आकाश उनके उद्देश्य को कम ही पूरा करता है, कभी कभी तो शाम-सुबह कई दिनों तक निराशा ही हाथ लगती है। मेरी तीन यात्राओं में मुझे दो बार सफलता मिली। मॉस्को में तो और ही बात रही—पूरी सफलता, जिसे शत-प्रतिशत कहा जा सकता है।

होटल से बाहर निकला, कुछ अधिक दूर नहीं गया, केवल इतनी ही दूर जहाँ से होटल दिखाई देता था। रात्रि का समय था, अपरिचित स्थान, भाषा की कठिनाई और कुछ थकावट भी, शीघ्र लौट आया और लिफ्ट पर सवार हुआ। वहाँ नं० ९ सर्क—मैं ने समझा १०वीं मंजिल आ गई—लिफ्ट से बाहर निकला तो पता लगा अभी एक मंजिल और है। मैं ने लिफ्ट को नहीं छेड़ा—जीने से गया। अन्य होटलों की तरह यहाँ भी सीढ़ियों पर कारपेट लगे हुए थे। एक ओर ९वीं मंजिल में ही बहुत सी रूसी वस्तुएं विक्रयार्थ सुसज्जित थीं—मैं ने थोड़ी देर वे चीजें देखीं और सोचा 'चलते समय खरीदूँगा'। तब अपने कमरे में पहुँच गया, प्रकाश किया, खिड़कियों से उस पार देखने लगा। कई स्कोई-क्रैपर दिखाई दिये जिनमें एक बहुत ऊँचा था—ऐसा प्रतीत हुआ जैसे किसी पहाड़ी पर निर्मित है। खूब रोशनी हो रही थी। इतना बड़ा, इतना ऊँचा, इतना प्रकाशयुक्त भवन—क्या हो सकता है? मैं सोचने लगा। इस समय और भी

बातें मस्तिष्क में घूम रही थीं—रूसी जीवन, रूसी क्रांति, रूसी विचार धारा, रूस की वैज्ञानिक उन्नति, रूस की आर्थिक व्यवस्था, रूस की शासन पद्धति, रूस के नेता—स्टालिन, लेनिन और उस समय के ख्रुश्चेव एवं रूस द्वारा भारत की उन्नति में प्रदत्त अनेक प्रकार की आर्थिक तथा टकनीकी सहायता। इसके साथ ही अगले दिन का कार्यक्रम भी व्यवस्थित किया जा रहा था। विचारों से ठसाठस मेरे मस्तिष्क ने जब कुछ ढीलापन लिया तो शयनावस्था आ गई। अगले दिन काफी सुबह उठा।

मास्को-दर्शन की एक रूपरेखा बन चुकी थी, और मैं कपड़े पहन कर नीचे आया। जलपान में अभी देर थी। मैं स्वागत कक्ष में बातें करने लगा। बड़ी अच्छी और स्पष्ट अंग्रेजी बोलती थी वह। मैं ने 'कण्डक्टैड टूर' की बात पूछी तो उसने बताया कि वहाँ ऐसी व्यवस्था नहीं है और यदि मैं अंग्रेजी वाला पथ-प्रदर्शक लेकर अपनी टैक्सी द्वारा देखने का उपक्रम भी करूँगा तो बहुत पैसा लगेगा। दुभाषिये का मूल्य वहाँ भी बहुत था और मेरे पास इतना द्रव्य कहाँ था, रूस आने में भी मित्रों की मदद रही थी। मैं ने गाइड के साथ दृश्यावलोकन की बात को मस्तिष्क से निकाल दिया। तभी मैं ने अपनी डायरी खोली और एक नम्बर देकर टेलिफोन करने को कहा। यह नम्बर एक भारतीय श्री वार्ष्णेय का था, ये कई वर्षों से मॉस्को में अध्ययन कर रहे थे। इन से मेरा परिचय बहुत ही आकस्मिक था। मैं वेस्ट बर्लिन में घूम रहा था—शायद मूंगफली या ऐसी ही कोई चीज खा रहा था कि सामने एक भारतीय को देखा। विदेश में अपने देशवासी को देखकर कितनी प्रसन्नता होती है इसका अनुभव वे ही कर सकते हैं जिन्हें इस प्रकार के अवसर प्राप्त हुए हैं। हम लोग रुके—पारस्परिक किंचित परिचय हुआ, और मैं ने अपने रूस पहुँचने की बात कही। उन्होंने बड़ा सौजन्य दिखाते हुए अपने नम्बर दिये और कहा 'जब भी आप पहुँचें अवश्य ही टेलिफोन करें'—मेरे लिये तो यह एक अच्छा अवलम्ब हो गया, बहुत प्रसन्न हुआ। १०-१५ मिनटों तक और इधर-उधर की बातें कीं—कुछ राजनीति, कुछ शिक्षा, कुछ स्वदेश, कुछ विदेश। श्री वार्ष्णेय भी वहाँ घूमने आये थे, परन्तु काफी दूर ठहरे थे अतः दोबारा मिलना नहीं हुआ। जब मैं मॉस्को पहुँचा तो उनको रिंग करवाया। काफी चेष्टा की, पर वे उस समय टेलिफोन पर नहीं मिल सके। मुझे कहा गया, 'आप अपना समय क्यों खोते हैं, आप जाइये, कुछ देखिये। मैं टेलिफोन पर बराबर चेष्टा करूँगी और आपके आने की बात आपके मित्र को बताऊँगी'। मैं अकेला ही चल दिया।

क्रेमलिन और लालचौक

सवाल यह था कि पहले कहाँ जाऊँ। सबसे प्रबल इच्छा थी—क्रेमलिन और लालचौक देखने की। मुझे कह दिया गया था कि बिल्कुल सीधे जाने पर मैं रेड-स्क्वायर (लालचौक) में पहुँच जाऊँगा और वहीं से क्रेमलिन। मैं देखता हुआ चला। अनेक भव्य भवन, नव निर्मित मॉस्को की शान के अनुरूप सिनेमा घर, रूसी क्रान्ति के उन्नायकों की विशालकाय मूर्तियाँ, भवनों में पूर्वी निर्माण की छटा, चौड़ा प्रशस्त राजमार्ग, रूसी चेहरे, नीले वस्त्रों का आधिक्य, पुरुषों के सिर पर विशेष प्रकार की छज्जेदार टोपी, विभिन्न वेश-भूषाएँ—सभी देखता चला। एक बड़ा चौराहा पार किया और लालचौक में जा पहुँचा। क्या यही वह स्थान है जिसके देखने के लिए मन में इतनी कामना थी? क्या इसी चौक में दाहिनी ओर उस लेनिन की समाधि है जिस महापुरुष ने वर्तमान सोवियत-संघ का निर्माण किया? क्या यही वह स्थान है जहाँ रूसी सेना की परेड आदि होती हैं? क्या बृहद् सार्वजनिक सभाओं का आयोजन यहीं होता है? क्या रूस के अनेक उत्सव इसी चौक में मनाए जाते हैं? क्या यही वह बहुचर्चित स्थल है जिसका आतंक और प्रभाव इतने लोगों पर छाया हुआ है? यही तो मॉस्को के जन-जीवन का हृदय है, यहीं तो विविध देशों के मंत्रियों ने सलामियाँ ली हैं, यहीं अन्तरिक्ष यात्रियों का सम्मान हुआ है? यहीं रूसी क्रान्ति की स्वर्ण-जयन्ती मनाई गई, यहीं से सामने गिर्जाघरों की मीनारें और गुम्बज दिखाई देते हैं। यहीं से क्रेमलिन में प्रवेश किया जा सकता है। पीछे की तरफ इतिहास-संग्रहालय है, बाँयीं ओर एक विशाल स्टोर तथा कई अन्य संग्रहालय भी हैं। इन्हीं सब बातों पर विचार करता हुआ मैं लालचौक में प्रविष्ट हुआ और लेनिन-समाधि के पास पहुँच कर विचार-मुद्रा में लीन हो गया। अनेक विचार मन में आने लगे। तो मैं लालचौक में पहुँच गया, अत्यंत प्रसिद्ध लालचौक! लेनिन-समाधि पर लम्बी क्यू लगी हुई थी और मैं भी उस दिन को छोड़ कर अन्य किसी दिन इस पवित्र समाधि के दर्शन करना चाहता था। मैं उत्तर की ओर बढ़ा, यहाँ से क्रेमलिन में प्रविष्ट होने का मार्ग था। बहुत लोग जा रहे थे, प्रायः सभी विदेशी; कुछ लोग अन्तर्राष्ट्रीय युवक-सम्मेलन में भाग लेने वाले भी थे। अनेक गिर्जाघर थे, उनकी बनावट योरप के गिर्जाघरों जैसी नहीं थी, उनके गुम्बज तो मस्जिदों की सूचना दे रहे थे--एक विशेष प्रकार का प्राच्यत्व अभिलक्षित हो रहा था; तभी तो कुछ लोग रूस को पूर्व में शामिल करते हैं। मैं ने यही बात रूस के अनेक विशाल भवनों में भी

देखो, उनमे पश्चिमीपन इतना नहीं है जितना पूर्वीपन। गिर्जाघर अब पूजा के स्थल नहीं हैं, संग्रहालयों की कोटि मे परिवर्तित हो गए हैं किन्तु भव्य, विशाल और प्रभावप्रद हैं। उनमे अन्दर जाने से शान्ति मिलती है, मन पर कुछ प्रभाव अंकित होता है। क्रेमलिन में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उस वृहदाकार घंट को अवश्य देखता है जिसका एक भाग टूटकर उसी के पास पड़ा हुआ है। क्रेमलिन का यह दर्शनीय घट सम्राट इसी नाम से विख्यात है—वहाँ इसे 'जार कोलो-कोल' कहते हैं, जिसका अर्थ ही 'घट-सम्राट' होता है। इसका वजन लगभग २०० टन बताया गया। इसका व्यास लगभग ७ गज है और ऊँचाई ६॥ गज। इसको घट मीनार पर रखने का प्रस्ताव था, किन्तु नहीं रखा जा सका। सन् १७३७ मे जो आग लगी तो इसका एक भाग टूट गया, वह भी कोई १०० मन वजन का होगा। यह घंट एक दर्शनीय वस्तु है। और इसी के पास रखी हुई एक तोप भी। दोनों को देखने मे यात्री रुचि लेते हैं। मै थोड़ा आगे निकल गया—सामने मास्कवा नदी का गम्भीर प्रवाह था और कई एक संग्रहालयों में लम्बे क्यू लगे थे। मैं ने भी चाहा कि किसी संग्रहालय को देखूँ, परन्तु कुछ भोजन भी करना चाहता था और वार्ष्णेयजी से मिलने की उत्सुकता थी। इधर-उधर काफी दूर तक घूम कर लौटा। क्रेमलिन के कई स्थान जैसे कार्यालय, संग्रहालय बाहर से देखे। एक तरफ कुछ लोग उस ओर जा रहे थे जहाँ युवक-कांग्रेस होने वाली थी—उस ओर विशेष पास से जाना होता था, अतः मैं नहीं गया, और घूम फिर कर लौटा तो पता लगा कि श्री वार्ष्णेय अपने दो मित्रों के साथ होटल मे आये थे और अपने मिलने के नम्बर बताकर चले गए हैं। मैंने फौरन नम्बर मिलाया, वे मिल गए कहने लगे 'मिलने की तो उत्कट इच्छा है, अभी आता किन्तु एक आवश्यक कार्य है, रात को आ सकूगा, वह भी १० बजे से पहले नहीं'। पीछे पता लगा उनका 'डिफेंस' था, वे अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर चुके थे और जैसा अपने यहाँ शोध-प्रबन्ध पर वाइवा होता है वैसा उधर 'डिफेंस' होता है। जमनी में भी मैं 'डिफेंस' की बात सुन चुका था।

### अन्तर्राष्ट्रीय युवक-सम्मेलन

मैं कुछ खा पीकर पुन नगरावलोकन के लिये रवाना हो गया। काफी समय बाद जब मैं लौट रहा था तो एक रूसी सज्जन दूसरी ओर से आते दिखाई दिए। वे ठहर गए और भारतीय ढंग से नमस्कार किया, और हिन्दी में पूछा— क्या आप दीवान चमनलाल को जानते है ? मेरे 'हाँ' कहने

पर वे कहने लगे, "मैं उन्हीं का रूसी सेक्रेटरी हूँ— इन दिनों वे यहीं हैं और युवक-कांग्रेस में भाग लेने आये हैं। क्या आप युवक कांग्रेस नहीं देखेंगे ?" मैंने कहा, "देखना तो अवश्य चाहता हूँ, पर मेरे पास निमन्त्रण नहीं है"। उसने कहा, "मैं प्रबन्ध करने की चेष्टा करूँगा"। युवक-कांग्रेस में जाने के लिए काफी प्रतिबंध मालुम होता था, कई जगह पास दिखाने पड़ते थे। वह रूसी मुझे सभी रुकावटों से पार करता हुआ उस भवन तक ले गया जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय युवक-सम्मेलन होने वाला था। उद्घाटन स्वयं श्री ख़ु्श्चेव के द्वारा होने को था। वह काच का बना सभा-भवन दूर से ही दिखाई दिया, बाहर से देखने पर पता लगा कि बैठने की बड़ी विस्तृत व्यवस्था है। गेट पर पासपोर्ट, प्रमाणित हस्ताक्षर सभी देखे जा रहे थे, बहुत कड़ाई थी। यहाँ उस रूसी सज्जन को हार माननी पड़ी, उन्हें बहुत दुःख हुआ— पर मैंने उन्हें अन्दर जाने के लिये जोर देकर कहा और मैं होटल लौटा। बीच में कई पार्क मिले जो इतने आकर्षक तो नहीं थे पर काफी बड़े थे। मॉस्को के बाजार मन में उतरते जा रहे थे और मैं उस स्थान से परिचित सा होने लगा था।

भूगर्भ-यात्रा

भोजन आदि के उपरान्त मैं अपने भारतीय मित्र की प्रतीक्षा करने लगा। ९ बजे गये, परन्तु वे तब तक भी नहीं पहुँचे, कोई १० बजे आए और आते ही घूमने का प्रस्ताव किया। उनके साथ दो भारतीय सज्जन और थे— एक डॉ० रॉय, दूसरे श्री मोहनजी। इन तीनों भारतीय सज्जनों को देखकर मैं तो कृतकृत्य हो गया। इनमें से दो को तो कुछ काम था अतः आवश्यक शिष्टाचार के उपरान्त और अगले दिन प्रातः आने का वचन देकर वे तो चले गए और मेरे पास रह गए केवल श्री वार्ष्णेय। हम लोग बाहर निकले। मॉस्को की अंडर-ग्राउंड के बारे में बहुत सुन रखा था। विश्व में सर्वोत्कृष्ट भूगर्भ-रेल बताई जाती है। ट्यूब के द्वारा भ्रमण करना ही तै रहा। भाषा की कठिनाई थी ही नहीं, मेरे साथी बड़ी खूबी के साथ रूसी बोलते थे। स्लॉट में ५ कोपेक का सिक्का डाला, बार हटा और हम लोग स्वचालित सीढ़ियों से नीचे, बहुत नीचे, पहुँच गए। मैंने अनेक ट्यूब-ट्रेनों में यात्रा की है, परन्तु मॉस्को की ट्यूब-ट्रेन काफी नीचे चलने वाली प्रतीत हुई। जीने से देखने पर पता लगता था जैसे किसी नीचे के लोक में

जा रहे हों। जैसा सुना वैसा ही पाया। ट्यूब-स्टेशन भव्य था, कुछ स्टेशन तो कलाकृतियाँ थे—बड़े विशाल, बड़े आकर्षक और ट्रेनें भी अच्छी थीं। एक बार सिक्का डालकर आप नीचे उतर गए तो कितनी ही देर तक कितनी ही दूर की यात्रा उसी सिक्के के आधार पर कर सकते हैं, बाहर आने पर ही आपके सिक्के की उपयोगिता समाप्त होती है। अनुमान लगाकर बताया गया है कि पाँच कोपेक के सिक्के से १०० किलोमीटर की यात्रा की जा सकती है, यदि ट्रालीबस या ट्राम से यात्रा करना चाहें तो और भी कम भाड़ा लगता है। ट्राम में तीन कोपेक और ट्रालीबस में चार, दूरी कितनी ही हो टिकट की दर एक है। मीट्रो के प्रवतोजावोद्स्काया स्टेशन से मॉस्को के दूसरे छोर सोकोल स्टेशन तक आप कहीं भी, कितनी भी बार जाएँ, भाड़ा ५ कोपेक ही लगेगा। मीट्रो यानी भूमिगत ट्रेन में एक और लाभ है। बस से जो दूरी ६० मिनिटों में तै होती वह अण्डर ग्राउण्ड से केवल २४, २५ मिनिटों में ही। हम लोग घूमे और खूब घूमे—स्टेशनों की शोभा, उनके वृहदाकार, उनका सुष्ठ निर्माण हमारी प्रशंसा के विषय थे। जब रात काफी हो गई तो हम लोग ऊपर आये। चहल-पहल बहुत कम थी। काफी कम लोग आ जा रहे थे, प्रकाश भी बहुत धुंधला था। मेरे मित्र ने बताया मॉस्को का रात्रि-जीवन यूरोप जैसा रंगीन नहीं है, वहाँ रात के क्लब भी नहीं हैं, केवल एक साधन है— होटल, जहाँ लाइनें लगी हुई थीं। सड़क-भड़क भी बहुत कम दिखाई दे रही थी। मैं सोचने लगा— कौन सी बात ठीक है? रात्रि का सुरम्य-रंगीन जीवन या शांति का निस्तब्ध गंभीर वातावरण। दोनों ही के अपने अपने तर्क हैं, परन्तु मुझ जैसी प्रकृति वाले के लिये उस रंगीनी से यह शान्ति अधिक उत्तम प्रतीत होती थी। न जाने क्यों मुझे योरोपियन रात्रि-जीवन और नाइट क्लब कुछ रुचते नहीं। पेरिस की बात है—मैं टॉमसकुक कार्यालय के समीप ही एक होटल—शायद होटल बरगंडी—में ठहरा हुआ था। वहाँ मेरे एक परिचित थे—श्री स्पार्क। उनसे लंदन में मुलाकात हुई थी, और पेरिस आने की सूचना मिलने पर वे मेरे होटल आये थे। उनके दो प्रोग्राम थे—(१) भारतीय डिनर और (२) नाइट क्लब। डिनर तो काफी अच्छा रहा, परन्तु बहुत कीमती, मुझे पता नहीं था कि इतना पैसा लगेगा, फिर तो मुझे बहुत दुख हुआ था। नाइट क्लब के लिये उन्होंने बहुत जोर दिया—मैं तैयार नहीं हो रहा था। उनका अंतिम अकाट्य तर्क था "क्या प्रस्तर मूर्तियों के अंग-प्रत्यंग को देखकर उसकी

प्रशंसा नहीं करते ?" और लगभग ऐसा ही मेरा हाल रहा। यहाँ मॉस्को में रात्रि की रंगीनी का अभाव सुनकर मुझे दुःख नहीं हुआ। यूरोप के प्रत्येक शहर में और अब तो भारत के कुछ शहरों में भी रात्रि-टूर होते हैं। लोगों का कहना है जब तक किसी नगर के रात्रि-जीवन का पता नहीं लगाया जाए तब तक वहाँ का पूरा परिचय हो ही नहीं सकता। इस प्रकार के परिचय की मॉस्को में गुंजाइश नहीं है। अस्तु, हम लोग लौटकर 'मिन्स्क' आए। मेरे मित्र ने विदा ली और मैं अपने कमरे में दाखिल हुआ। मेरे लिए एक 'मैसेज' था कि क्या मैं भारतीय प्रेजिडेण्ट डॉ० राधाकृष्णन के स्वागत-समारोह में सम्मिलित होना स्वीकार करूँगा ? उन दिनों डॉ० राधाकृष्णन रूस की यात्रा पर थे और कई समारोहों में उनके साथ शामिल होने का अवसर मिला। मैं यह सोचने लगा था कि यह सब कैसे हुआ, तो पता लगा मेरे भारतीय मित्रों ने वी० आई० पी० के रूप में मेरे नाम का उल्लेख भारतीय दूतावास में कर दिया था। उस समय के राजदूत श्री कॉल से मेरा तनिक परिचय भी था। मैं समझ नहीं सका कि उतनी रात्रि में उस संदेश का किसको, कहाँ, क्या उत्तर दूँ। बात अगले दिन पर छोड़ी।

भारतीय मित्र

अगले दिन बहुत सुबह ही फोन आया कि उस दिन मेरे साथ डॉ० राय रहेंगे और वे ९ बजे आएँगे। ९ बजते ही वे आए। मैं ने तब तक जलपान नहीं किया था, हम लोग नीचे रेस्तराँ में आए और मैंने डॉ० रॉय को निमन्त्रित किया। वे 'नाँ नूँ' करने लगे तो मैं ने बताया कि मेरे सारे कूपन बिना उपयोग के पड़े हैं क्योंकि जितना कुछ मैंने खाया था उसमें जलपान और चाय के कूपन ही काम में आ सके थे, डिनर-लंच के तो यूँ ही पड़े हुए थे। मुझे प्रसन्नता है कि डॉ० राय के कारण कूपनों का अच्छा उपयोग हुआ, और मुझे भी कई वस्तुएँ खाने को मिलीं। 'आमिष-निरामिष' के चक्कर में मैं केवल वे ही चीजें ले सकता था, जिनके बारे में पूर्ण आश्वस्त था परन्तु रॉय महोदय ने कई निरामिष चीजें बताईं, और अच्छा जलपान हुआ। आज मुझे कई स्थान देखने थे—लालचौक के पास का स्टोर, कुछ संग्रहालय, विदेशी-भाषा-विभाग, लेनिन-पुस्तकालय और रूस का प्राच्य (भारतीय) विभाग। डॉ० रॉय ने पूरा समय लगाया, और हम लोगों ने काफी देर तक घूम कर सभी स्थान देखे। लेनिन-पुस्तकालय विश्व का बहुत बड़ा पुस्तकालय है, वहाँ की

पुस्तकों की संख्या मिलियनों में है—बड़ा विशाल सुव्यवस्थित, विदेशियों के लिये खुला हुआ और विश्व की अनेकानेक भाषाओं में विविध विद्याओं के ग्रन्थों से परिपूरित।

## भारतीय भाषा विभाग

मैं भारतीय भाषा विभाग में भी गया। बड़ी मामूली सी बिल्डिंग, छोटे कमरे, मामूली फर्निचर, राजस्थान की पुराने जमाने की चौखवाली हवेली ही समझिये। उसके इधर-उधर के रास्तों से हम चलने लगे। छोटे क्लास-रूम, बहुत ही साधारण सामान—जयपुर का हाई स्कूल याद आ रहा था, जो बहुत समय तक एक मंदिर में था। मुझे जिनसे मिलना था उनका नाम था प्रोफेसर आवसीनोव। प्रोफेसर आवसीनोव अपने कमरे में विराजमान थे। उनसे साक्षात्कार करने का समय फौरन ही उसी समय तै हो गया। यह योरुप के प्रोफेसरों से मिलने की अपेक्षा भिन्न प्रकार का था। मुझे याद है उन दिनों की, जब मैं एडिनबरा में वहाँ की ध्वनि प्रयोगशाला में कुछ काम कर रहा था। वहाँ के इन्चार्ज मेरे पास बैठ हुए थे। बड़े ही टिप टॉप, ड्रेस, कौशल प्रोफेसर। एक समाचार आया कि हॉलैंड की एक टीम उनसे मिलकर प्रयोगशाला देखना चाहती है। फौरन ही जवाब भेजा गया, 'अगले सप्ताह मंगलवार को'। उस दिन शुक्रवार था। मैं सोचने लगा बेचारी वह पार्टी ४ दिनों तक प्रतीक्षा करेगी, पार्टी ने ऐसा ही कहलवाया। शायद कोई कारण रहा होगा, प्रोफेसर महोदय मंगलवार पर ही डटे रहे। पीछे पता लगा कि वे लोग निराश हो कर लौट गए। मास्को में ऐसी कोई बात नहीं हुई। फ़ौरन ही मुझे बुला लिया गया। एक मामूली कमरे में बिना अधिक फर्निचर या शान शौकत के प्रोफेसर आँवसीनोव अपने स्थान पर प्रतिष्ठित थे। मेज पर काफी कागज, पुस्तकें आदि थीं पर कोई ऐसी स्टेशनरी नहीं थी जो उनके विशिष्ट व्यक्तित्व का प्रतिपादन करती। मेज पर दो टेलिफोन यन्त्र थे। काफी समय तक उनसे वार्तालाप चला। वे हिन्दी में गहरी अभिरुचि रखते है, हिंदी के व्याकरण तथा शब्द-भण्डार से पूरा परिचित हैं। वैसे भारत की कई अन्य भाषाएँ भी जानते हैं। व्याकरण और वर्तनी पर उनसे बातें हुई। वे इस बात को नहीं मानते कि हिन्दी में जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है। वे यह भी मानते हैं कि जो सबंध हिन्दी और अंग्रेजी का है, लगभग वही सम्बन्ध संस्कृत और रूसी का है। उनके मुख से जो कुछ मैंने सुना उसमें भारत के हिन्दी प्रवासी प्रोफेसरों की

की कोई विशेष स्तुति नहीं थी । उस वर्ष वे तामिल भाषा का प्रोफेसर बुलाने की बात सोच रहे थे । हिन्दी के कारक, अव्यय, लिंग आदि पर उनके विचार सुने, उनके शोध-विषयों का भी कुछ ज्ञान प्राप्त किया । वे हिन्दी को एक आसान भाषा मानते हैं, परन्तु उनकी यह इच्छा है कि राष्ट्रभाषा के रूप में इसका एक परिनिष्ठित रूप स्थिर होना चाहिए । राष्ट्रभाषा की समस्या पर कुछ विचार-विनिमय हुआ । प्रो० आक्सीनोव कई भाषाओं के विद्वान हैं, मैंने देखा उनका अध्ययन बहुत वैज्ञानिक था और उनके द्वारा उठाए गए प्रश्न दृढ़ आधार पर स्थित थे । विदेश के विद्वान, ऐसा प्रतीत हुआ, भाषा की वैज्ञानिकता पर अधिक ध्यान देते हैं, और उसके स्वरूप को वैज्ञानिक पद्धति से ही समझने की चेष्टा करते हैं । आस्ट्रिया के एक विद्वान हैं प्रो० फ्राउवालनर । वे अब तो अवकाश ले चुके हैं, पर जब मैं वियना पहुंचा था तो वे भारतीय विभाग के निदेशक थे, उनके सहकारी थे—डॉ० ओबरहैमर जो आजकल इस विभाग के निदेशक हैं । फ्राउवालनर का कहना था कि विदेश के लोगों को जब तक किसी भाषा का स्वरूप वैज्ञानिक पद्धति पर प्रस्तुत नहीं किया जाता तब तक वे उसको ग्रहण करने में समर्थ नहीं हो पाते, पुस्तकें अथवा मौखिक किसी भी रूप में क्यों न हो भाषा के लिए एक दृढ़ वैज्ञानिक आधार की अपेक्षा रहती है । इसीलिए यह प्रश्न काफी बार उठता देखा गया है कि किसी भाषा विशेष का एक मान्य स्वीकृत रूप हो । राजस्थानी को राष्ट्र की स्वीकृत भाषाओं में न मानने का एक कारण यह भी बताया गया था कि उसके अनेक रूप तो हैं, पर ऐसा कोई एक रूप नहीं है जिसे राजस्थानी कहा जा सके । इसी बात को लेकर हिन्दी के व्याकरण और उसके रूपों की चर्चा चली ।

भोजन के लिये हम दोनों ही एक रेस्तराँ में गए । मेरे पास काफी कूपन बाकी थे । उन कूपनों से प्रायः सभी अन्तर्राष्ट्रीय भोजनालयों में भोजन किया जा सकता था । डॉ० रॉय ने शायद ऐसे पाँच भोजनालय बताए थे । चूंकि 'मिस्क' दूर था अतः एक निकटस्थ अन्तर्राष्ट्रीय भोजनालय में प्रविष्ट हुए । एक के बाद एक कक्ष देखते चले गए, सभी सीटें भरी हुई थीं । अन्त में एक विशेष टेबिल की व्यवस्था की गई और हम लोग बैठे । क्या खाया यह तो याद नहीं पर हम-दोनों के खाने का एक लंच कूपन दिया गया, उसमें से भी कुछ सिक्के बचा कर दिये गए जिन्हें हमने वेटर को ही लौटा दिया । अन्य कई स्थान भी देखे पर प्राच्य भाषा-विभाग और

लेनिन-पुस्तकालय की स्मृति कभी भुलाई नहीं जा सकती। तीसरे पहर एक समारोह में जाना था अतः समय निश्चित कर हम लोग अपने अपने स्थानों को लौटे।

## राष्ट्रपति के साथ

अब भारतीय दूतावास द्वारा हमारे राष्ट्रपति डॉ॰ राधाकृष्णन के सम्मान में आयोजित समारोह में जाना था। काफी भारतीय आमंत्रित थे। आज मैंने अचकन, चूड़ीदार पहने। विदेश में मैं अपने साथ अपने राष्ट्रीय परिधान का एक सेट अवश्य रखता हूँ, इससे अपने मन में भी उल्लास रहता है और शायद देखने वालों को भी भला लगता है—पर इस वेशभूषा का उपयोग मैं कुछ औपचारिक अवसरों पर ही करता हूँ—जैसे म्युस्टर (जर्मनी) में औपचारिक डॉन के अवसर पर, टोकियो (जापान) में कांग्रेस के उद्घाटन समारोह पर, लंदन में महारानी एलिजाबेथ द्वारा प्रदत्त चाय के अवसर पर। निर्धारित समय पर साथी भी आ गए। अब तो इन साथियों के कारण और कई दिन मॉस्को में रहने और घूमने के कारण ऐसा लगने लगा था जैसे मैं भी 'मास्कुवाइट' हूँ, और दिनचर्या कुछ सामान्य सी होने लगी थी, यद्यपि दिल में एक खुटका अवश्य बना रहता था—इतने दिन और, और रूस से विदा। उड़ान-आरम्भ तो जर्मनी से ही हो चुका था। हम चारों होटल से बाहर निकले। एक विशाल होटल में आयोजन था। टैक्सी की प्रतीक्षा करने लगे। वहाँ पर खड़े एक पुलिस कर्मचारी ने देखा—मेरे मित्रों ने गंतव्य स्थान बताया और खड़े हो गए। पुलिस कर्मचारी के पास एक ऐसा डंडा था जैसा हमारे प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू रखते थे। एक टैक्सी को आता देखकर उसने वह डंडा सड़क पर लगा दिया—टैक्सी रुक गई। ड्राइवर और पुलिस कर्मचारी में कुछ बातें हुईं और टैक्सी बढ़ गई। हमें कहा गया "थोड़ा और ठहरें"। एक अन्य कार दिखाई दी, यह टैक्सी तो नहीं थी परन्तु खाली थी। पुलिस कर्मचारी ने फिर डंडा टेका और कार रुक गई। कुछ बातें हुईं और दरवाजा खोल दिया गया। हम लोग कार में बैठे। काफी चलने के पश्चात् हम स्थान पर पहुँचे। मैंने अपने मित्रों से टैक्सी का किराया पूछा—कहा गया यह तो टैक्सी नहीं है, ड्राइव करने वाला ही उसका मालिक है और उसने कृपाकर हमें यहाँ पहुँचा दिया है। देने के लिये केवल 'धन्यवाद' ही काफी होगा। हम लोग

धन्यवाद देकर उतरे। काफी मोटरकारें खड़ी थीं, किन्तु प्रायः सभी एक डिज़ाइन की थीं—केवल दो-एक कारें ही अन्य प्रकार की थीं। मुझे बताया गया कि मॉस्को में एक ही मॉडल की कारें देखने को मिलेंगी, कुछ इसी प्रकार की व्यवस्था आवास-ग्रहों में भी है—अधिक बड़े मकान नहीं मिलेंगे, स्वतन्त्र बंगले भी अधिक नहीं हैं, फ्लैट्स अधिक हैं जो प्रायः २, ३ कमरों के होते हैं। 'साम्य' वाद की यह झलक उसके स्वरूप को चरितार्थ करती विदित होती है।

पार्टी का आयोजन अच्छा था। खाद्य पदार्थों में भारतीय खाद्यों का प्राचुर्य था। पापड़ और पान भी मौजूद थे—कई भारतीय मिठाइयाँ थीं, समोसे और दालमोंठ भी थे। पता लगा यह सभी सामग्री भारत से ही मँगवाई गई थी। बीच में सामने तीन महामूर्तियाँ विराजमान थीं—बीच में डॉ० राधाकृष्णन, दाहिनी ओर ब्रेझनेव और बाईं ओर ख़ु्श्चेव। इन दोनों रूसी नेताओं में से एक को बुलगानिन के साथ भारत में भी देखा था, परन्तु आज तो पार्टी में इतने निकट थे—केवल टेबिल ही तो बीच में थी। हम लोग पार्टी में संलग्न थे पर उधर भी देख रहे थे कि रूसी नेता क्या, किस प्रकार खा रहे हैं। न जाने क्यों ख़ु्श्चेव को पापड़ अधिक रुचिकर लग रहे थे—वे उन्हें हाथों से मुंह में भर रहे थे, काफी हिस्सा नीचे गिर जाता था, इतने खस्ता जो थे। हम लोगों ने पार्टी का अच्छा आनन्द लिया। फिर तीनों नेताओं के भाषण हुए—उनके अनुवाद किए गए और उसके पश्चात् इस त्रिमूर्ति का वह दर्शन किया जो जीवन में दुर्लभ रहेगा। डॉ० राधाकृष्णन ने अपने दोनों हाथ फैलाकर रूसी नेताओं के गले में डाले हुए थे, रूसी नेताओं के एक एक हाथ डॉ० राधाकृष्णन का आलिंगन कर रहे थे। राधाकृष्णन काफी लम्बे लग रहे थे और ख़ु्श्चेव काफी ठिगने। बड़ा सौहार्दपूर्ण वातावरण था। त्रिमूर्ति का यह पोज हृदय-पटल पर उसी प्रकार स्थित है। न जाने कितने फोटो लिए गए और अगले दिन, अखबारों में मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित हुए। फिर पान-चर्वण हुआ। रूसी नेताओं ने भी चेष्टा की। ख़ु्श्चेव साहब का तो पूरा मुंह ही भर गया। यह तो मुझे ध्यान नहीं कि पान खाया या नहीं पर इतना दिखाई दिया कि एक रूमाल से, जो लालिमा धारण करता जा रहा था, ख़ु्श्चेव महोदय अपना मुंह पोंछ रहे थे। उसके पश्चात् कुछ संगीत का कार्यक्रम था—शुद्ध भारतीय

संगीत, जो भारतीय महिलाओं द्वारा ही प्रस्तुत किया गया था। उसके पश्चात 'रूसी-हिन्दी भाई भाई' की गूंज से सारा हॉल निनादित हो गया, परन्तु उसमें सुन पड़ा सोवियत प्रधान मन्त्री का एक अलग ही स्वर जो प्रतिध्वनि कर रहा था—"मिलाई-मिलाई" फिर तो 'रूसी हिन्दी-भाई भाई, मिलाई-मिलाई' कई बार गुंजरित हुआ। अनेक भारतीयों से यहाँ परिचय हुआ, कई के पते लिये, कई को दिए और बड़े प्रेममय वातावरण में आयोजन समाप्त हुआ। रास्ता काफी लम्बा था, परन्तु हमारे पास समय भी काफी था अतः पैदल चलने का ही निर्णय किया। मार्ग में एक प्रदर्शनी लग रही थी, उसको देखा, कुछ देर एक उद्यान में बैठे—वहाँ बड़ा सुन्दर विद्युत-प्रकाश था। न जाने कितने विषयों पर वार्तालाप हुआ। भारत-रूस के अनेक प्रसंग थे, भारतीय शिक्षा-व्यवस्था की समीक्षा थी, रूसी-भारतीय सामाजिक गतिविधि का भी विश्लेषण था। कई घंटों बतलाने के उपरान्त मैं अपने स्थान पर पहुँचा। मुझे 'मिरक' में छोड़ कर मेरे मित्र भी अपने अपने स्थानों को रवाना हो गए। अब उनके पास समय की कमी थी, मैं भी परिचित हो चला था अतः जब उन्होंने अगले दिन उपस्थित होने में असमर्थता दिखाई तो मैंने झट से स्वीकार कर लिया। उसके अगले दिन तो हम तीनों पूरे दिन साथ रहते को थे ही। भोजन भी सभी को साथ करना था, क्योंकि मैं उन कूपनों को बचाकर क्या करता।

अगले दिन मैं प्रातः लेनिन की समाधि देखने गया। कई दिनों पूर्व मैं देख चुका था कि दर्शनार्थियों की कितनी लम्बी क्यू थी। मन में कई प्रकार के भाव आ रहे थे। दर्शन का समय भी शायद ११ से २ तक था परन्तु क्यू तो काफी पहले लग जाती थी। मैं लालचौक में प्रविष्ट हुआ। लम्बी कतार देखी, कुछ घबरा सा गया। मैं आगे बढ़ा, और आगे। इतने में एक राजकीय कर्मचारी दौड़ता हुआ मेरी ओर आया। मैंने समझा मैं गलत रास्ते से पहुँच रहा हूँ, शायद रोकना चाहता है। मैं वहीं ठहर गया—वह मेरे पास आया और कुछ कहने लगा। मैं रूसी क्या समझता उसकी ओर देखने लगा, वह समझ गया कि मैं रूसी नहीं जानता। उसने मेरा स्वागत सा करते हुए अपने पीछे आने का इशारा किया। मैं उसके पीछे चला और उसने मुझे दर्शनार्थियों की क्यू में दूसरे या तीसरे नम्बर पर खड़ा कर दिया। मुझे बहुत प्रसन्नता हुई, रूसी कर्मचारी की विदेशियों (विशेषकर भारतीयों) के

प्रति सद्भावना देखकर संतोष ही नहीं हुआ बल्कि वहाँ के कर्मचारियों के प्रति मन श्रद्धा से भर गया। लेनिन की समाधि बड़ी सुन्दर बनी हुई है, वातावरण बहुत गम्भीर रहता है, किसी प्रकार का शब्द नहीं होता—कहीं निद्रावस्था में व्याघात उत्पन्न नहीं हो जाए। इसकी छत पर ही रूसी तथा विदेशी नेता खड़े होकर लालचौक के विभिन्न प्रदर्शन देखते हैं। सन् १९६७ में जो स्वर्ण-जयन्ती मनाई गई उसमें भारतीय नेता इसी स्थान पर खड़े होकर समारोह देखते थे। स्मारक के द्वार पर दो संतरी उल्टी बन्दूकें लिए एकदम पत्थर की मूर्ति जैसे खड़े थे—किसी प्रकार की गतिशीलता लक्षित नहीं होती थी। अन्दर भी देखा कि चारों कोनों पर चार सन्तरी उसी प्रकार प्रस्तरवत् खड़े हैं। बताया गया उन्हें प्रति घंटे बदला जाता है। मेरे सामने भी बदलने की क्रिया हुई—कितनी यन्त्रवत्, शान्त, गम्भीर और प्रभावोत्पादक। लेनिन महोदय का पार्थिव शरीर एक शीशे के केस में रखा हुआ है। शरीर कुछ इतना लम्बा-चौड़ा नहीं है परन्तु मुखाकृति उतनी ही प्रभावशाली है जितनी जीवन काल में रही होगी। मुझे आश्चर्य हुआ इतना प्रभावशाली व्यक्ति किन्तु डीलडौल कुछ विशाल नहीं; हाँ मुखमण्डल का तेज अब भी चकित करता था, मुख-मुद्रा भी प्रभावशाली थी। इस व्यक्ति ने रूसी जन-जीवन में कितना परिवर्तन किया इसका विचार आते ही मन श्रद्धा से झुक जाता है। इतना ही नहीं इनके व्यक्तित्व और विचारधारा की विश्व को भी एक देन है जो अपना स्वतन्त्र अस्तित्व उद्घोषित करती रही है। शव की एक परिक्रमा की जाती है जो बाँई ओर से शुरू होती है। धीरे-धीरे चलिये और उस विशिष्ट व्यक्तित्व के दर्शन से प्रेरणा प्राप्त कीजिए। मैं कुछ और भी धीरे-धीरे चला—आगे का फासला कुछ बढ़ गया, अतः कदम बढ़ाए और दूसरे दरवाजे से बाहर आया। दर्शकों की पंक्ति निरन्तर चलती रही कुछ देर मैंने खड़े होकर और देखा। न जाने कितने प्रकार के व्यथित दर्शनों को लालायित खड़े थे। दर्शन करने वालों का तांता कभी टूटता ही नहीं, अविरल गति से बढ़ता ही रहता है। लेनिन! महान् लेनिन!! विश्व का मान्य विचारक और विशाल सोवियत-संघ का जनक! वह पुण्यमय क्षण जीवन भर प्रेरणा प्रदान करेगा। राजघाट पर जो भाव गाँधीजी की समाधि देखने पर आते हैं प्रायः उन्हीं भावों की स्फुरणा लेनिन-समाधि को देख कर भी होती है। अब भी जब कभी चित्रों में समाधि का दर्शन हो जाता है

तो यह पवित्र स्मृति मन को प्रकाशित करती प्रतीत होती है। कितना गौरव-पूर्ण व्यक्तित्व है रूस के इस महान क्रान्तिकारी दार्शनिक का !

बॉलशोइ

मैं बहुत समय से सुनता आया था कि मॉस्को जाने पर बॉलशोइ थियेटर देखना एक आवश्यक कार्यक्रम होना चाहिये। मैंने अपने मॉस्को पहुँचने के दूसरे दिन ही होटल में पूछा कि क्या वे बॉलशोइ का बैले देखने के लिए एक टिकिट की व्यवस्था कर सकते हैं। उत्तर बहुत निराशाजनक था—पता लगा कई सप्ताह पहले आरक्षण हो जाता है। मुझे स्ट्रेटफर्ड अपौन एवॉन के शेक्सपियर थियेटर की याद आ गई। वहाँ भी कुछ ऐसा ही होता है। कई सप्ताह पहले आपको चेष्टा करनी चाहिए। पता लगा कुछ स्थान अनारक्षित भी रहते हैं और उनके लिए लोग टिकिट मिलने के स्थान पर रात में ही जाकर सो जाते हैं ताकि क्यू में उनका नंबर पहले आ जाए। क्यू में इस प्रकार के सोने वालों का दृश्य कभी कभी बम्बई के टिकिट घरों में भी देखा जा सकता है। मुझे क्यू में लगना सबसे बुरा मालूम होता है। मेरा सौभाग्य था कि बॉलशोइ थियेटर के देखने में मुझे कोई निराशा नहीं हुई, जब मैं समाधि देख कर लौटा तो स्वागत कक्ष में मुझे मेरा टिकिट मिल गया—उसी दिन की शाम को आरक्षण हुआ था।

कहा जाता है बॉलशोइ विश्व का सब से बड़ा बैले थियेटर है। ऐसा नहीं कि केवल यहाँ यही एक थियेटर हो, लगभग ३०००० मॉस्को निवासी प्रतिदिन थियेटर देखते हैं। सोमवार को छुट्टी रहती है। बॉलशोइ और फिलियल बैल तथा ऑपेरा के स्थान हैं, इनके अतिरिक्त कई सैटायर थियेटर कठपुतली थियेटर हैं, जिप्सी थियेटर हैं, और न जाने कितने अन्य। पर इन सब में बॉलशोइ का स्थान प्रमुख है। एक दिन पहले ही जाकर मैं स्थान देख आया था। थियेटर का बाहर से दर्शन किया था। अब अन्दर जाकर बैले देखना था। जब मैंने अपने मित्रों से बॉलशोइ बैले का जिकर किया तो वे कहने लगे 'आप अधिक समय तक वहाँ नहीं बैठ सकेंगे—बोर हो जाएंगे, शीघ्र ही लौटेंगे—क्योंकि कुछ समझ में नहीं आएगा—हाँ थियेटर की सजावट, व्यवस्था आदि सभी आकर्षक लगेंगे'। मन में इसी धारणा को लेकर मैं थियेटर के लिए रवाना हुआ। सुन्दर व्यवस्था थी, ओवरकोट बाहर छोड़ा और अपने स्थान पर आसीन हुआ। वहाँ ऐसा प्रतीत होने लगा जैसे भाषा की

अनभिज्ञता कोई विशेष अर्थ नहीं रखती, और जहाँ तक 'बोर' होने का प्रश्न है मैं शुरू से अन्त तक ऐसी अवस्था में बैठा रहा जैसे कोई योगी साधना में लीन होता हो। कई अंक पलटे, और मेरा मन अधिक अधिक लगने लगा। वह विशाल रंगमंच, भरपूर व्यवस्था, साज-सज्जा, अभिनेताओं का जमघट, उनकी उपयुक्त पोशाकें, भवन, प्राकृतिक दृश्य आदि सभी आकर्षक थे। 'जादू कर दिया गया हो' ऐसी मेरी अवस्था हुई। जितने भी दर्शक थे वे बड़े मनोयोग से देखने में तल्लीन थे, ऐसा विदित होता था कि साधारणीकरण की क्रिया बड़ी सार्थकता के साथ प्रतिपादित हो रही थी। दर्शक और अभिनेता दोनों एक दूसरे में समा गए थे। थियेटर को देखकर यह बात सामने आने लगी कि वास्तव में यह एक अति विशाल बैले-थियेटर है। मैंने लन्दन, पेरिस, रोम, टोकियो आदि के थियेटर देखे हैं पर मेरी अभी तक कुछ ऐसी ही धारणा है कि लाल मखमल और जरीन से सुसज्जित अनेक मंजिलों का यह रूसी थियेटर सबसे बड़ा है। इतने बड़े स्टेज पर इतनी साज-सज्जा, दृश्यों को इतनी वास्तविकता के साथ दिखाना, भवनों को वास्तविक रूप में प्रदर्शित करना, कई मंजिलों की इमारतें, घोड़ों, तोपों आदि का प्रस्तुत करना, आग के भीषण दृश्य और उसकी ऊँची लपटें तथा धुंआ, पानी और उसमें चलती नावें, सैकड़ों व्यक्तियों की रंगमंच पर उपस्थिति, भव्य आर्केस्ट्रा सभी कुछ तो आकर्षक था। मैं मन ही मन प्रसन्न होता और रूसी कलाकारों की प्रशंसा करता होटल लौटा। अगले दिन अपने मित्रों को मैंने बहुत अच्छी रिपोर्ट दी। कहा गया इसकी स्थापना लगभग २०० वर्ष पूर्व सन् १७७६ मे हुई थी और तब से इस आँपरा बैले की गायक और नृत्य-मण्डली ने एक सुष्ठ परंपरा रखी है। विभिन्न देशों मे बॉलशोइ द्वारा दिए गए प्रदर्शन इसकी सफलता को द्विगुणित कर देते हैं।

मॉस्को में कई अन्य स्थान देखने थे। हम लोगों ने एक टैक्सी की ताकि उन दूरस्थ स्थानों को एक साथ देख सकें। टैक्सी साधारण थी, जर्मनी, स्वीडेन आदि की टैक्सियाँ बहुत शानदार होती हैं, रूस की टैक्सी बिल्कुल साधारण थी। पता लगा वहाँ का टैक्सी का किराया भी अपेक्षाकृत कम है। हमने काफी स्थान देखे—बच्चों की शालाएँ, स्विमिंग पूल, स्काईंग के स्थान, लम्बी मीनारों युक्त ऊँची इमारतें, वहाँ के ८,१० स्काइस्क्रेपर, परन्तु जिस स्थान ने हमें सबसे अधिक प्रभावित किया वह था राजकीय विश्वविद्यालय, जो लेनिन हिल पर स्थित है। यह भवन बहुत ही शानदार है—होस्टल, पुस्त-

कालय, अध्ययन कक्ष, स्टोर सभी बातों की सुविधा उस एक ही भवन में है जिसका विस्तार बहुत अधिक है। वैसे तो लेनिन पहाड़ी ही ऊँची है पर उस पर बना मुख्य भवन भी ३४ मंजिलों का है, अतः बहुत ऊँचा है—कहा जाता है विश्व के सभी विश्वविद्यालयों में ऊँचाई की दृष्टि से इसका स्थान अग्रणी है। दूर से तो ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह विश्वविद्यालय पुष्पों और हरीतिमा से उभर कर जन्म ले रहा हो पर पास आने पर पता लगा यह २४० मीटर से भी अधिक ऊँचा है। यहाँ ३०–३५ हजार विद्यार्थी पढ़ते हैं और ये भी विभिन्न राष्ट्रों के। कहा गया है कि यहाँ ७० राष्ट्रों के विद्यार्थी एक साथ पढ़ते हैं। इस विश्वविद्यालय में १२ संकाय हैं और सभी उच्च कोटि के विद्वानों से युक्त हैं। होटल के कमरे की खिड़की के द्वारा जो विशालता प्रथम दिन दृष्टिगोचर हुई थी उसका साक्षात्कार कर मन को बहुत प्रसन्नता हुई, और हमने काफी समय लगाकर इस विश्व विख्यात शिक्षा-संस्थान को देखा।

स्थायी प्रदर्शनी

जिन दिनों मैं वहाँ था मौसम बहुत अच्छा था और कहा गया कि राष्ट्रीय छुट्टी के दिनों में आतिशबाजी भी खूब चलती है। राष्ट्रपति के सम्मान में भी एक इसी प्रकार का आयोजन था, किन्तु मैं वहाँ नहीं पहुँच सका, पीछे सुना आतिशबाजी का कार्यक्रम बहुत सुन्दर रहा। उन दिनों वहाँ अन्तरिक्ष यात्रा की बहुत चर्चा थी। जब मैं मॉस्को की स्थायी औद्योगिक प्रदर्शनी देखने गया तो वहाँ एक बहुत बड़ा कक्ष अन्तरिक्ष यात्रा से सम्बन्धित था। यूरी गागारिन (अब इन्हें स्वर्गीय कहते कितना दुख होता है) की वेशभूषा तथा काम में आने वाली सारी वस्तुएँ प्रदर्शित की जा रही थीं। प्रदर्शनी से बाहर एक स्मारक निर्मित हो रहा था, जो अब निर्मित हो गया है और मैंने उसके पूरे होने के समाचार ही नहीं चित्र भी देखे हैं। तब उसका काम चल रहा था। यह प्रदर्शनी बहुत ही दर्शनीय है और अपना नाम सार्थक करती है। स्थान-स्थान पर बहुत आकर्षक फव्वारे हैं। बीच में तो इन फव्वारों का दृश्य इतना चित्ताकर्षक है कि हम लोगों ने उसकी पृष्ठ भूमि को लेकर कई चित्र लिए। बड़ा रम्य स्थल था, उसको देखकर वृन्दावन गार्डन की झलक सामने आ गई, परन्तु ये फव्वारे भी अपना स्थान रखते हैं और छोटे-छोटे रूप में तो कई स्थानों पर हैं। मुझे याद है हम लोगों ने यहाँ आइस-क्रीम ली, बहुत कम

दामों में इतनी आइस-क्रीम आई कि हम लोगों से खाते नहीं बनी, काफी समय में विश्राम दे देकर—उसको खाया गया। न जाने कैसे उस आइस-क्रीम से मेरे एक दाँत में दर्द हो गया जो भारत में आने पर भी १५-२० दिन तक रहा और प्रदर्शनी की याद को ताजा करता रहा। रूस ने उद्योग के क्षेत्र में कितनी प्रगति की है—वह बड़े विस्तार और सुन्दर मॉडलों के रूप में दिखाई गई थी। प्रत्येक कक्ष में लेनिन की मूर्ति दिखाई देती थी। इस प्रदर्शनी का द्वार भी बहुत आकर्षक था और सभी कक्षों की व्यवस्था और चयन बड़ी सावधानी और कलात्मकता के साथ किए गए थे। जहाजरानी, हवाई जहाज, खनिज रेल, कृषि, सिंचाई, विद्युत आदि अनेक उद्योगों के अलग अलग कक्ष थे और बहुत सी बातें चार्टों के द्वारा भी प्रस्तुत की गई थीं। शायद वहाँ भी रात्रि को आतिशबाजी का कार्यक्रम था परन्तु हम इसे भी नहीं देख सके। इस प्रदर्शनी को देखकर रूस की उद्योगावस्था का ज्ञान तो होता ही है परन्तु साथ ही प्रेरणा भी बहुत मिलती है। हमें ऐसा लग रहा था जैसे हम किसी अन्य लोक में पहुँच गए हों और वहाँ विभिन्न स्थलों की यात्रा की जा रही हो। उधर फव्वारे कमाल दिखा रहे थे। वैसे फव्वारों को निराली दुनियाँ तो मैंने टोकियो में देखी जहाँ का 'वाटर-बैले' शायद अपनी अद्भुत छटा से सब का मन मोहित कर लेता है। यों तो प्रदर्शनी को देखने में बहुत समय लगता है परन्तु हम लोग अपेक्षाकृत कम ही समय में लौटे।

पुश्किन स्क्वायर में पुश्किन की विशाल मूर्ति देखी। पुश्किन रूस के महान् कवि हैं। यहीं से इज्वेस्तिया समाचार-पत्र के कार्यालय तथा रोसिया नामक सुन्दर सिनेमा घर दिखाई देता है। मूर्ति को देखने से रूस के साहित्य की ओर स्वतः मन खिंच जाता है। इधर १९१७ से १९६७ तक जो साहित्य प्रकाशित हुआ है वह काफी मूल्यवान है परन्तु इससे पहले भी काफी काम हुआ है। वैसे भी रूस एक विशाल देश है—अनेक भाषाएँ इसे समृद्ध करती हैं और सभी बड़ी भाषाओं का अपना साहित्य है। इसके साथ रूस में अनुवाद का कार्य भी बहुत मात्रा में होता है। भाषा-अनुवाद का विभाग भी अलग है जिसमें भाषा-विशेष के प्रमुख विद्वान कार्य करते हैं। कई विद्वानों से मेरा परिचय हुआ। अनुवाद की व्यवस्था कुछ अजीब सी है। एक उदाहरण प्रस्तुत है—मेरे पी.एच.डी. के निर्देशक डॉ. सोमनाथ गुप्त ने नाटक पर एक

किताब लिखी है जो उनकी पी एच डी का थीसिस है। पता लगा उसका रूसी भाषा मे अनुवाद हो गया है परन्तु मूल लेखक को कोई सूचना नहीं दी गई। उनके लिए भेंट स्वरूप कुछ दिया जा सकता है, परन्तु रूस आने पर ही उन्हें मिल सकता है। रूस 'कॉपी राइट' संस्था का सदस्य नहीं है और किसी भी पुस्तक का अनुवाद या प्रकाशन कर सकता है। कहा जाता है कि जैसे ही कोई सुन्दर पुस्तक प्रकाशित होती है उसका अनुवाद कर दिया जाता है और साहित्य की अभिवृद्धि का यह कार्य निरन्तर चलता रहता है। रूस में ६ भाषाएँ प्रमुख मालूम होती हैं—रूसी, बाइलो रूसी, उक्रेनियन, आर्मेनियन, जोर्जियन तथा लिथुआनियन। अन्य प्रसिद्ध भाषाएँ भी हैं जैसे—ग्रास्थिगे, वस्योर, बुरयत, काराकल्पक, खकस आदि। इन सभी भाषाओं में अनुवाद का कार्य चलता है। भारत की प्रायः सभी प्रमुख भाषाओं के अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ अनूदित होकर प्रकाशित हो चुके हैं। अग्रेजी तथा अमरीकी किताबों का प्रकाशन तो और भी अधिक है।

मॉस्को में स्थान स्थान पर ऐसी मूर्तियाँ और स्मारक हैं जिनसे मजदूरों का गौरव लक्षित होता है। स्त्री पुरुष का एक ऐसा ही जोड़ा रूस की औद्योगिक और आर्थिक प्रदर्शनी के अन्दर देखा। हमें बताया गया कि सन् १९३७ में जो 'विश्व प्रदर्शनी' पेरिस मे आयोजित की गई थी उसमें वीरामुखीना नाम के कलाकार ने रूसी मण्डप के लिये यह मूर्ति निर्मित की थी। यह इस बात का प्रमाण है कि रूस के मजदूर और कृषक चिरन्तन मैत्री मे आबद्ध है। मार्क्स प्रोस्पेक्ट मे भी एक भव्य विशाल मूर्ति दिखाई दी। यह संगमरमर की बनी कार्ल मार्क्स की मूर्ति है। साम्यवाद का वैज्ञानिक स्वरूप प्रतिष्ठित करने वाले की यह प्रतिमा मॉस्को के प्रमुख चौराहे पर है। देखने की तो कई अन्य वस्तुएँ थीं, स्थान थे, संस्थान थे, संग्रहालय थे (शस्त्र-संग्रहालय, इतिहास-संग्रहालय, प्राच्य संग्रहालय और न जाने कितने संग्रहालय) परन्तु समय की अपनी सीमा थी। बहुत से स्थान तो इधर-उधर घूम कर ही देखे—जैसे मॉस्को का १०० वर्ष पुराना चिड़ियाघर जहाँ केवल दर्शनमात्र ही नहीं होता, शोध कार्य भी चलता है, जरजिंस्की चौक जो मॉस्को के बीच में स्थित है और जहाँ लेनिन के एक प्रमुख सहयोगी जरजिंस्की की मूर्ति भी है, इसी के पास एक ऐसा बहुत बड़ा स्टोर भी है जो केवल बच्चों की दुनियाँ से ही सीमित हैं, अन्य अनेक स्थान भी। वास्तव में मॉस्को एक ऐसा स्थान है

जिसके देखने के लिए बहुत समय की आवश्यकता है। मुझे याद है लन्दन में मैं लगभग १ सत्र रहा। प्रत्येक रविवार को (कुछ को छोड़कर जब मैं लंदन के बाहर रहता था) किसी एक स्थान को देखने का प्रोग्राम रखता था परन्तु पूरा देखने में असमर्थ ही रहा। मॉस्को में तो कुछ ही दिन रहा और यह भी मेरे भारतीय मित्रों की महरबानी थी कि इतना कुछ देख सका।

क्या देखा ?

मॉस्को एक विशाल नगर है, इसकी आबादी लगभग ६५ लाख बताई गई थी—वैसे टोकियो से तो यह आधे से थोड़ा ही अधिक है। कहा जाता है यहां ११ लाख परिवारों के लिए फ्लैट्स की व्यवस्था है। यहाँ का सबसे लम्बा राजमार्ग वाशविस्कोह कोई ६ मील लम्बा है। लालचौक सबसे बड़ा चौक है। लगभग ७५००० स्क्वायर किलोमीटर। मॉस्को से १५०० रेलगाड़ियाँ आती-जाती हैं। यहाँ पर सोवियत विज्ञान-परिषद है, जो अनुसंधान और प्रयोगशाला की दृष्टि से विश्व का प्रमुख स्थान है। मॉस्को का रेडियो स्टेशन १०० से अधिक भाषाओं में प्रसारण करता है, जिनमें ४० विदेशी भाषाएँ हैं। मॉस्को रेडियो का हिन्दी-प्रोग्राम बड़ा आकर्षक रहता है। क्रेमलिन के मीनारों में जो नग जड़े हुए हैं वे रात्रि को जगमगा उठते हैं और यद्यपि उनका वजन २०, २५ मन है परन्तु उनमें ऐसी युक्ति की गई है कि वे हवा के रुख से बदल जाते हैं। मॉस्को छोड़ने का समय निकट आ रहा था। मिंस्क का प्रशस्त राजमार्ग, गोर्की-स्ट्रीट जिनसे मैं इतना परिचित हो चला था, अब छूटने को थे। लाल-चौक तो न जाने कितनी बार गया, क्योंकि जैसे कहा गया है 'सारे मार्ग रोम को जाते हैं' उसी प्रकार ऐसा प्रतीत होने लगा लालचौक ही सभी विस्तृत राजमार्गों का केन्द्र था। मैंने मास्कुवा नदी का निरीक्षण किया, लेनिन पहाड़ी पर खड़े होकर नगर का दृश्य देखा, चौड़े राजमार्गों में चलती हुई जनता को देखा, विभागीय स्टोर देखे, पुलिस की कार्य-दक्षता देखी, अन्त-र्राष्ट्रीय होटलों में से कई को देखा, संगमरमर के बने विशाल भूगर्भ-रेलवे-स्टेशन देखे, लेनिन की समाधि देखी, कवियों और दार्शनिकों की प्रतिमाएँ देखीं, रूस की आर्थिक प्रगति का चित्र सामने आया, गिर्जे देखे, महल देखे, जनसमाज देखा, सार्वजनिक समारोह देखे, विश्वविद्यालय देखे, पुस्तकालयों में घूमा, अपने राजदूत का कार्यालय भी देखा, टैक्सी से सफर किया, सिटी

बसों में भी बैठा, लम्बी-लम्बी गलियों में अन्दर जाकर रूसी जीवन का दर्शन किया और लौह पर्दे वाली बात असत्य पाई। पर एक बात अवश्य थी। जब मैंने लेनिनग्राड जाना चाहा तो मुझे पता लगा कि दूसरी अनुमति लेनी पड़ेगी। मॉस्को से २०-२५ किलोमीटर तक ही मैं घूम फिर सकता था। अन्य नगरों के लिये अन्य अनुमति पत्र आवश्यक थे। परन्तु इतने दिनों में रूस का जितना कुछ देखा वह भी एक प्रथम दर्शनार्थी के लिए यथेष्ट था।

मैंने जो देखा वह आज का मॉस्को था। वैसे एक शताब्दी पूर्व रूसी कवि लरमोंटोव ने कहा था—"जिसने मॉस्को को एक साथ नहीं देखा और उस नगर की शोभा तथा विस्तृत दृश्य को नहीं सराहा उसको मॉस्को का पूरा ज्ञान नहीं हो सकता।' मैंने तो मॉस्को को लेनिन पहाड़ी से देखा था फिर क्यों न मॉस्को का सुन्दर चित्र मेरे सम्मुख होता। मॉस्को का जो परिवर्तन ५० वर्षों में हुआ वह कल्पनातीत है। काफी पहले ८ वीं शताब्दी में यहां के निवासी अनेक जुल्मों के शिकार थे, उधर तातारी और पोल सरदार इसे नष्ट करने पर तुले हुए थे, १८१२ में नेपोलियन की सेना ने इसे ध्वस्त किया। पर यह बार बार बना; ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह प्रत्येक बार नव जीवन धारण करता रहा। काफी समय तक रूस की राजधानी सेंट पीटसबर्ग रही परन्तु १९१८ में सोवियत सरकार के अध्यक्ष लेनिन ने मॉस्को को पुन चुना। तब से यह परिवर्तित होता रहा है और मैं तो समझता हूँ कि मेरे आने के पश्चात इन ३, ४ वर्षों में भी काफी परिवर्तन हुआ होगा। परिवर्तन का क्रम जारी है और मॉस्को की प्रगति अबाध गति से चल रही है।

### मॉस्को से विदा

जिस दिन मैं रूस से विदा लेने को था उसी दिन हमारे राष्ट्रपति भी आयर्लैंड जाने वाले थे। टिकिट पर दिये गए समय के अनुसार हमारा विमान ११ बजे वैनकुआ नं० १ से उड़ने का था, परन्तु इन्टूरिस्ट तथा एयर इण्डिया दोनों के कार्यालयों से लिखित तथा टैलिफोनिक सूचनाएँ मिलीं कि जहाज ११ बजे के स्थान पर १ बजे उड़ान लेगा और वह भी वैनकुआ नं० १ से नहीं, नं० २ से। यह वही हवाई अड्डा था जिससे राष्ट्रपति उड़ान लेने वाले थे। समाचार से प्रसन्नता हुई क्योंकि एक तो मॉस्को में रहने का समय २ घंटा बढ़

गया जिससे मैं सारा काम इतमीनान और व्यवस्था के साथ कर सकता था; दूसरा यह कि मुझे यह देखने का अवसर मिला कि रूसी जनता और सरकार हमारे राष्ट्रपति को किस प्रकार विदा देते हैं। एक बार फिर इन्टूरिस्ट ने सूचित किया कि विमान एक बजे ही उड़ेगा और उनकी गाड़ी मुझे हवाई अड्डे तक ले जाने के लिए ११॥ बजे आएगी। हमारे तीनों भारतीय मित्रों को तो पहला टाइम ही मालूम था, अतः वे ६ बजे ही आ गए थे। हम तीनों ने बड़े इतमीनान के साथ 'मिस्क' में ही जलपान किया, पर वे कुपन समाप्त नहीं हो सके। अच्छी तरह से तैयार हुआ। स्वागत-कक्ष के लोगों से विदा ली, सामान नीचे मंगवाया। ठीक समय पर हम लोग चारों ही रवाना हुए। काफी लम्बे चल कर जब हम लोग सीधी सड़क पर पहुँचे तो ऐसा पता लगा कि रास्ता बंद कर दिया गया है। सड़क के दोनों ओर रूसी तथा भारतीय झंडों को लिये हुए रूसी जनता की घनी पंक्तियाँ थीं। एक सेकिंड की मार्ग की अवरुद्धता ने हमें कुछ चिंतित किया। इतने में ही एक ट्रैफिक पुलिस के कर्मचारी ने हमारी गाड़ी देखी, और भीड़ में बड़े अदब से रास्ता दिखा कर सीधी सड़क पर कर दिया। हम लोग तेजी से जाने लगे। इस दिन भी मित्रों के सुझाव पर मैं भारतीय वेशभूषा में था। क्रेमलिन से लेकर हवाई अड्डे तक पंक्तियाँ लगी हुई थीं—शायद उस दिन शिक्षण-संस्थाएँ बंद कर दी गई थीं, क्योंकि हवाईअड्डे पर बच्चों का बहुत बड़ा समुदाय था। रास्ते में भी काफी बच्चे थे। मुझे यह भी बताया गया कि कुछ कारखानों में भी राष्ट्रपति को विदाई देने हेतु छुट्टी कर दी गई है। हमारी गाड़ी इस प्रमुख राजमार्ग पर चली जा रही थी। इससे थोड़े ही पीछे राष्ट्रपति का विदाई जुलूस आ रहा था—मैं बड़े गर्व का अनुभव करने लगा—इतनी विशाल, भावभीनी विदाई। किसी भी देश में मुझे ऐसा अवसर नहीं मिला, परन्तु मॉस्को ने यह अवसर भी दिया, और उसके पश्चात् जब तोपों की गड़गड़ाहट में हमारा वायुयान भी उड़ा तो मैं एक विचित्र दुनियाँ में ही पहुँच गया।

औपचारिकता में मुझे कुछ विलम्ब तो नहीं लगा, परन्तु एक विचित्र बात हुई। जब तौल वगैरा लग रही थीं तो एक चुंगी अधिकारी ने मुझसे पूछा कि मेरे पास रूसी रुपया कितना था। मैंने अपना बटुआ और पासपोर्ट देखे, १८ रूबल तथा कुछ कोपेक थे। उन्होंने १८ रूबल ले लिए, और कहा कि रूसी सिक्का बाहर नहीं जा सकता, और मुझे १८ रूबल की रसीद देदी। मैंने सहज

स्वभाव सोचा, 'भारत लौटने पर रूसी दूतावास मे यह द्रव्य ले लूगा', शायद मेरे मित्रों ने भी ऐसा ही सुझाया। पर भारत आने पर विचित्र स्थिति हुई। जब मैंने १८ रूबल का भारतीय द्रव्य देने की बात लिखी तो उत्तर मिला कि इसका भुगतान तो रूस मे ही हो सकता है, भारत में नहीं। क्या मैं इन १८ रूबलों का उपयोग करने के लिए पुन रूस आऊँगा ?—तब तो इनका मूल्य बहुत अधिक हो जाएगा। बात कुछ समझ मे नहीं आई, परन्तु नियम कुछ इसी प्रकार का था—शायद होटल की बैंक में बदल लेता तो मूल मुद्रा मिल जाती। खैर ! कस्टम से कार्यवाही पूरी होने पर मैं तो अदर आ गया, और मेरे मित्र बाहर ही रहे। विदा होने का समय तो दुखद होता ही है। भरे हुए दिल से इन कतिपय दिवसीय मित्रों से विदा ली; ये लोग भी कुछ महीनों पश्चात् रूस मे अपना काम पूरा कर स्वदेश लौटने वाले थे। इसके साथ ही मॉस्को से विदा लेने का समय भी आ रहा था, परन्तु अब तो मुझे सोवियत जनता और नेताओं द्वारा अपने राष्ट्रपति की विदा देखनी थी। मुझे वो भाईयो मे एक बार पुन खड़े होने का अवसर मिला। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के अध्यक्ष को विदा दे रहा था। बहुत बड़ी सख्या में विद्यार्थी उपस्थित थे, उनके हाथों मे दोनों देशों की पताकाएँ थीं—रूसी भाषा मे कुछ बोलते थे, शायद 'राधाकृष्णन अमर रहें ! रूसी भारती मैत्री अमर रहे !' राष्ट्रपति अपनी उसी सामान्य वेशभूषा मे थे, जिसमें उन्हें अनेक बार देखा है, सुना है। उन दिनों मैं काशी विश्वविद्यालय में था। डा राधाकृष्णन के गीता-भाषण होते थे। कलकत्ता और बनारस दोनो स्थानों से सबधित होने के कारण उनका सप्ताह दोनों विश्वविद्यालयों में बँटा रहता था। भाषण की पटुता, और वक्तृत्व का कौशल मेरे हृदय में प्रतिष्ठित हो चुके थे। कई बार राष्ट्रपति के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ—उनके भाषण सुने। जोधपुर विश्वविद्यालय के उद्घाटन के अवसर पर वे यहाँ भी पधारे थे, वही ओजस्विनी वाणी, शब्दों की स्पष्टता, वाक्यों का गुफन, द शनिकता प्रभावोत्पादकता, सक्षिप्तता पर तथ्यपूर्णता और एक ऐसी प्रभुविष्णुता जो अत्य त दुर्लभ होती है। भाषण के समय मसीहा प्रतीत होते हैं। उनके वाक्य नपे तुले, सूत्रवत्, वेद वाक्यों जैसे सूक्ष्म पर भाव और विचारों से ओतप्रोत होते हैं। *राधाकृष्णनजी की भाषण-*शैली बराबर वैसी ही रही है। राष्ट्रपतित्व कार्यकाल के पिछले दिनों में भी उसमें कोई परिवर्तन दृष्टिगत नहीं हुआ। वहाँ भी छोटा सा भाषण हुआ,

रूसी नेता भी बोले, अनुवाद हुए। दोनों देशों की धुनें बजाई गईं, 'हिन्दी-रूसी भाई भाई' का शोर भी कई बार हुआ, बच्चों की जयजयकार एक ओर चल रही थी। सारी राजकीय औपचारिकता के पश्चात् राष्ट्रपति रूस के वरिष्ठ नेताओं के साथ आगे बढ़े। एयर इंडिया के २ बोइंग खड़े थे—एक राष्ट्रपति का और दूसरा हमारा। राष्ट्रपति विमान में आरूढ़ हुए, उनके उड़ान की तोपें गड़गड़ाहट करने लगीं, उसी बीच हमारा ७०७ बोइंग भी उड़ने लगा। ऐसा विदाई समारोह अन्यत्र कहीं नहीं हुआ। ठीक ही है 'सत्संगतिः किं न करोति पुंसाम्'।

## एयर इंडिया

विमान दो घंटे लेट था—मॉस्को से दिल्ली तक की बिना रुके एक ही लम्बी उड़ान थी। दोपहर का भोजन तथा शाम की चाय हवाई जहाज पर ही देने का प्रोग्राम था। मुझे एयर इंडिया की उड़ान बहुत अच्छी लगती है। वैसे तो अंतर्राष्ट्रीय उड़ानों में एयर इंडिया की अपनी प्रतिष्ठा है परन्तु मुझे विशेष सुविधा यह है कि भोजन बहुत रुचिपूर्ण मिलता है। दिल्ली से चढ़ते समय जैसा भोजन मिला वैसा तो नहीं परन्तु काफी अच्छा भोजन मिला—निरामिष, भारतीय। चाय तो कैसी भी चलती है। अनेक देशों की चायें पी हैं मैंने—जापान की 'टी सेरेमनी' भी मेरे एक मित्र ने मेरे लिए टोकियो में आयोजित कराई थी—किन्तु व्यवस्था, औपचारिकता, समय और द्रव्य अपेक्षित होते हैं, जापानी परंपरागत चाय के लिए। हवाई जहाज में बहुत कम लोग थे, और ३, ४ को छोड़ कर बाकी सभी भारतीय। जहाज पर शायद १८, १६ व्यक्ति ही रहे होंगे। भारतीयों में भी वे कर्मचारी लोग थे जो राष्ट्रपति को छोड़ कर भारत लौट रहे थे। ३५००० फीट की ऊँचाई पर ६०० मील प्रति घंटा की गति से उड़ता हुआ हमारा शानदार विमान लगभग ५॥ घंटे में ही दिल्ली पहुँच गया। स्वदेश ! मधुर स्वदेश !!

मार्ग में कई व्यक्तियों से मित्रता हुई। आस्ट्रेलिया के एक परिवार से तो बहुत ही घनिष्ठता हो गई—अब भी वहाँ से भाव-भीने पत्र आते हैं। हवाई जहाज के आकार को देखकर, जिसमें करीब २०० यात्री आ सकते हैं, यह १८, १६ यात्रियों की संख्या नगण्य सी प्रतीत होती थी। जहाज से कभी-कभी नीचे का दृश्य बड़ा ही स्पष्ट दिखाई देता था। नीचे तक बिल्कुल साफ

होने से ऐसा मालूम होता था जैसे कागज पर रेखाओं द्वारा मानचित्र बना दिया गया हो। बादल होने पर बादलों का समूह रुई के गालों का पवत जैसा दिखाई देता था। दृश्य तीव्र गति से बदलते थे। पर्वत तो ऐसे लगते हैं जैसे कागज पर खिंची रेखाएँ कुछ मोटी करदी गई हों। नदियाँ सरल रेखाएँ जसी ही दिखाई देती थीं। पूरा दृश्य एक 'रिलीफ मैप' के समान था—इससे अच्छा और मानचित्र क्या हो सकता है? यह सब देखता हुआ उच्चाकाश की यात्रा बडे आनन्द के साथ पूरी कर रहा था—साथ ही यात्रियों से बातें भी चलती थीं। स्वदेश लौटना भी बड़ा उत्साहवर्द्धक है, वैसे मुझे भारत छोडे कुछ अधिक समय नहीं हुआ था, केवल कुछ ही सप्ताह हुए थे पर तु एक चित्र सा खिंचता आ रहा था उन सभी घटनाओं का जो मनस्तल के एक पक्ष में कुछ समय के लिए प्रतिष्ठित हो गई थीं। उधर विमान अपनी गति से चल रहा था, इधर विचार उससे भी आगे जाकर मातृभूमि का पद-वदन कर रहे थे। 'मातृभूमि स्वग से भी महान्' होती है और मेरा व्यक्तिगत अनुभव तो यह है कि विदेश यात्रा का आनद कुछ सप्ताहों के लिए तो अवश्य ही आह्लादकारक होता है। उसके पश्चात् स्वदेश की याद आती है, उस मिट्टी को चूमने का मन करता है जिसमें हम बडे हुए हैं, उन व्यक्तियों मे रहने की इच्छा होती है जो हमारे जीवन का अग बन गए हैं, उस व्यवस्था को अपनाने की कामना होती है जो हमे यश प्रदान कर हमारे जीवन पर स्थिर हो चुकी हैं, और साथ ही उस वातावरण में आत्मसात् करने की आकांक्षा होती है जिसमें हम विकसित हुए हैं।

इधर चाय की तैयारी हो रही थी, उधर रूस के दक्षिण पूर्व की ओर हमारा विमान चालित हो रहा था। एयर इंडिया का यह बोईंग बहुत ही आरामदेह था और सर्विस भी अच्छी थी, पर ऐसा प्रतीत होता था कि यात्रा समाप्त होने के कुछ समय पूर्व कुछ गभीर सा वातावरण हो जाता है—यह रूस से भारत की उड़ान थी—एक प्रकार से, यान की यात्रा का एक दौर समाप्त हो रहा था—अगला तो अगले दिन ही प्रारम होने को था या उसके भी एक दिन बाद। यान मे कुछ अजीब सी निष्क्रियता छाई हुई थी—जो चाय के साथ अवत तिरोहित होती प्रतीत हुई। चाय पान मे कुछ ही समय लगा और हम लोग पुन भारत पहुँचने के विचारों में लीन हो गए।

पूर्व सूचना के अनुसार जहाज़ लगभग ४॥ बजे पहुँचने को था और मैंने

अपने मित्रों, संबंधियों तथा परिवार के लोगों को इसी प्रकार की सूचना दे दी थी। यह स्वाभाविक ही था कि सभी लोग समय के पूर्व ही हवाई अड्डे पर आ जाते पर टेलीफोन का उपयोग समय बचाने में सहायक हुआ और पता लगा वे लोग लगभग ६ बजे पालम पहुँचे। पर यह भारत के ६ नहीं थे, रूसी ६ थे—भारत में तो लगभग ९ बजे रात्रि का समय था—समय में अंतर जो होता है। यह समय का अंतर भी बड़ा मजेदार होता है—आप पश्चिम की ओर जाएँ तो घड़ी को घटाते जाइये। लंदन पहुँचने में आपको अपनी घड़ी ५॥ घंटे पीछे करनी पड़ेगी, और अगर जापान जाएँ तो ३॥ घंटे आगे करनी पड़ेगी। इस क्रिया को जहाज वाले १, १॥ घंटे के हिसाब से कराते रहते हैं। एक बहुत ही मनोरंजक घटना याद आ गई। मेरे एक मित्र होनोलुलु के हवाई-विश्वविद्यालय में काम करते हैं—जब मैं जापान जाने को था तो वे भी लगभग उन्हीं दिनों में टोकियो रुक कर अपने काम पर पहुँचने वाले थे। मैंने उनसे पूछा कि मिलने की कौनसी तिथि उपयुक्त रहेगी तो उन्होंने बताया '१५ सितम्बर' मैंने आश्चर्य से कहा—'१५ सितम्बर कैसे ? आपका विश्वविद्यालय तो १४ सितम्बर को खुल रहा है। क्या सत्र के प्रथम दिवस पर आपकी उपस्थिति वहाँ वांछनीय नहीं है ?' उनका उत्तर था 'अवश्य ही—मैं १५ सितम्बर को उड़ूँगा और चौदह सितम्बर को पहुँच जाऊँगा !!' बात ठीक ही थी। जापान 'सूर्य का देश' है, विश्व में सर्व-प्रथम सूर्य का स्वागत वहीं होता है, और २४ घंटे का अंतर हो जाता है दूसरी दुनिया में। दुनिया गोल जो है—इसकी गोलाई में अब तो कोई संदेह ही नहीं, इसके इतने चक्कर लगाए जा चुके हैं—बाहर अंतरिक्ष में—, फोटो लिए जा चुके हैं—बाहर अंतरिक्ष से—कि इसकी गोलाई का रहस्य निश्चयात्मक सत्य हो गया है। तो जब हम पालम की घड़ी देखने लगे तो ९ बजकर २० मिनिट थे, हम सोचते थे अभी सूर्य अस्त नहीं हुआ होगा पर यहां तो रात्रि का साम्राज्य विस्तृत हो चुका था।

स्वदेश

जब भारत पहुँचने की घोषणा हुई तो सभी लोग सजग और सक्रिय हो गए। सामान संभालने लगे, पेटियाँ शब्द करने लगीं, सिगरेटें बन्द हो गईं—बड़ी शान से हमारा बोईंग उतरा। दरवाजा खुला, सीढ़ियाँ लग गईं, उधर ऊँचाई पर खड़े लोग हाथ हिला रहे थे—दूर से, रात्रि में बिना पहचाने

हाथ कौन देखता और यहाँ तो बाहर आने का उपक्रम था, 'पथ के साथियों' से विदाई ली जा रही थी। आस्ट्रेलियन परिवार बहुत भावुक हो रहा था—वे लोग 'अशोक होटल' में तीन दिन ठहरने वाले थे—बड़ा आग्रह था उनका, निमन्त्रण था, कम से कम एक बार और मिलने का। मैं भी चाहता था कि उनका सामीप्य एक बार और प्राप्त करूँ परन्तु 'पंथ के साथी' प्रायः उतनी ही देर के होते हैं। मैं यान से बाहर आया, और वहाँ से कस्टम आदि से होता हुआ—बाहर निकला। विदेश से लौटे प्रिय का कितना प्रिय स्वागत होता है! मालाओं से लदा मैं अपने मित्र के साथ अग्रसर हुआ, साथ में कई कारें और थीं। उसी रात्रि उन्होंने मेरे सम्मान में एक भोज का आयोजन किया था। भारतीय दावत! कितनी प्रिय होती है अपनी खाद्य-योजना! तो मैं भारत आ गया। मेरे स्वप्नों का देश अब मुझ से हजारों मील दूर था, पर उसकी स्मृतियाँ—कितनी मधुर! कितनी प्रेरणाप्रद!!

# अन्य दर्शनीय स्थान

## कल्पना के परों पर

पाठकों ने मॉस्को का दर्शन किया, हवाई यात्रा का आनन्द लिया। अब कल्पना के परों पर बैठकर मेरे साथ चलिए, आपको कुछ अन्य स्थानों के दर्शन भी करादूँ। किसी भी देश की जानकारी करने के लिए वहाँ के कुछ महत्वपूर्ण स्थलों को देखना तो आवश्यक होता ही है, पर उस देश के अन्दर जाकर उसका रूप देखना भी उपयुक्त होता है, तभी तो उस देश की आत्मा में हमारा प्रवेश संभव होता है। बहुत से सैलानी केवल दो दिनों में संपूर्ण भारत देखने की बात कहते हैं। वायुयान से बम्बई उतरे—३ घंटे टैक्सी से चक्कर लगाया और दिल्ली—वहाँ कुछ घंटे व्यतीत किए और आगरा। ताजमहल देखकर कलकत्ता पहुँच गए और आगे की यात्रा शुरू की। पूरे दो दिन भी तो नहीं लगे, परन्तु भारत देख लिया। वैसे मैं भी कुछ ऐसा ही हूँ—दो दिन बैंगकॉक ठहरा तो थाइलैंड देख लिया, एक दिन मनीला ठहरा तो फिलीपाइन की यात्रा होगई, और कोलम्बो में एक दिन ठहर कर सीलोन देखने की कामना पूरी हुई समझी जाने लगी। वैसे यह दर्शन भी अपना स्थान रखता है, परन्तु किसी देश को समझने के लिए, वहाँ की विविध व्यवस्थाओं को जानने के लिए, उसको अधिक निकट से देखना चाहिए—अंदर जाकर देखना चाहिए।

आप लेनिन की समाधि तो देख ही चुके। इसको देखने का महात्म्य है—जैसे हमारे यहाँ विशिष्ट व्यक्ति गांधीजी, नेहरूजी, तथा शास्त्रीजी की समाधि पर पुष्प-माला अर्पित करते हैं वैसे ही लेनिन-समाधि पर। वहाँ की अन्य समाधियाँ मैंने आपको नहीं दिखाईं। उसी स्थान के समीप लेनिन की पत्नी भी चिर निद्रा में प्रतिष्ठित हैं; ज्दानोव, फ्रूंजे, जर्जिंकी भी वहीं हैं और सुप्रसिद्ध गोर्की भी। गोर्की के नाम पर मॉस्को में एक प्रसिद्ध बाजार भी है, जिससे मैं न जाने कितनी बार गुजरा।

## टॉलस्टाय

आइए आपको महात्मा टॉलस्टाय के घर ले चलूँ। बहुत पहले महात्मा टॉलस्टॉय की कहानियाँ पढ़ी थीं, उनके प्रति महान् श्रद्धा थी—महात्मा नाम

से संबोधित यह व्यक्ति भारतीयों में बड़ी श्रद्धा का पात्र है, शायद 'महात्मा' शब्द में ही कुछ चमत्कार हो। 'महात्मा' को 'आत्मा' तो 'महान' होती ही है। भारत मे भी सर्वोपरि नाम 'महात्मा गांधी' का ही है। भारत के विषय मे विदेशों मे जब कभी बातें हुई तो महात्मा गांधी का नाम अवश्य आता था, नेहरू का नाम भी साथ में चलता था। भारतीय आकाश के ये दो ज्योतिपुंज नक्षत्र अभी तक ध्रुव की तरह अटल है। तो जब मैंने टॉलस्टॉय की कहानियाँ पढ़ीं तो 'महात्मा' विशेषण के कारण उस की ओर विशेष आकृष्ट हुआ। अब चलिए उनके स्थान पर। मॉस्को से कुछ ही दूर यास्नाया पोलियाना नाम का एक सुन्दर स्थल है। यहाँ की यात्रा एक धार्मिक यात्रा है, और ऐसी ही पवित्र जैसे गीता और गांधी। टॉलस्टॉय एक समृद्ध परिवार के थे परन्तु उन्हें मानवी धर्म में विश्वास था, और वे धनिकों का जीवन पसन्द नहीं करते थे। आइये, एक लम्बे चौड़े बाग मे उनका भवन देखिये जो उनके जीवन-दर्शन का प्रतिरूप है। यह रहा उनका अध्ययन कक्ष जिसमें उन्होंने 'युद्ध और शान्ति' नाम का प्रसिद्ध उपन्यास लिखा। १६१० मे अपना भरा-पूरा भवन छोड़ कर सामान्य जीवन व्यतीत करने लगे, और वहीं उनकी आजीवन तपस्या चली। इस बाग में टॉलस्टॉय के उगाये कुछ पेड़ हैं, और वहीं उनकी समाधि है। एक महात्मा के अनुरूप सीधी सादी समाधि, जिसे पुष्पों का आच्छादन प्राप्त है, किन्तु यह एक ऐसा स्थान है जो अब भी मानवता को शान्ति और प्रेरणा प्रदान करता है, क्योंकि यहाँ वह व्यक्ति सोया हुआ है जिसने मानवीय स्वतन्त्रता के लिये सफल संघर्ष किया। जब अपनी पत्नी को एक पत्र लिखने के उपरान्त इन्होंने अपना घर छोड़ा तो उस कहानी को सुन कर सिद्धार्थ का स्मरण हो आता है जो अपनी प्रिय पत्नी यशोधरा को छोड़ कर चले गये थे। सिद्धार्थ की तरह टॉलस्टॉय वनों में तो नहीं भटके, क्योंकि उस समय तक जीवन के ८२ वर्ष उनके साथ निकल चुके थे किन्तु उन्होंने यह पसन्द किया कि छोटे से छोटा काम करें और सादा से सादा जीवन बिताएँ। टॉलस्टाय का सन्देश विश्व के लिये प्रेरणा का सन्देश है। वे मानवता में विश्वास करते थे, मानवत्व के उद्बोधक थे, किसान और मजदूर उनके प्रिय सहचर थे। उनका लिखा हुआ साहित्य संसार की अमर निधि है। टॉलस्टाय के निवास स्थान और उनकी समाधि का दर्शन कर कौन धन्य नहीं हो जाता। कहानीकारों मे तो जैसे भारत मे प्रेमचन्द हैं वैसे ही रूस मे टॉलस्टाय।

लेनिनग्राड

रूस जाने पर तो यह इच्छा और भी अधिक बलवती होती है कि वहाँ के और भी कई स्थानों को देखा जाए। कौन नहीं चाहेगा कि रूस जाकर लेनिनग्राड का दर्शन न करे। यह ठीक है कि सामान्य विदेशी दर्शक को तो लेनिनग्राड देखने के लिये एक बार पुनः अनुमति प्राप्त करनी पड़ती है, परन्तु इस अनुमति से कहीं प्रबल मनुष्य को प्राप्त वह शक्ति है जिसके द्वारा वह अपनी अबाध गति से कहीं भी जा सकता है। लेनिनग्राड का हरमिटेज-संग्रहालय विश्व में अपना एक विशेष स्थान रखता है और उसको देखने में अनेक दिन लगते हैं। अभी हाल में जब हमारे वर्तमान राष्ट्रपति अपने सोवियत संघ के दौरे के अवसर पर लेनिनग्राड पहुँचे तो उनका कथन था कि यह संग्रहालय अद्वितीय है, जिसके देखने में सप्ताहों के मनोयोग की आवश्यकता है। मॉस्को से लेनिनग्राड बहुत सस्ते मे ही वायुयान से पहुँचा जा सकता है, और यदि कार द्वारा जाना चाहें तो तीर जैसी सीधी सड़क आपका स्वागत करती है। मैं ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय राजमार्ग देखे हैं, जिनको देखना और उनसे गुजरते हुए यानों का दर्शन करना अपने आप में एक उपलब्धि है। विशाल राज–मार्ग, बीचों बीच हरियाली और पुष्पों की पंक्ति, दोनों ओर तीन-तीन ट्रैक और उन पर दौड़ती गाड़ियाँ देखते ही बनती हैं। जर्मनी में जब मेरे एक मित्र ने कहा कि वे १२०, १३० की स्पीड से गाड़ी चलाते हैं तो मुझे विश्वास नहीं हुआ पर जब इस राजपथ पर उन्होंने इस गति से गाड़ी छोड़ी तो पता चला कि इस ट्रैक पर सभी गाड़ियाँ इसी गति से चलती हैं। यदि आपको इतनी तेजी से गाड़ी चलाना स्वीकार न हो तो दूसरे ट्रैक में चलाइये, और यदि यह भी संभव न हो तो तीसरे ट्रैक में चलाइये, पर आप धीमे चल कर अन्य वाहनों का मार्ग नहीं रोक सकते, ऐसा करने पर चालान भी हो सकता है। सड़कें सीधी होती हैं, काटती हुई सड़कें नीचे से निकाल दी जाती हैं, चौरास्ते नहीं बनाये जाते। पर आप कार की झंझट क्यों उठाते हैं? वायुयान से चलिये और थोड़ी ही देर में लेनिनग्राड पहुँच जाइये। बहुत पहिले जब मैंने रूस का भूगोल पढ़ा था तो सेण्टपीटर्स-बर्ग नाम तो सुना था, अब पता लगा कि उसी का वर्तमान नाम लेनिनग्राड है। इसे सैलानियों का स्वर्ग कहा जाता है, क्योंकि प्राचीन और अर्वाचीन दोनों प्रकार की बातें यहाँ मिलती हैं। १९१७ की महाक्रान्ति का दिग्दर्शन भी

यही होता है। हम वह स्थान देख रहे हैं जहाँ लेनिन १९१७ में आया, और जहाँ उसने एक प्रसिद्ध झरोखे से स्वागतार्थियों को अपने दर्शन दिये। सोवियत राज्य की स्थापना में लेनिनग्राड का प्रमुख स्थान है, क्योंकि इसका लेनिन नाम से इतना निकट सबंध है। यहाँ बादशाहों के महल भी हैं, और क्रान्तिकारियों के आवास भी। यहीं रूस के सम्राट चिरनिद्रा में शायित हुए थे, और यहीं सोवियत-राज्य का नव निर्माण हुआ था। लेनिनग्राड जाकर पुश्किन का निवास स्थान देखना एक प्रकार से आवश्यक है। यह स्थान जैसा का तैसा सुरक्षित है, और पुश्किन का पुस्तकालय भी अपने उसी रूप में है। पुश्किन का कलम, लैम्प, दवात, कैंची, घण्टी आदि सभी उसी तरह सुरक्षित हैं। इन वस्तुओं को लोग उसी श्रद्धा के साथ देखते हैं जैसे अनेक धार्मिक पुरुषों की सांसारिक वस्तुओं को। पुश्किन के बालों का एक गुच्छा भी सुरक्षित है। इसका दर्शन उतना ही पवित्र है जितना हजरत बाल को मस्जिद में रखा हुआ मुहम्मद साहब को दाढ़ी का बाल, या कैण्डी में रखा भगवान बुद्ध का दाँत। पुश्किन ने जीवन के केवल ३८ वर्ष देखे, किन्तु उनका नाम अमर हो गया।

लेनिनग्राड के महल, संग्रहालय, गिर्जाघर, बगीचे सभी दर्शनीय हैं। आप ग्रीष्मकालीन प्रासाद देख सकते हैं अथवा शरदकालीन आवास, कजा का गिर्जाघर देख सकते हैं अथवा इजाक का गिर्जाघर। ऐतिहासिक संग्रहालय देख सकते हैं या अस्त्रागार। सभी कुछ दर्शनीय है। लेनिनग्राड में यदि आप ग्रीष्मकालीन यात्रा करें तो आपको रात्रिहीन दिन मिलेंगे और शरद्कालीन यात्रा करेंगे तो दिनहीन रात्रियाँ। इसका किञ्चित् आभास मुझे ऐडिनबरा में हुआ था, जब मेरी एक मित्र ने रात्रि के नौ बजे मुझे चाय के लिये आमन्त्रित किया। 'रात्रि के नौ बजे भी चाय का समय होता है, मैं आश्चर्य में था, परन्तु जब नौ बजे तो मैंने देखा कि आश्चर्य की कोई बात नहीं थी, नौ बजे भी काफी प्रकाश था। लेनिनग्राड में तो गर्मी के दिनों में कुछ समय के लियें ही किञ्चित् अन्धकार का आभास होता है, अन्यथा रात्रि होती ही नहीं। वहाँ सूर्यास्त और सूर्योदय एक दूसरे से मिलते प्रतीत होते हैं। अर्धरात्रि में ऊषा का आभास होता है।

ताशकंद

भारतीय भाषाओं का अध्ययन, विशेषकर हिन्दी का, जिस तत्परता के साथ ताशकन्द में किया जाता है उतना सोवियत संघ में, शायद, अन्यत्र

नहीं। मॉस्को से केवल चार घण्टों में ही आप ताशकन्द पहुँच जायेंगे। पहिले भारतीय वायुयान ताशकन्द रुक कर मॉस्को पहुँचते थे किन्तु अब दिल्ली-मॉस्को-यात्रा बिलकुल सीधी है। ताशकन्द को देखना बहुत आवश्यक है क्योंकि यह भारत के बहुत निकट है। उज्बेकिस्तान की राजधानी ताशकन्द अपनी उज्बेक भाषा के लिये भी एक प्रसिद्ध केन्द्र है। मध्य एशिया का यह नगर अब बहुत ही समृद्ध हो गया है। एक समय था जब यहाँ पानी की समस्या बहुत प्रबल थी, लेकिन अब तो इस प्रकार की कोई कठिनाई नहीं रही है। सारा देश सरसब्ज है। गेहूँ, चावल, मक्का, जौ, ईख सभी कुछ दिखाई पड़ते हैं। अनार, अंगूर और अंजीर को तो दर्जनों किस्में हैं। यहाँ की रुई संसार-प्रसिद्ध है। शिक्षा का प्रसार बहुत अधिक है। भारत के कई विद्वान ताशकन्द के शिक्षालयों में हिन्दी पढ़ा चुके हैं और उनकी उपलब्धियाँ प्रशंसनीय हैं। ताशकन्द में हमें अपने प्रिय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री की पुनीत स्मृति स्वतः हो आती है। देश के इस शान्तप्रिय वीर सेनानी ने यहीं अपनी सांसारिक यात्रा समाप्त की, किन्तु वे अपने जीवन का एक महत्त्व-पूर्ण कार्य तब तक पूरा कर चुके थे, और वह था भारत-पाक-मैत्री और सद्भावना का। आज भी दोनों देशों में इस बात पर जोर दिया जाता है कि भारत-पाक-सम्बन्धों की जो सुन्दर योजना ताशकन्द में निर्मित हुई थी उसे जीवित रखा जाये, और दोनों देश मैत्री के दृढ़ सूत्र में आबद्ध हों। इसी के लिये तो लालबहादुर शास्त्री ने अपने प्राणों की आहुति दी थी। ताशकन्द में लालबहादुर का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है वहाँ का एक प्रसिद्ध बाजार भी उनके नाम से है, और अभी कुछ ही दिनों पूर्व उनकी एक प्रतिमा ताशकन्द पहुँचाई गई थी। उस पवित्र स्थल का दर्शन विश्व-मैत्री का प्रतीक बन चुका है। किन्तु कोई भी भारतीय उस स्थान को सजल नेत्रों-बिना नहीं देख सकता। जब उनकी धर्मपत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री ने अपने परिवार के साथ यहाँ की यात्रा की थी तो उनकी मानसिक स्थिति क्या हुई होगी इसका अनुमान लगाना कठिन है। भारतीय इतिहास और भारत-पाक संबंधों में ताशकन्द का नाम बड़ा महत्त्वपूर्ण बन गया है। हमारी वर्तमान प्रधानमंत्री इन्दिरा गान्धी भी ताशकन्द की यात्रा कर चुकी हैं और न जाने कितने भारतीय मानसों में इस स्थल के देखने की आकांक्षा जागृत होती है। राष्ट्रपति डॉ० जाकिरहुसेन जब अपनी राजकीय यात्रा पर

सोवियत-संघ पधारे तो उन्होंने भी इस स्थान के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित की।

ताशकन्द उजबेक संस्कृति और कला का प्रमुख स्थान है। यहाँ के चिकित्सा संस्थान और संगीत शिक्षण-केन्द्र दर्शनीय हैं। ताशकन्द में हस्तलिखित ग्रंथों का एक विशिष्ट संग्रहालय है जिसे यदि रूसी-भारत संस्कृति को जोड़ती हुई कड़ी कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यहाँ के नृत्य-गान की बात प्रायः सुनाई देती रही है, और अनेक अवसरों पर यहाँ के कलाविदों ने भारत में प्रदर्शन दिए हैं। रूसी ही नहीं भारतीय संगीत के प्रति भी यहाँ सीखने की जिज्ञासा है। कहा जाता है कि रूसी क्रान्ति का जितना लाभ मध्य एशिया के इस भाग में देखा जाता है वैसा अन्यत्र दिखाई नहीं पड़ता।

## समरकंद

यदि आप चाहें तो यहाँ से शीघ्र ही समरकंद पहुँच सकते हैं। यह वही स्थान है जहाँ 'एरेबियन नाइट' की सहस्र कहानियाँ कही गईं, जहाँ सिकन्दर, चंगेजखां और तैमूर के आक्रमण हुए। बादशाहों का नगर, विजेताओं का आकर्षण, संस्कृति का केन्द्र, भारतीय इतिहास का समर्थक यह नगर भारत और रूस के बीच कितना गहरा संबंध स्थापित करता प्रतीत होता है। सिकन्दर और तमूर तो दोनों स्थानों से संबंधित हैं। पर तैमूर जहाँ भारत में केवल घोर विघटन और भयानक रक्तपात के लिए बदनाम है वहाँ समरकंद को उसने एक ऐसी सुंदर मस्जिद प्रदान की जो नगर की शोभा में वृद्धि करती है। इस मस्जिद में तनिक अंदर चलिए—आप देख रहे हैं एक बहुत बड़ा हॉल, जिसे चार सौ खंभे धारण किए हुए हैं। उधर देखिए, शाहे जि दा एक ऐसा भवन जिससे कुसुन-दे-अब्बास की स्मृति चिरस्थायी होती है। उसकी पवित्रता तैमूर जैसे रक्तपात-प्रिय विजेता भी स्वीकार कर चुके हैं। यहाँ एक और मस्जिद भी है जिसे मक्का जैसा ही पवित्र माना जाता है जहाँ समाधिस्थ होना मुसलमानों के लिये गौरव का विषय है। तैमूर की समाधि भी यहीं अवस्थित है, और उसके द्वारा निर्मित और अनेक भवन भी। इन भवनों पर प्रायः कुरानों की आयतें लिखी हुई हैं और इतिहासवेत्ताओं के लिये महत्वपूर्ण सामग्री उपस्थित करती हैं। भारत में जयपुर के महाराज

जयसिंह ने ४ वेधशालाएँ बनवाईं। इसी प्रकार मध्य-एशिया के उलूक बेग ने एक वेधशाला बनवाई। यह व्यक्ति केवल राजा ही नहीं था वरन् प्रसिद्ध ज्योतिषी और गणितज्ञ भी था। बहुत समय तक यह वेधशाला अज्ञात रही परंतु लगभग ६० वर्ष पूर्व इसको एक रूसी पुरावेत्ता ने ज्ञात किया। इस वेधशाला पर किया गया कार्य इतना ही निश्चित और पूर्ण होता है जितना किसी समय जयसिंहजी के बनाये जंतर-मंतर पर।

समरकंद एक ऐसा स्थान है जहां योरोपीय सभ्यता दर्शित नहीं होती। इस्लामी रंग-ढंग, व्यवस्था और रहन-सहन दिखाई देते हैं पर सोवियत सरकार ने इस स्थान के पिछड़ेपन को दूर करने में काफी सक्रियता दिखाई है, साथ ही इसका वास्तविक स्वरूप भी रहने दिया है।

## वोलगा

बहुत समय पूर्व एक कृति पढ़ी थी 'वोलगा से गंगा'। गंगा भारतवर्ष की पवित्र नदी है, और वोलगा रूस का जीवन-स्रोत। हिमालय से निकल कर गंगा उत्तर भारत के मैदान को समृद्धि प्रदान करती हुई सागर में विलीन हो जाती है। वोलगा रूस के काफी हिस्से में प्रवाहित होती हुई कैस्पियन सागर का आलिंगन करती है। सॅलिगार नाम की झील से निकल कर योरोप की यह सबसे लंबी नदी लगभग ढाई हजार मील की यात्रा करती है। अनेक नदियां इसकी गोद में आती है। यमुना, घाघरा, गोमती, सोन आदि नदियां जैसी सूरा, कामा और ओका इसे भी जलवृद्धि प्रदान करती हैं। अपने किनारों को हरा-भरा बनाते हुए यह आगे बढ़ती है। कवियों ने इसके गीत गाये चित्रकारों ने इसके चित्र बनाये। और आधुनिक यांत्रिकी मानव ने इसके जल-प्रवाह से शक्ति प्राप्त की। भारत में भी न जाने कितने गंगा-स्तोत्र बने। संस्कृत, हिंदी और बंगला के कवियों ने गंगा को अपनी श्रद्धांजलियां अर्पित की हैं। विष्णु के चरणों से उद्भूत, ब्रह्मा के कमंडल की शोभा बढ़ाते हुए गंगा ने शिव की जटाओं को मालती माला की तरह सुशोभित किया। गंगा पयस्विनी है, हिन्दुओं की माता है और उनके संसार तथा परमार्थ की निर्मात्री है। अब उस पर भी यांत्रिकी सभ्यता ने अपना आधिपत्य जमाया है—नहरें निकालीं और उसके लाभ को और बढ़ाया। जैसे स्थान-स्थान पर गंगा के प्रवाह को नियंत्रित किया गया है उसी प्रकार वोलगा के साथ भी

मानव अपनी स्वाप क्रीडा मे रत हुआ है। पर वोल्गा को शस्य श्यामला धरित्री का इतना सहयोग नहीं मिला। पहाड़ और जगल उससे दूर हो गये, केवल घास के मैदान रह गए। उसके मित्र और सहयोगी छूट गए। ससार से उसका नाता टूट गया, वह एकाकिनी हो गई और सम्भवत मुक्ति प्राप्त्यर्थ कैस्पियन सागर में तिरोहित हो गई। गगा का प्रवाह अधिक मानवीय है, और वोल्गा का अधिक त्यागमय, तपस्यापूर्ण और एकाकी। पर दोनों ही एक दूसरे से इतनी सबधित हैं कि भारत में जहां गगा का नाम याद आता है वहाँ रूस में वोल्गा का।

यदि वोल्गा में आप कुछ समय यात्रा करना चाहें तो आप जलयान से यात्रा कीजिये। आपको किनारे का सुदर दृश्य देखने को मिलेगा, जहाज के कप्तान का सौजन्य आपको प्राप्त होगा, और सोवियत भूमि के उस भाग का दर्शन होगा जिसे आप किसी अन्य प्रकार से नहीं देख सकते। वोल्गा मे चलते समय ऐसा प्रतीत होता है जैसे हम नदी मे नहीं चल रहे हैं, एक बड़े तालाब मे चल रहे हैं। तालाब भी इतना बडा जो समुद्र जैसा विशाल दिखाई देता है। विद्युत उत्पादन की दृष्टि से वोल्गा बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। साम्यवाद में जो महत्त्व समाजवाद का वही महत्त्व विद्युत का भी है, और वोल्गा से कितनी विद्युत शक्ति उत्पादित होती है इसे सभी लोग जानते हैं।

## सब से लम्बी रेल

क्रांति से पहले रूस की विशालता शायद रूसी सम्राटों के नियन्त्रण में भी नहीं थी। साइबेरिया के नाम से तो एक अन्य प्रकार की सृष्टि का आभास होता था। रूस के सम्राटों ने अपने साम्राज्य का कुछ हिस्सा विदेशियों को बेच भी डाला। साइबेरिया के प्रसग में मैंने पढ रखा था कि विश्व की सब से लम्बी रेलगाडी 'ट्रान्स साइबेरियन रेलवे' है। यह गाडी मास्को से ब्लाडीवास्टक तक जाती है, तथा ८ दिन और ८ घटे मे यात्रा पूरी करती है पर इस ट्रेन की यात्रा बड़ी मनोरजक है और यदि आप के पास समय हो तो अवश्य ही इसमें यात्रा करें। इसमें बैठने पर ऐसा प्रतीत होता है जैसे शीघ्रता नाम की कोई वस्तु है ही नहीं। आपका फ्रटियर मेल और हावडा कालका ट्रेन इतनी द्रुतगति से दौड़ते हैं, और जापान की 'हिकारी' तो पागल सी मालुम है—टोकियो से क्योतो की यात्रा का ३ घटों व कुछ मिनिट में पूरा करना पागल-

पन नहीं तो क्या है। ट्रान्स साइबेरियन मंथर गति से चलती है, साईबेरिया का दर्शन कराती हुई यहाँ के जीवन को स्पष्ट करने में सहायक होती है। यह रेल सन् १६०५ में बनी और इसने सोवियत-संघ के पूर्व और पश्चिम को एक सूत्र में बांध दिया है।

बेकाल

इस गाड़ी में यात्रा करते समय यदि आप चाहें तो बेकाल झील भी देख सकते हैं। बेकाल झील एक संसार-प्रसिद्ध झील है और इसकी मछलियां तो मत्स्याहारियों के लिये अमृतमय भोजन सदृश हैं। इस झील पर यात्रा करना बड़ा आनन्दप्रद है। इसका पानी इतना साफ है कि काफी नीचे तक दिखाई देता है। कहा जाता है कि यह संसार की सबसे गहरी झील है। कहीं-कहीं इसकी गहराई लगभग १६०० गज है। आप इसके पानी में सिक्का डालिये और उसे नीचे जाते हुए देखिये। पर साथ ही यहाँ सर्दी बहुत पड़ती है और यदि आप उस पर यात्रा करें तो अपने ओवरकोट तथा मफलर ले जाना न भूलें। इस झील में अनगिनत स्रोत मिलते हैं, शायद ३०० से भी अधिक। इस झील की एक बड़ी मनोरंजक कहानी है। एक आदमी था, उसका नाम बेकाल था, उसके ३३५ पुत्र थे और केवल एक पुत्री। यह कन्या पिता के द्वारा प्रदत्त न की जा कर अपने प्रेमी के साथ भाग निकली। कहा जाता है वही लड़की एक झील बन गई और उसके ३३५ भाई उससे मिलने वाले स्रोत बन गये। इस कहानी के अनेक रूप देखे जाते हैं पर प्रायः मनगढ़न्त प्रतीत होते हैं।

ट्रान्स-साइबेरियन रेल की यात्रा यदि पूरे समय तक की जाए तो ऊबा देने वाली होती है अतः लोग कुछ दूर ट्रेन में और कुछ दूर हवाई जहाज में चलते हैं। पूरी यात्रा में बड़े 'धैर्य' की आवश्यकता है जो इस वर्तमान दुनिया में प्रतीत का एक शब्द मात्र रह गया है। वैसे बेकाल झील के सहारे-सहारे चलती हुई ट्रेन का दृश्य बड़ा भला लगता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे घंटों तक ट्रेन और झील में सम्मेलन हो रहा है। कभी-कभी जब पेड़ों के बीच से झील दिखाई देती है तो आंख-मिचौनी का सा खेल प्रतीत होता है। रास्ते में अनेक सुरंगें भी आती हैं जो कभी-कभी बुरी तरह धुएँ से भर जाती हैं। बाईं ओर झील और दाहिने ओर पहाड़ तथा बीच में चलती हुई ट्रेन में यात्री काफी सुख का अनुभव करता है। न जाने कितने स्रोत पहाड़ से निकल कर झील में

मिल जाते हैं, और हमारी ट्रेन उन स्रोतो पर बने पुलों से गुजरती है। यदि ट्रेन के अन्दर देखें तो अनेक राष्ट्रों के निवासी दिखाई पड़ते हैं। रूसी, चीनी, मगोल, कोरियाई और भी न जाने कितने राष्ट्रों के प्रतिनिधि इस ट्रेन को अंतर्राष्ट्रीय बना देते हैं। वसे तो ट्रेन में अधिक झटके धक्के नहीं लगते लेकिन कहीं-कहीं ऐसा मालुम होता है कि तूफानी समुद्र में जहाज जा रहा हो और तबियत बहुत ही खराब होने लगती है। मुझे स्मरण आता है—रोम से किया गया मार्सेल का सफर—जब हमारी ट्रेन रिवीयरा के सहारे न जाने कितने मीलों तक चला गई समुद्रतट का वातावरण प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य से मुग्धकारी प्रतीत हुआ था, और साथ ही इटली की वह १४ मील लबी सुरग भी देखी जो पूर्णत प्रकाशित है और जिसमें ट्रेन इतनी तेजी के साथ चलती है कि सुरग की घुटन प्रतीत ही नहीं होती।

काला सागर

मध्य एशिया के प्रसग में 'काला सागर' की चर्चा करना भी उपयुक्त होगा। इस समुद्र के सहारे ऐसे अनेक स्थान हैं जो स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से बहुत उपयुक्त हैं, इनमें एक स्थान सोची है। न जाने कितने स्वास्थ्य केन्द्र इस नगर में बने हुए हैं—लोगों का कहना है कि ६ ७ दजन तो अवश्य ही होंगे। कहा जाता है कि काला सागर पर स्वास्थ्य लाभ का सब से उत्तम केन्द्र सोची ही है। यहां की विशेष बात यह है कि धनी और दरिद्र सब के साथ एक सा व्यवहार किया जाता है, और सभी की सुविधाओं का ध्यान रखा जाता है। यह दूसरी बात है कि किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों को आरामदेह मोटरें प्राप्त हो जाती हैं तो किन्हीं को बस ही मिल पाती है। यहा खाने-पीने की भी सुविधा है, और चीजें सस्ती हैं। दवाइयाँ भी सस्ती मिलती हैं, पर कुछ चीजें बड़े पुराने ढर्रे की होती है। उदाहरण के लिये वहां का थर्मामीटर १० मिनिट में आपका तापमान बताएगा। पर अब ये बातें दूर होती जा रही हैं। काम में आने वाली वस्तुओं की कमी पूरी होती जा रही है। वहां की आवहवा मे ही एक ऐसा गुण है कि स्वास्थ्य लाभ शीघ्रता के साथ होता है। कुछ लोग कहते हैं कि रूसी भावुक नहीं होते, पर बात ऐसी नहीं है। किसी रूसी से मुलाकात कीजिये, उसके साथ कुछ दिन रहिये और जब आप उससे विदा लेंगे तो उसकी आंखें अवश्य ही गीली हो जाएंगी। कारुणिक चित्रों को देखकर ऐसा कौन

रूसी होगा जो द्रवित न हो उठता हो। इसी प्रकार भाषणों से भी वहां के लोग प्रभावित होते हैं। ऐसा मालूम होता है कि 'श्रांसू बहाना' रूसी चरित्र का एक अंग बन गया है। मैं तो एक रूसी से केवल ३-४ दिन ही संपर्क साध सका, पर जब विदा ली तो आंखों में आंसू तो नहीं थे पर आवाज में परिवर्तन अवश्य था। मैं आज भी पत्रों के सहारे उस परिचय को बनाये हुए हूँ। हो सकता है कि यदि पुनर्मिलन की वेला आई तो उसकी प्रथम क्रिया अश्रु-प्रक्षालन की प्रक्रिया ही हो।

काला सागर बहुत ही रमणीक है। वैसे तो वह शान्त रहता है किंतु मेघों का सान्निध्य उसे विक्षुब्ध कर देता है, और तब उसका जल उसके नाम की सार्थकता प्रतिपादित कर देता है। जब हवाएँ चलती हैं तो उसकी शांति भंग हो जाती है, वह अनियंत्रित हो उठता है। तब उसका दूसरा ही रूप दिखाई देता है। बहुत से लोग सागर के किनारे सूर्यास्त और सूर्योदय को देखने भी उपस्थित होते हैं ठीक उसी तरह जैसे भारत के धुर दक्षिण स्थान कन्याकुमारी में। समुद्र के किनारे कितने दृश्य बदलते हैं, प्रकृति कैसा नृत्य करती है, और उसके कौन कौन से रूप दिखाई देते हैं— इन सबको देखने के लिये काला सागर एक आदर्श स्थान है।

### फ्रूंजे

सोवियत-भूमि में कितने ही दर्शनीय स्थान हैं। चलिए किर्गिस्तान चलें। वहाँ की राजधानी फ्रूंजे एक आदर्श नगर है, लहलहाती अंगूर की बेलें, भरे हुए फलों के बगीचे, शब्द करते और आगे बढ़ते हुए जल-स्रोत और पक्षियों की चहचहाहट आपके मन को हरा कर देंगे। यह एक ऐसा स्थान है जहां तपस्वी अपनी तपश्चर्या में लीन रह सकते हैं। ऐसा मालूम होता है कि भारत से इस देश का काफी संपर्क रहा होगा। निकट ही दो बौद्ध मंदिर खोद कर निकाले गए हैं, भगवान बुद्ध की पहाड़ में खुदी हुई एक मूर्ति भी देखी गई है जो शायद १६०० वर्ष पुरानी हो। देवनागरी में खुदे हुए कुछ लेख भी विद्यमान हैं, जिन्हें पढ़ना अब कठिन है। एक समय था जब यह प्रदेश बहुत ही पिछड़ा हुआ था। यहां के निवासी आदिवासियों जैसे थे किंतु अब वहाँ समाज आधुनिक बन रहा है। सोवियत सरकार की बलिहारी! शिक्षा के क्षेत्र में भी यहां काफी प्रगति हुई है। एक समय था जब यहां केवल कुछ ही लोग मुल्लाओं के द्वारा शिक्षित होते

थे और स्त्री-शिक्षा तो थी ही नहीं। अब वहां उच्चकोटि की अकादमियां हैं, थियटर, बेले तथा ऑपरा हैं। यहां का समाज अब आधुनिक बन चुका है पर भारत से इसका जो सबंध प्राचीन काल से रहा है उसके अवशेष स्थान स्थान पर अब भी मिल जाते हैं।

एक प्रकार से मध्य एशिया भारत के इतने सन्निकट है कि इसके द्वारा दोनों देश एक सूत्र मे बद्ध है। धम, सस्कृति और दशन की दृष्टि से अनेक समानताएँ उपलब्ध होती हैं। अभी तक भारत के अधिक लोगों का इस प्रदेश से सपर्क नहीं हुआ है पर समय समय पर हमारे देश के विज्ञ महानुभाव यहां आते रहे है। डॉ राजेन्द्रप्रसाद ने ताजिकिस्तान का दौरा किया। नेहरूजी ने तुर्कमेनिस्तान मे कुछ समय बिताया, और के पी एस मेनन ने तो इन सभी प्रदेशों को बड़ी सूक्ष्मता के साथ विधिवत् देखा। मध्य एशिया मे बहुत सी भाषाएँ प्रचलित हैं और अरबी तथा लटिन का भी प्रचार देखा जाता है। तुर्कमन भाषा तो बहुत ही प्रचार पा रही है। यहाँ के स्मिरनोव नाम के एक डॉक्टर ने तो सपूर्ण महाभारत का रूसी भाषा में अनुवाद ही कर डाला है। व्यापार, उद्योग, कृषि सभी क्षेत्रों में प्रगति हो रही है।

बाकू

अब हम उस नगर को चलते हैं जहाँ तेल ही तेल है। तेल के पाइप, तेल के टैंक, तेल के स्रोत, और तेल के उद्योग—सर्वत्र तेल ही तेल दिखाई देता है। पेड़ और पहाड़ जैसे तेल में ही परिवर्तित हो गये हों। इस शहर का नाम है बाकू जो कैस्पियन सागर के किनारे बसा हुआ है और जो दुनियाँ का सबसे समृद्ध तैल-केन्द्र है। शहर के दो हिस्से देखे जा सकते हैं—एक सफेद, दूसरा काला। सफेद शहर मे लोगों के निवास-स्थान हैं, और काले शहर मे औद्योगिक केन्द्र। तैल निष्कासन एक बहुत ही लाभप्रद उद्योग है और यहाँ जमीन से ही नहीं समुद्र से भी तेल निकाला जाता है। ऐसी मशीनें ईजाद हो चुकी हैं कि १०००० फीट की गहराई से तेल निकाला जा सकता है।

बाकू एक ऐसा नगर है जहाँ वर्ष मे ३०० दिन तेज हवाएँ चलती रहती हैं और यदि कोई भारतीय महिला साड़ी पहिन कर घूमे तो उसकी साड़ी मे इतनी हवा भर जाएगी कि वह महिला दो पैरों पर चलता हुआ बैलून प्रतीत होगी। यह वह नगर है जहाँ स्टालिन को क्रांति की शिक्षा मिली, जहाँ उसने

संघर्ष के प्रति आस्था बढ़ी। क्रान्ति से पहले बाकू का सारा तेल-व्यापार विदेशियों के हाथ में था, किन्तु अब यह रूस का प्रमुख उद्योग है। वहाँ मुसलमानों की काफी आबादी है और नाट्यगृहों और रंगशालाओं में मुसलमानी खेल दिखाये जाते हैं। भारत के उत्तर भाग और इस प्रदेश में बहुत कुछ घनिष्टता है। काफी कुछ समय से भारतीय व्यापारी यहाँ आते जाते रहे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि बाकू में हिन्दू-मन्दिर भी है। यहाँ यात्रियों के ठहरने के लिये कमरे बने हुए हैं जिन पर देवनागरी, गुरुमुखी और फारसी में भगवान की स्तुतियाँ हैं।

## कैस्पियन सागर

कैस्पियन सागर भी एक दर्शनीय स्थान है। इसके किनारे पर अनेक प्रकार के दृश्य दिखाई देते हैं। यह संसार की सबसे बड़ी झील तो है ही इसके तट पर बसे नगरों में भारतीयता के दर्शन भी होते हैं। अस्त्राखान को ही लीजिए—उतना ही गरम जितने भारतीय नगर, वैसी ही मधुर गंध के पुष्प, रसीले खरबूजे और उड़ती हुई धूल। स्थान-स्थान पर भारतीय धुनें भी सुनाई पड़ जाती हैं। एक समय था जब यहाँ केवल खानाबदोश ही आते जाते थे पर अब यहाँ सभ्यता का समावेश हो चुका है। यहाँ अनेक बौद्ध भिक्षु भी रहते हैं। कुछ दूर पर एक भारतीय उपनिवेश के भग्नावशेष हैं, जहाँ १७ और १८ वीं शताब्दी में प्रचुर मात्रा में भारतीय रहते थे। उस बाजार का नाम ही भारतीय बाजार था। वे प्रायः व्यापारी थे और रेशम, सूती कपड़े, चाँदी और सोना का व्यापार करते थे। उनमें से कुछ लोगों ने रूसी महिलाओं से शादियाँ भी कर लीं, तथा रूसी राष्ट्रीयता प्राप्त करली। बहुत समय तक यह आदान-प्रदान चलता रहा और आज भी वहाँ जाने पर भारतीय स्मृतियाँ जागृत हो जाती हैं।

सोवियत-संघ इतना विशाल है कि उसको देख सकना समय और धैर्य की अपेक्षा करता है, किन्तु उसमें इतनी विविधता है कि जहाँ आप जायेंगे वहीं आपको कुछ न कुछ नई चीजें देखने को मिलेंगी। यह पृथ्वी के $\frac{1}{6}$ भाग में फैला हुआ है। इसका क्षेत्रफल २२४ लाख किलोमीटर है। यही एक ऐसा देश है जो यूरोप और ऐशिया दो विस्तृत महाद्वीपों में फैला हुआ है और जो आधे यूरोप और $\frac{1}{3}$ ऐशिया में अपना विस्तार रखता है। यहाँ की आबादी

२१ करोड़ है और इसमें १२६ जातियाँ हैं। वेशभूषा की दृष्टि से यदि हम देखें तो इतना वैषम्य मिलेगा कि हम आश्चर्यचकित हो जायेंगे। इतना महान् देश जिसकी महानता यूरोप के पश्चिम से एशिया के सुदूर पूर्व तक फैली हुई है। इसको देखना इसकी स्थिति का अनुशीलन करना और विविध दृष्टि-बिन्दुओं से परीक्षण करना बहुत ही कठिन है, फिर भी इस बात की चेष्टा की गयी है कि इस देश के कुछ प्रमुख स्थानों का दर्शन करा दिया जाए। रूस में १५ सर्व प्रभुता-सम्पन्न गणतन्त्र शामिल किये गये हैं, इनमें से प्रत्येक के अपने-अपने ध्वज हैं और यद्यपि प्रत्येक ध्वज में हँसिया और हथौड़ा देखे जाते हैं पर तु हरेक में कुछ-कुछ भिन्नता है। वैसे सब का राष्ट्र ध्वज हँसिया और हथौड़े से युक्त रक्त वर्ण का है, जिसमें एक सितारा भी है। रक्त वर्ण और सितारे सभी ध्वजों में हैं केवल रिवलिसी ही इसका एक अपवाद है। मॉस्को की लम्बाकार नीली पट्टी, कीव की नीचे वाली नीली पट्टी, मिस्क की हरी पट्टी, ताशक्न्द की हरी और सफेद पट्टी—इस प्रकार सभी ध्वजाएँ अपना अपना पृथक्त्व रखती हैं, पर तु इन सबकी एकता का प्रतीक ध्वज की रक्तिमा, मजदूर और किसानों के औजार तथा प्रकाश-बिन्दु नक्षत्र है, जो समग्र सोवियत-भूमि को एक सूत्र में आबद्ध करते हैं। यहाँ का पूरा विवरण प्राप्त करने के लिये तो यहाँ के जनजीवन को निकट से देखना होगा, परन्तु थोड़े व्यक्तिगत अनुभव और अन्य व्यक्तियों के कथन भी देश-दर्शन में हमारी सहायता कर सकते हैं।

---

# मुक्ति के उपरान्त

## क्रान्ति के बाद रूस

रूस की क्रान्ति सन् १९१७ में हुई और भारतीय स्वतन्त्रता उसके तीस वर्षों बाद—सन् १९४७ में। एक प्रकार से रूस को अपने विकास के लिये पचास वर्षों का समय मिला है, जबकि भारतवर्ष को केवल बीस वर्ष का। परन्तु दोनों की स्थितियों में बहुत अन्तर है। रूस में इतनी विभिन्नताएँ रही हैं, इतनी दूरियाँ और इतने अन्तर हैं कि उसका पचास वर्षों के अन्दर एकता के सूत्र में आबद्ध हो कर विश्व के एक शक्तिशाली एवं समृद्ध राष्ट्र के रूप में अवतरित होना सोवियत-नेताओं की प्रतिभा का प्रमाण है। अभी पिछले अक्टूबर में रूसी क्रान्ति की जो पचासवीं जयन्ती मनायी गई उससे यह बात स्पष्ट हो गयी कि रूस एक महान् देश है। अक्टूबर सन् १७ की क्रान्ति ने उत्साह की जिस ज्योति को प्रकाशित किया था उसके प्रकाश से न केवल सम्पूर्ण रूस ही प्रतिभासित हुआ है वरन् उसके प्रकाश ने अन्य देशों का भी मार्ग-दर्शन किया है। समाजवादी विश्व की जो आस्था इस क्रान्ति से प्रस्थापित हुई वह आज दुनिया के बहुत से हिस्सों में उपनिवेशवाद को उखाड़ फेंकने में सफल हुई है। ५० वर्षों में रूस ने जो कुछ किया वह संसार के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना है। ७ नवम्बर १९६७ को मॉस्को के लालचौक में जो सैनिक परेड हुई उसने दिखा दिया कि रूस कहाँ तक बढ़ चुका है। इससे तीन चार दिन पहिले ही क्रेम्लिन के कांग्रेस प्रासाद में ब्रेजनेव ने वह रिपोर्ट प्रस्तुत की जो रूस की पचासवर्षीय उपलब्धियों का अच्छा विवरण देती है। यह परेड और समारोह रूस के इतिहास में अपना स्थान रखते हैं। भारत से भी प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी तथा सोवियत-भारत सांस्कृतिक सुसायिटी के अध्यक्ष के.पी.एस. मेनन इस समारोह में शामिल हुए थे।

अपनी रिपोर्ट में ब्रेजनेव ने इस बात को सामने रखा कि पचास वर्ष की इस अवधि में रूस में क्या हुआ। उन्होंने बताया कि इन पाँच दशकों में रूस एक शक्तिशाली, समाजवादी देश बन गया है। मार्क्स और लेनिन के विचार विश्व में प्रमुखता प्राप्त कर चुके हैं। मानवीय शोषण को समाप्त कर दिया गया है। किसान और मजदूरों को मान्यता मिल चुकी है। विकास के क्षेत्र में

सोवियत देश किसी से पीछे नहीं है। जातीय कलह और चरनीदन समाप्त हो चुके हैं, देश में न दोवर हैं न हरामखोर। समाज ऐसा है जिसका उद्देश्य जनता की सेवा है। सत्ता जनता के हाथ में है, सोवियत जनता के हाथ में है। यहाँ के समाजवाद ने ज्ञान और संस्कृति को आगे बढ़ा कर निरक्षरता को समाप्त कर दिया है। देश को नया जीवन मिला है। भौतिक और तकनीकी उन्नति हुई है। कृषि का विकास हुआ है। अन्य राष्ट्रों से अच्छे सम्बन्ध स्थापित हुए हैं। सोवियत बुद्धिजीवी किसी भी देश से पीछे नहीं हैं। विज्ञान में तो वे अग्रगण्य हैं। सोवियत देश के नर और नारी दोनों ही आगे बढ़े हैं, और बढ़ते जा रहे हैं। श्रम और अध्ययन के क्षेत्र में महान् प्रगति हुई है। मानवीय श्रम की महानता स्थापित हो चुकी है। रूस ने अनेक विकासशील देशों को सहायता प्रदान की है और विश्वमैत्री को सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया है, और उसकी आवाज दबती नहीं रही है बल्कि बुलन्दी के साथ सुनी जाती रही है।

## स्वतन्त्रता के उपरान्त भारत

इधर भारतवर्ष को २० वर्षों का समय मिला। देश की राजनीति और समाज-व्यवस्था में उथल पुथल हुई। अनेक शताब्दियों की दासता के उपरान्त भारत ने स्वतन्त्रता की सांस ली। महात्मा गान्धी और नेहरू के आदर्शों में वह अवतरित होने लगा। देश की एकता के लिए एक अच्छा अवसर मिला और विभिन्न इकाइयों में वितरित यह राष्ट्र एकता के सूत्र में आबद्ध हुआ। वसे सांस्कृतिक दृष्टि से अति विस्तृत होने पर भी भारत अति प्राचीन काल से एकता का अनुभव करता रहा है। इसके पूर्व और पश्चिम उत्तर व दक्षिण एक दूसरे का आलिंगन करते रहे। सांस्कृतिक और दार्शनिक धाराएँ इसे एक ऐसा बल प्रदान करती रही हैं जो भारत माता के स्वरूप को अक्षुण्ण रखने में समर्थ है, फिर भी अनेक कारणों से स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय देश कुछ विच्छिन्न सा प्रतीत होता था, जिसमें सबसे बड़ी इकाइयाँ थीं। वे देशी राज्य जो अंग्रेजी भारत से अपने को अलग समझते थे और वहाँ की जनता पर गुलामी का द्विगुणित भार था—एक वहाँ के राजा व नवाब का और दूसरा विदेशी सरकार का। विभिन्न क्षेत्रों में देश की प्रगति बहुत धीमी थी, और विकसित देशों की पंक्ति में बैठने का न साहस था और न साधन। उद्योग और शिक्षा के क्षेत्र में, विज्ञान और तकनीकी प्रांगण में देश काफी

पीछे मालूम होता था। भारतीय स्वतन्त्रता के साथ यहाँ के नेताओं पर इस बात का उत्तरदायित्व आया कि देश की स्थिति को समझा जाए, उसकी एकता की रक्षा की जाए, अभावों की पूर्ति की जाए और साक्षरता का प्रचार किया जाए। इसमें संदेह नहीं कि इन विविध क्षेत्रों में काफी उन्नति दिखाई देती है।

देश को पूरी एकता प्रदान करने का कार्य देशी राज्यों की सत्ता समाप्त करने के साथ बंधा हुआ था। एक-दो राज्यों ने कुछ विरोध प्रदर्शित किया, किन्तु प्रबल जनमत के सामने उनको नतमस्तक होना पड़ा। इसी प्रकार डच, फ्रांसिसी और पुर्तगाली उपनिवेश भी थे। इनमें से कुछ तो स्वेच्छा से, सम्मान के साथ, इन उपनिवेशों को छोड़ गये और कहीं किंचित बल का प्रयोग भी किया गया। आज सम्पूर्ण भारत एक सुसंगठित जनतन्त्र है। सरहदी मामले तो चलते रहते हैं परन्तु सबसे प्रमुख घटना जो स्वतन्त्रता के साथ घटित हुई वह देश के विभाजन की थी। इस स्थान पर यह विचार करना तो उपयुक्त नहीं होगा कि यह विभाजन उपयोगी अथवा अनुपयोगी था, किन्तु यह अवश्य है कि दोनों देशों के लिये मैत्री और सद्भावना के साथ रहना आवश्यक है। देशों में भिड़ंत भी हुई है, पर साधुवाद है सोवियत सरकार को जिसकी प्रेरणा से ताशकन्द-घोषणा हुई और ताशकन्द-भावना की नींव पड़ी।

भारत में जो संविधान निर्मित हुआ वह विश्व के संविधानों में महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इतना बड़ा, प्रजातन्त्र तो विश्व में कहीं भी नहीं है, और यद्यपि इसके संचालन में यदा-कदा कुछ कठिनाइयाँ देखी जाती हैं, किन्तु भारत की प्रगति में इसका योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। सोवियत-सरकार की तरह भारत ने भी अपनी प्रगति का कार्य योजना-बद्ध किया। तीन योजनाएँ पूरी हो चुकी हैं, चौथी योजना सामने है। देश में शिक्षा का बहुत प्रचार हुआ। अनेक शिक्षा-संस्थान खुले। विज्ञान को अग्रसर करने के लिये अनेक राष्ट्रीय प्रयोगशालाएँ निर्मित हुई। कृषि के नवीनतम साधनों को जुटाने की ओर लोग सचेत हुए और बहुत से उद्योग जारी किये गए। रेल और सड़कों में वृद्धि हुई—बिजली का उत्पादन बढ़ा। नगर ही नहीं, अनेक गाँव भी विद्युत-प्रकाश से जगमगा उठे। आयात और निर्यात बढ़े, तथा विविध देशों के साथ राजनैतिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक सम्बन्ध सुदृढ़ हुए। रूस के साथ तो भारत के ये सम्बन्ध एक ऐसी आधार-शिला पर

स्थापित हैं जो बहुत ही दृढ़ है और जिसका आभास अगले कुछ पृष्ठों में कराने का प्रयत्न किया गया है।

देश की आर्थिक व्यवस्था में भी निश्चित सुधार हुआ है क्योंकि कृषक और मजदूरों के रहन सहन और उनकी आर्थिक अवस्था पहले से काफी अच्छे हैं। वे गाव जो दारिद्र्य का नग्न स्वरूप थे आज समृद्ध प्रतीत होते हैं। सहकारिता की भावना बढ़ी है। कृषि उद्योग बढ़ा है। यह दूसरी बात है कि देश की बढ़ती हुई जनसख्या और कुछ अन्य कारण इस बढ़ती हुई प्रगति के स्वरूप को उज्ज्वल रखने में समर्थ नहीं हो सके हैं, पर इसमें शक नहीं कि योजनाओं ने देश को बढ़ाया है और लोगों को सुखी बनाने की चेष्टा की है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत ने अपना स्थान बना लिया है। उसकी बात सम्मान के साथ सुनी जाती है, और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में उसके विचार अनेक अवसरों पर पथ प्रदर्शन करते रहे हैं। भारत की विशेषता यह रही है कि वह गुटों से अलग रहा है। कुछ लोग भारत की इस नीति को उचित नहीं मानते, परन्तु देश का बड़ा भाग भारत की इस नीति का समर्थन करता है और जहाँ तक सोवियत सरकार का प्रश्न है उसे भारत की यह नीति प्रिय है। शायद भारत को इस नीति से लाभ भी हुआ है, और विकसित देशों के अनेक गुटों से उसे सहायता मिली है। भारत की उसकी अपनी समस्याएँ हैं—भाषा की समस्या, आदर्शों की समस्या, विचारों की समस्या, सरहदी समस्या तथा कुछ पड़ोसी देशों की समस्याएँ। पर तु भारतीय नेताओं ने यह स्पष्ट कर दिया कि ये समस्याएँ देश को आगे बढ़ने से रोक नहीं सकतीं। देश की आन्तरिक एकता भारत की विशिष्टता रही है, जिसका एक अच्छा दर्शन चीन तथा पाक सघर्षों के समय हुआ।

## पहले और अब

इन बातों से यह स्पष्ट होता है कि रूस और भारत दोनों ने अपने अतीत को उज्ज्वल बनाने का प्रयत्न किया है। देश में एकता स्थापित करने की चेष्टा की है, और विविध क्षेत्रों में उन्नति करने में सक्रिय कदम उठाये हैं। रूस और भारत जो पहले थे, अब नहीं हैं। उनकी कालिमा बहुत कुछ धवलित हो चुकी है, फिर भी भारत को आगे बढ़ने में अभी बहुत कुछ करना है। अनेक वर्षों से भारत को रूसी सहयोग का गौरव मिलता रहा है और आज भी विकसित

देशों का सौजन्य और सहयोग उसे उसकी अपनी नीति तथा बढ़ते हुए कदमों के कारण उपलब्ध है। हमें उस सुख-स्वप्न को साकार करना है, जब भारत के उठते कदम रूस आदि विकसित देशों के कदमों से मिलकर एक साथ आगे बढ़ें।

उपलब्धियों का इतिहास—

क्रांति से पहले रूस में निरंकुश राजशाही थी। रूस के सम्राट ज़ार असीम अधिकारों के साथ शासन करते थे। एक पार्लियामेंट जैसी संस्था थी अवश्य, लेकिन उसमें पूंजीपति तथा जमींदारों का ही बोलबाला था, मजदूरों तथा किसानों का प्रतिनिधित्व नहीं था। रूस की मेहनतकश जनता पर पर्दा पड़ा हुआ था। रूसी साम्राज्य में अनेक कौमें बसती थीं पर सभी अत्याचार की शिकार थीं। सभी जगह उत्तरदायित्व के पदों पर रूसी अधिकारी नियुक्त किये जाते थे। अन्य जातियों का कोई स्थान नहीं था। धर्म के संबंध में भी उनको छूट नहीं थी। मेहनती जनता का खून चूसा जाता था, और ज़ार के अत्याचार विश्व में प्रसिद्ध हो चुके थे। उद्योग, शिक्षा आदि की दृष्टि से रूस बहुत पिछड़ा हुआ था। किसानों के पास जमीन के छोटे छोटे टुकड़े थे जो उन्हें भरपेट खाना भी नहीं दे सकते थे। कृषि के साधन भी पुराने जमाने के थे। किसानों की हालत पशुओं जैसी थी। बड़े जमींदार उन पर अत्याचार करते थे। शोषित, अपमानित अधिकार, से वंचित किसानों की हालत दरिद्र भिखारियों जैसी थी। और यही हाल था रूस के मजदूर वर्ग का। पूंजीपति उनका खून चूसते थे, उद्योगों में अधिकतर विदेशी पूंजी थी। रूस में शिक्षा कुछ शिक्षा भले ही थी, किन्तु किरगीज, तुर्कमान और उज्बेक जातियां निरक्षर थीं।

कोई भी देश इस प्रकार की स्थिति में अधिक दिन तक नहीं रह सकता। पूंजीवाद के प्रति आवाज बुलंद हुई, क्रांति का संदेश गूंजा। निकोलस द्वितीय को अपने अधिकार बचाने की चिन्ता होने लगी, पर जनता की क्रांति को पूंजीपति नहीं रोक सके। रूस की कम्युनिस्ट पार्टी मैदान में आई, उसकी सदस्य संख्या बढ़ने लगी। लेनिन ने उत्तरदायित्व संभाला कि किस प्रकार रूस को जारशाही से बचाया जाए और उसे अपने पैरों पर खड़ा किया जाए। सन् १९१७ की शरद में क्रांतिकारी भावना चरम पर्व पहुँच चुकी थी। रूस और मानवता के इतिहास में २५ अक्टूबर और नये कलेण्डर के अनुसार ७ नवम्बर

एक गौरवपूर्ण दिवस है। इस दिन रूसी जनता ने पूंजीपतियों की सरकार को उखाड़ कर फेंक दिया, और सोवियत राज्य का निर्माण शुरू हुआ।

## मजदूर और किसान

इस क्रांति में मजदूर वर्ग को राजनैतिक दृष्टि से शिक्षित और दीक्षित करने का जो काम लेनिन ने किया वह अभूतपूर्व है। लेनिन एक क्रांतिकारी ही नहीं थे वरन् अनुपम संगठनकर्त्ता व कुशल राजनीतिज्ञ भी थे। लेनिन के बारे में कहा गया है कि वह जिस किसान से बातें करते उसके इतने नज़दीक बैठते कि दोनों के घुटने स्पर्श करते। वे इस प्रकार आगे की ओर झुकते कि वे ऐसा करके ज्यादा अच्छी तरह सुन सकें। दोस्ताना ढंग से मुस्कराते हुए वे सवाल पूछते, और बिल्कुल सादे ढंग से आदेश देते। विदा होते समय कोई भी किसान या मजदूर प्रसन्न मुद्रा में यह कहता सुना जा सकता था कि यह है हमारा सच्चा नेता। यही कारण है कि लेनिन का नाम न केवल रूस में वरन् संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हो गया। वे आधुनिक रूस के निर्माता हैं, और इसी रूप में सदा याद किया जाता है। सोवियत राज्य के संस्थापक इस महान् नेता ने इस बात की सर्वदा चेष्टा की कि किसी भी अवसर पर समझौते का सिद्धान्त उपयोगी होता है, पर इसमें वे व्यक्ति की क्षमता को भी स्थान देते हैं।

२६ अक्टूबर की क्रान्ति ने जमीन किसानों को दिलाई। इस फरमान पर लेनिन के हस्ताक्षर थे। गान्धी जी का यह कहना काफी पहले चरितार्थ हो चुका था 'जमीन किसकी, जोतै उसकी'। इसी प्रकार सोवियत राज्य ने मजदूरों की मांगें भी पूरी कीं। उनका कार्य दिवस आठ घंटे का हुआ और छोटी उम्रवालों के लिये छः घंटे का। बच्चों को मजदूरी करने की मनाही की गई। इन्हीं दिनों रूस की विभिन्न कौमों के अधिकार के सम्बन्ध में भी एक घोषणा-पत्र जारी किया गया। इस घोषणा-पत्र में कहा गया कि कौमों की असमानता की व्यवस्था को समाप्त किया जाता है, और सभी कौमों के स्वैच्छिक तथा निष्ठापूर्ण संघ की स्थापना की जाती है। कौमी तथा मजहबी विशेषाधिकार समाप्त कर दिये, और सभी को मुक्त विकास का अवसर मिला। राजकीय सेवा में भी पद और पदवियाँ समाप्त करदी गईं। सबके अधिकार समान हो गये। राज्य का चर्च से कोई सम्बन्ध नहीं रहा, चर्च ही इस बात का प्रचार करता था कि जार की ताकत दैवी है और

उसकी आज्ञा न मानना पाप है। यह भी कहा जाता था कि पृथ्वी पर का नरक स्वर्ग के सुखों की खातिर सहन करना चाहिये। जनता की बौद्धिक शिक्षा का नियंत्रण चर्च के हाथों था और धार्मिक शिक्षण अनिवार्य था। पर क्रांति के उपरान्त राज्य तथा स्कूल को चर्च से अलग कर दिया गया। हर व्यक्ति को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता मिली। हर नागरिक स्वेच्छा से कोई भी मजहब रख सकता है, अपना सकता है, और चाहे तो मजहब से अलग भी रह सकता है। धार्मिक शपथों को भी नहीं माना गया। मजहबी शिक्षा पर रोक लगायी, पर साथ ही नैतिकता की ओर ध्यान दिया गया।

## नारी

भारतवर्ष में नारियों की दशाओं में बहुत परिवर्तन देखे गये हैं। एक समय था जब नारियों को सभी अधिकार प्राप्त थे, उनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध था, धार्मिक कृत्यों में उनका अधिकार था। और गृह-स्वामिनी के रूप में उनकी प्रतिष्ठा थी। अनेक ज्ञान-विज्ञानों से युक्त कुछ नारियाँ बहुत उत्कृष्ट कोटि की थीं, और उनके पातिव्रत्य ने तो समग्र संसार को निरन्तर चमत्कृत किया है। लेकिन एक ऐसा भी समय आया जब उनका पद पुरुषों से नीचा समझा जाने लगा। उनकी शिक्षा पर प्रतिबंध लग गया, उनका व्यक्तित्व अपहृत हो गया। दासता की बेड़ी में जकड़ी हुई यह नारी केवल विलास की वस्तु समझी गई, उसको पशु की संज्ञा दी गई, दोषों से परिपूर्ण बताया गया और समाज में अधिकार से हीन रखा गया। अब समय बदला है। नारियों को समान अधिकार मिले हुए हैं। वयस्क मताधिकार में वे पुरुष के समकक्ष हैं। उनकी शिक्षा का समुचित प्रबंध है, और जीवन के सभी क्षेत्रों के द्वार उनके लिये उन्मुक्त हैं। जारकालीन रूस में भी नारी की स्थिति घोर अपमानजनक थी। राजनीति में उनके अधिकार न थे। कम पारिश्रमिक मिलता था, और उच्च विद्यालयों में प्रवेश अवरुद्ध था। किन्तु सोवियत राज्य ने उन्हें पुरुष की समकक्षता प्रदान की। शिक्षा के सभी द्वार उनके लिए खोल दिये गए। मताधिकार भी प्राप्त हुआ। एक सब से बड़ी बात यह हुई कि सोवियत राज्य ने विवाह तथा बिना विवाह जन्म लेने वाले बच्चों को समान अधिकार दिए। बच्चों के लिए शिशु-शालाएँ खोली गईं। लेनिन ने तो यहाँ तक कहा था कि सोवियत राज्य ने अपने चंद माह के समय में नारी के हितार्थ जो काम किया वह अन्य किसी राज्य ने नहीं किया।

अर्थ व्यवस्था

सोवियत सरकार की अर्थ व्यवस्था विशिष्ट प्रकार की है। एक ओर जहाँ सभी बैंकों को मिला कर राष्ट्रीय बैंक की स्थापना की वहाँ दूसरी ओर जार ने विदेश और आंतरिक स्रोतों से जो कर्ज लिया था और जो २०० अरब रुपयों से भी ज्यादा था तथा जिसका ब्याज प्रति वर्ष अरबों रुपया दिया जाता था वह सब अवैध घोषित कर दिया गया। वास्तव मे यह बहुत बड़ा काम था और उसके लिये सोवियत सरकार को भारी विरोध का सामना करना पड़ा। पर इस निर्णय ने राज्य की आर्थिक व्यवस्था को बहुत बल प्रदान किया। उद्योग का भी राष्ट्रीयकरण किया गया और उन सभी उद्योगों पर श्रम नियंत्रण की स्थापना की जिनमें लोग मजदूरी पर काम करते थे। माल तैयार करने वाले कारखाने तथा मालिकों और सरमायादारों ने जोर तो बहुत लगाया किन्तु उनकी एक न चली और अंत मे सरमायादारों पर लाल प्रहरी का प्रभुत्व स्थापित हो गया। रेलों का भी राष्ट्रीयकरण हुआ।

इस राष्ट्रीयकरण के मूल मे यह भावना थी कि लाखों करोड़ों मेहनती लोगो को अपनी योग्यता और प्रतिभा का परिचय देने का पूरा मौका मिले। श्रम उत्पादिता बढ़ाने के लिए लेनिन की पंचसूत्रीय योजना थी—

(१) भारी उद्योगों के विकास को प्राथमिकता दी जाए। उत्पादन का बिजलीकरण किया जाए और तकनीकी प्रगति को आगे बढ़ाया जाए। बिजली के संबंध मे तो लेनिन का कहना था कि इसका उद्योग मे वही स्थान है जो समाज में साम्यवाद का।

(२) सांस्कृतिक स्तर और मजदूरों की तकनीकी योजना को ऊंचा उठाया जाए।

(३) कल कारखानों में राज्य अनुशासन और श्रम अनुशासन को कड़ाई के साथ कायम किया जाए और जो इनका उलंघन करे, उन पर सख्ती की जाए।

(४) मजदूरों के लिये आर्थिक प्रेरणाओ के सिद्धांत पर अमल किया जाए ताकि श्रम उत्पादकता बढ़ाने में उनकी दिलचस्पी हो। श्रमिक की मेहनत और तैयार किये गये माल पर तादाद और किस्म के आधार पर भुगतान किया जाए।

(५) नैतिक प्रेरणा।

सन् १६१७ में ही यह घोषित कर दिया गया था कि जब साम्यवाद विजयी हो जाएगा तो वह मजदूरों के श्रम-संगठनों के अधीन काम करने के लिये अर्थशास्त्री, इंजीनियर और कृषि-विशारद् नियुक्त करेगा। मजदूरों के इन संगठनों के जिम्मे योजना तैयार करने, जांच-परक करने तथा श्रम बचाने के तरीकों को मालुम करने का काम होगा।

## गृह-युद्ध

भारत सन् १६४७ में आजाद हुआ, और २६ जनवरी १६४० से उसके संविधान का शुभारंभ हुआ। अक्टूबर की क्रांति के बाद जुलाई १६१८ में सोवियतों की पांचवीं कांग्रेस हुई और उसमें पहला सोवियत संविधान बनाया। संविधान ने ऐलान किया कि जनतंत्र के सभी नागरिक काम करें, जो काम नहीं करेगा उसे भोजन नहीं मिलेगा। अनिवार्य फौज सेना भी चालू हुई। वयस्कों को सोवियतों में प्रतिनिधि चुनने और खुद चुने जाने का अधिकार दिया गया जिसमें जाति, वंश, शिक्षा, स्त्री या पुरुष होना कोई अर्थ नहीं रखते थे। सोवियत रूस को बहुत कुछ विरोध का सामना करना पड़ा। लगभग ३ साल तक वह गृह-युद्ध की अग्नि में झुलसता रहा। इस गृह-युद्ध में विदेशियों का भी हाथ था। सन् १६२० में यह गृह-युद्ध समाप्त हुआ, किन्तु सीमांत भागों में तो १६२२ तक चलता रहा। साम्राज्यवादी नहीं चाहते थे कि रूस का समाजवादी अस्तित्व बना रहे। वे इस देश को भी खंडित करना चाहते थे। कुछ की योजना थी कि पूरा रूस बड़े-बड़े प्राकृतिक प्रदेशों में बांट दिया जाए। सोवियत जनतंत्र इस प्रकार से घिर गया कि अनाज और कच्चा माल प्राप्त करने की घोर समस्या उत्पन्न हो गई। उसका जीवन ही खतरे में पड़ गया। उधर, जारकालीन फौजों के गद्दार भी अपना योगदान दे रहे थे। रूस ने इस स्थिति का धैर्य के साथ मुकाबला किया और गृह-युद्ध की समाप्ति की। ३ वर्षों तक घमासान लड़ाई हुई पर सोवियत फौज ने वीरता का परिचय दिया। सोवियत जनता की अमर विजय ने अपनी शक्ति की सत्ता स्थापित कर दी। पर क्षति बहुत अधिक हुई और जब रूस युद्ध से बाहर निकला तो उसके चारों ओर बरबादी थी।

इस गृह-युद्ध के अनेक राजनैतिक और सामाजिक परिणाम निकले। पहली बात यह हुई कि सोवियत रूस ने अपनी शक्ति की धाक जमा दी। दूसरी बात यह है कि जमींदार और पूंजीपतियों का आतंक सदा के लिये लुप्त हो गया। जो सर्वहारा वर्ग अधिकारों से वंचित था, अत्याचारों का शिकार था और बुरी तरह शोषित था वही एक ऐसा वर्ग बन गया जो सब प्रकार से स्वतन्त्र था, जिसकी सृजनात्मक शक्तियाँ उन्मुक्त थीं। किसानों की जिन्दगी बदल गई समाज का ढाँचा स्थिर हो गया, पर यह सब तब हुआ जब ५० हजार कम्युनिस्टों ने अपने प्राणों की आहुति दे दी।

## शोषक और शोषित भावना का अन्त

यह स्वाभाविक है कि पीड़ित जनता ऐसा समाज चाहती है जहाँ न कोई पीड़ित हो और न पीड़क, न शासक हो और शासित, न भुखमरी हो न अकाल—चारों ओर प्रचुरता और सन्तुष्टि हो। सोवियत राज्य ने इस काम को तेजी से आगे बढ़ाया। मजदूर वर्ग शोषण से ही मुक्त नहीं हुआ, वह अपने भाग्य का निर्माता भी बन गया। इसी तरह किसानों की हालत भी बदली, और उनका भौतिक तथा सांस्कृतिक स्तर भी ऊँचा उठा। शिक्षा के क्षेत्र में तो २० ही वर्षों में ही शिक्षितों की संख्या ७१% से अधिक हो गई, इनके बीच नए बुद्धिजीवी वर्ग का विकास हुआ जो जनता का अपना था। दो ही पंचवर्षीय योजनाओं में समाजवादी खेतों की स्थापना हो गई, कृषि का ढाँचा बदल गया, मशीनें और औजार खेती को बढ़ाने लगे। सहकारिता ने किसानों के स्तर को ऊँचा उठाया। इन योजनाओं के अन्तर्गत देश में शिक्षा तेजी के साथ बढ़ी। पहिले उच्चतर शिक्षा के संस्थान बहुत कम थे, पर सोवियत सत्ता ने शिक्षा-संस्थानों की संख्या को दर्जनों गुना बढ़ाया। उधर कला के क्षेत्र में प्रगति हुई, थियेटरों की संख्या बढ़ी, जहाँ दो थियेटर थे वहाँ ४० हो गये, जहाँ एक भी नहीं था वहाँ दर्जनों खुल गये। बच्चों के लिये भी कल्याण-केन्द्र खुले, और चिकित्सा की भी निःशुल्क सेवा मिलने लगी। परिणामस्वरूप रहन सहन के स्तर में उन्नति हुई, काम करने के नियम बने, स्वास्थ्य-सेवा की व्यवस्था हुई, उद्योग बढ़े और बेकारी समाप्त होती दिखाई दी। राष्ट्रीय आय तो लगभग छः गुनी बढ़ गई। सोवियत राज्य ने समाजवादी निर्माण के सहारे एक नये मानव का विकास किया जिसकी मनोवृत्ति नई है, जिसमें समाज-

वादी विचारों के प्रति निष्ठा है, जनता से प्रेम है, मातृभूमि से प्यार है, शान्ति की सद्भावना है, साथ ही हिम्मत, बहादुरी, दृढ़ता और सामूहिकता की भावना से युक्त सुसंस्कृत दृष्टिकोण है।

## द्वितीय विश्व-युद्ध

सोवियत राज्य ने विश्व का दूसरा बड़ा युद्ध भी देखा है। वह इसमें उलझा भी रहा, बड़ा त्याग किया। यह एक ऐसा खतरा था जिसमें यदि जनता सम्मिलित वाहिनी प्रस्तुत नहीं करती तो उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता, पर सोवियत फौजों ने फासिस्ट सेना को अपने देश से खदेड़ दिया, और १६४५ की ६ मई को बर्लिन में अपनी विजय-पताका फहराई। यह तब सम्भव हुआ जब हर आदमी युद्ध-प्रयास में संलग्न रहा, उसमें सर्वदा यह दृढ़ भावना रही—हम न्याय के लिये लड़ रहे हैं, विजय हमारी ही होगी। कितनी प्रचुर मात्रा में सोवियत उद्योग ने मोर्चे पर सामान भेजा। उसके कुछ अंक तो हमें आश्चर्यचकित कर देते हैं, जैसे ४ लाख ४६ हजार तोपें, १ लाख ३६ हजार हवाई जहाज, १ लाख २ हजार टैंक। कड़ी मेहनत के साथ देश के अन्दर काम किया गया, और प्रत्येक नागरिक ने एड़ी-चोटी का पसीना एक कर विजय-श्री प्राप्त की।

## यु के उपरान्त

युद्ध के बाद उद्योगों का तेजी के साथ विकास हुआ, कृषि का पुनरुत्थान हुआ, नई मशीनें और ट्रैक्टर बढ़े और फसलों का क्षेत्र विस्तृत हुआ। इस विकास के साथ-साथ देश में खुशहाली बढ़ी, शिक्षा तथा संस्कृति के जो संस्थान नष्ट-भ्रष्ट हो गये थे उनका पुनर्निर्माण किया। १६४७ से तो सोवियत विज्ञान की प्रचण्ड प्रगति ने संसार को आश्चर्य में डाल दिया। १६४६ में ऐटमिक और १६५३ में विश्व का पहिला उद्जन बम्ब विस्फोट किए गए। इस प्रकार युद्ध और विज्ञान के क्षेत्र में रूस की प्रभुता स्थापित हो गई। इसी बीच भौतिक विज्ञान, रसायन-शास्त्र, भूतत्व शास्त्र, जीव-विज्ञान, इन्जीनियरिंग आदि में व्यापक काम जारी रहा। सोवियत विज्ञान ने ब्रह्माण्डीय किरणों और प्रोटोन की संरचना का अध्ययन करने में तथा इलैक्ट्रोनिक प्रक्रियाओं के शोध-कार्य में महान् आविष्कार किये। १६५५ के

बाद विकास के कार्य मे जितना कार्य किया गया वह प्रशंसनीय है। रूस में जिस लोहे के पर्दे की बात कही जाती थी वह धीरे धीरे नष्ट होने लगा। सभी क्षेत्रों मे उन्नति हुई, बड़े बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान, शक्तिशाली जल-विद्युत केन्द्र, ऐटमी स्टेशन, गैस, तेल और कोयला के उत्पादन, लोहा और इस्पात के उद्योग, रसायन और इन्जीनियरिंग, जलयान और वायुयान, शस्त्रास्त्र—सभी में महती वृद्धि हुई। ३५ लाख किलोवाट की क्षमतावाला ब्रातस्क का जल विद्युत स्टेशन दुनिया में सबसे बड़ा स्टेशन है। कुल मिलाकर विद्युत स्टेशनों की क्षमता १२ करोड़ ५० लाख किलोवाट है। शायद १९४० के मुकाबिले दर्जनों गुना उत्पादन बढ़ा हो। गैस और तेल का उत्पादन तो और भी अधिक बढ़ा, कोयले के उद्योग में तीव्र प्रगति हुई है। जार्जिया तथा अजरबैजान के इस्पात-कारखाने विशाल क्षमताएँ रखते हैं। रूस के टर्बाइन कारखाने दुनियाँ में सबसे अधिक शक्तिशाली हैं। परिवहन के साधनों में रेल की पटरियाँ १ लाख ४० हजार किलोमीटर में बिछी हुई हैं। बिजली की रेलें भी बहुत लम्बी हैं, लगभग ८० हजार किलोमीटर। मॉस्को से बैकाल झाड़ये, पाँच हजार किलोमीटर तक बिजली की रेल मिलेगी। रेलगाड़ियों की गति भी १६० किलोमीटर है। भूगर्भ रेलों की बात तो पहिले ही कही जा चुकी है शायद दुनियाँ मे सबसे अधिक शानदार।

## अन्तरिक्ष में

अन्तरिक्ष यात्राएँ रूस के जीवन का अंग बन चुकी है। सबसे पहला अन्तरिक्ष यात्री गागारीन (अब स्वर्गीय) विश्व मे प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है, और तीतोव, लियोनोव आदि अनेक अन्तरिक्ष-यात्री प्रसिद्ध हो चुके हैं। जहाँ गागारीन ने १०८ मिनिट तक अन्तरिक्ष मे पृथ्वी की परिक्रमा की थी, वहाँ कई अन्य सोवियत जनों ने अनेक बार पृथ्वी की परिक्रमाएँ लगाईं। १९६६ में लूना ९ वायुयान चाँद पर उतर चुका है। अन्तरिक्ष की दौड़ में रूस कितना आगे बढ़ सकता है, इस को कोई भी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

## समाजवाद

सोवियत संघ ने समाजवाद के आर्थिक और तकनीकी आधार का विस्तार किया है। आज दो ही शक्तियाँ मानी जाती हैं, जिनमे एक सोवियत राज्य है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में धीरे धीरे एक परिवर्तन सा दिखाई दे रहा है जिसमे

समाजवाद और पूंजीवाद के बीच शक्तियों के सन्तुलन में मूलभूत बदलाव दिखाई देता है। एशिया और अफ्रीका के अनेक राज्यों ने समाजवाद को अपनी नीति घोषित किया है। उपनिवेशी प्रणाली के ह्रास ने पूंजीवाद के संकट को और बढ़ा दिया है, और ऐसा प्रतीत होता है कि दुनियां में समाजवाद को नष्ट करना संभव नहीं। कहा तो यह गया था कि साम्यवादी सोवियत राज्य कुछ हफ्तों का महमान था पर अब तो मजदूर और किसानों की खुशहाली का प्रतीक यह राज्य चट्टान की तरह मजबूत खड़ा है। ५० वर्ष की लघु अवधि में सोवियत राज्य ने देश का चेहरा इस तरह बदल दिया है कि पहिला उस समझ में ही नहीं आता। सोवियत जनों ने व्यवस्थित राजनीतिक प्रणाली, संतुलित सामाजिक और आर्थिक ढांचा, उत्पादक शक्तियों का विकास और जातियों के बीच सांस्कृतिक स्तरों की समानता लाकर महान् कार्य किया है। इसमें तो सन्देह नहीं कि सोवियत राज्य ने विश्व के अनेक देश और जनसमूह को अपनी योजनाओं से, अपने विचार और उपलब्धियों से अपनी ओर आकर्षित किया है और भारत का आदर्श भी एक समाजवादी समाज की स्थापना है, यद्यपि भारत का समाजवादी समाज एक दूसरे ही प्रकार का है और इसकी समुचित व्याख्या अभी तक नहीं हो चुकी है। कई बार तो ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं कि क्या भारत 'लाल' हो रहा है अर्थात् क्या भारत साम्यवाद की ओर झुक रहा है? इन प्रश्नों का उत्तर भारतीय विचारकों ने दिया है पर यह विचारधारा हमारे देश में भी शक्तिशाली हो चली है कि धन का वितरण इतनी विषमता के साथ न हो। वेतनों में इतना अन्तर न हो। कमरे के अन्दर बैठने वाला व्यक्ति दस हजार रुपया पाता है और बाहर बैठने वाला चपरासी सौ रुपया। किसी का भवन इतना विशाल है कि सारे कमरों की उसे जानकारी ही नहीं, और कोई अपना सम्पूर्ण जीवन आकाश-तले ही बिता देते हैं। कोई दिन में तीन बार अपने वस्त्र बदलते हैं, और किन्हीं को चिथड़े भी उपलब्ध नहीं होते। किसी के भोजन का मीनू छः भागों में विभक्त है, और किसी को पत्ते चाट कर सन्तोष करना पड़ता है। देश में यह जागृति आ गयी है और इसके मूल में साम्यवादी विचार-धारा बताई जाती है। आधुनिक साहित्य भी इससे प्रभावित है।

## सहयोग के पथ पर

### विकसित और विकासशील

संस्कृत की एक उक्ति है, जिसका अभिप्राय है कि प्रतिभाशील व्यक्ति अन्य लोगों को भी साथ रखते हुए आगे बढ़ते हैं, क्योंकि और लोगों का आगे बढ़ना प्रतिभाशील की उन्नति में सहायक होता है और प्रगति को स्थायित्व प्रदान करता है। इसी उक्ति को चरितार्थ करते हुए आज के युग में यह एक मान्य सिद्धान्त है कि विकसित देश विकासशील देशों को अपने साथ लेकर चलें, सभी प्रकार का सहयोग प्रदान करें और उनके पिछड़ेपन को दूर करने की यथासाध्य चेष्टा करें। यू एन ओ के अंतर्गत भी इस प्रकार की परिषदें हैं, जिनके द्वारा विकास कार्य आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है। द्रव्य, सामग्री, प्रशिक्षित कर्मी, वैचारिक सहयोग आदि अनेक रूपों में सहायता दी जा सकती है। हमारा देश भी अभी विकासशील देशों की श्रेणी में है। कभी २ हम इसे अपना दुर्भाग्य समझते हैं, परन्तु परिस्थितियाँ कुछ ऐसी रहीं कि देश विकसित नहीं हो सका, अंग्रेजों के शासन-काल में भी इसकी विकास-प्रगति अवरुद्ध ही रही। यह अंग्रेजी नीति ही कहिए कि भारत इतना पिछड़ा रह गया, अन्यथा अंग्रेजों द्वारा शासित कई अन्य देशों ने काफी उन्नति की है। पिछले दिनों जब मैं जापान गया तो लौटते समय हांगकांग और कोलून को देखा। वहाँ के विशाल भवन, स्काइस्क्रेपर, व्यवस्थित वृत्ताकार होटल, समृद्ध बैंक, भरे हुए बाजार, चौड़ी-चमचमाती सड़कें, शिक्षा का प्रतिशत, वैज्ञानिक और अन्य संस्थान, यातायात के साधन, लोगों के रहन-सहन आदि को देखा तो मुझे वह एक विकसित देश ही लगा। पर भारत में यह सब नहीं हो सका।

रूस को एक विकसित देश होने का गौरव प्राप्त है। क्रांति के पश्चात् पचास वर्षों की अवधि में उसने बहुत उन्नति की है और वह इस स्थिति में है कि अन्य देशों की सहायता कर सके। वहाँ के अर्थशास्त्रियों ने इस बात का भी अध्ययन किया है कि विकासशील देशों का ढांचा क्यों ढीला रहा है। उनकी मान्यता है कि आर्थिक सहायता देना आसान है, परन्तु विकास के उच्चतम बिन्दु तक पहुँचाना कठिन है अतः सोवियत राज्य की यह नीति रही है कि सहयोग का ऐसा मार्ग अपनाया जाए जिसमें स्थायित्व का गुण

हो। यह कहना ठीक नहीं कि सोवियत संघ केवल साम्यवादी देशों को ही सहायता देता है, इसका सबसे बड़ा अपवाद तो हमारा देश ही है। दमित्री देग्रियार का कथन है कि सोवियत संघ इस समय ४७ देशों को आर्थिक और तकनीकी सहायता देता है, इन ४७ देशों में केवल १२ देश ही समाजवादी हैं। सोवियत-संघ विदेशों में औद्योगिक प्रतिष्ठान तथा अन्य योजनाओं में निर्माणार्थ हर प्रकार की सहायता प्रदान करता है—तकनीकी एवं आर्थिक आधार के निर्धारण से आरंभ कर परियोजना-संबंधी सर्वेक्षणों, उनके साज-सामान उपलब्ध करने, विशेषज्ञों के भेजने, मशीनों को फिट करने तथा उनका परीक्षण करने में विविध प्रतिष्ठानों को सहायता देता है। सहायता के साथ-साथ इस बात पर जोर दिया जाता है कि श्रमिक और टेकनीशियन रूस जाकर प्रशिक्षण प्राप्त करें। वैसे रूस की सहायता इतनी उदार नहीं है, जिसका दुरुपयोग किया जा सके। आर्थिक सहायता प्रायः दीर्घकालीन ऋण के रूप में दी जाती है, जिस पर कुछ ब्याज भी देना होता है। प्रायः, बारह बराबर किश्तों में रकम चुकानी पड़ती है और लगभग ढाई-तीन प्रतिशत वार्षिक का ब्याज देना होता है।

### सहयोग का स्वरूप

सोवियत संघ ने विकासशील देशों को अनेक रूपों में सहायता दी है। संयुक्त अरब गणराज्य में रूसी सहायता से निर्मित अस्वान बाँध, शायद, अफ्रीका का सबसे बड़ा बाँध होगा, इससे प्रति वर्ष १० अरब किलोवाट बिजली उत्पादित होगी और सिंचाई में ३० प्रतिशत की वृद्धि होगी। इसी प्रकार अफगानिस्तान में काबुल से शिरखान तक हिन्दुकुश को पार करते हुए एक प्रशस्त राजपथ के द्वारा लगभग एक तिहाई दूरी कम हो गई है। ६८० किलोमीटर लम्बे इस राजमार्ग का उद्घाटन लगभग २ वर्ष पूर्व हुआ, यह मार्ग कठिन पर्वतीय और रेगिस्तानी भूमि से गुजरता है। इसने न केवल अफगानिस्तान के ६ प्रान्तों को ही एक दूसरे तक मिलाया है, वरन् उसे सोवियत संघ से भी जोड़ दिया है। ईरान को भी कई योजनाओं में सहायता दी है, जैसे इस्पात का कारखाना, मशीनों का कारखाना, १००० किलोमीटर लम्बी गैस-पाइप लाइन। तुर्की में भी ७ लाख टन इस्पात बनाने वाला कारखाना खुलेगा, साथ ही ३० लाख टन की क्षमता का तेल-शोधक प्रतिष्ठान

भी होगा। गिनी, इण्डोनेशिया, बर्मा, इथोपिया आदि में अनेक सहस्र विद्यार्थियों के लिए टेकनिकल ट्रेनिंग की व्यवस्था की जा रही है। कम्बोडिया, ट्यूनीशिया और माली में भी ऐसे संस्थान योजनागत हैं। भूगर्भीय सर्वेक्षण, स्कूलों का निर्माण, स्वास्थ्य सेवा कार्य, रसायन तथा डाक्टरी यन्त्रों का उत्पादन आदि में भी समुचित सहयोग दिया जाता है। कुछ देश सोवियत संघ पर यह आरोप लगाते हैं कि यह सब सहायता और सहयोग साम्यवादी विचारों के प्रचारार्थ दिए जाते हैं उधर सोवियत संघ यह कहता है कि साम्राज्यवादी देश सहायता देकर उपनिवेशवाद को कायम रखना चाहते हैं। यह देश विशेष के अपने विचार हैं। जहाँ तक सोवियत संघ का प्रश्न है हम यही कह सकते हैं कि वह अपने ढंग से सहयोग प्रदान करता है।

### भारत के प्रति दृष्टिकोण

भारत के प्रति सोवियत दृष्टिकोण मैत्री और उदारता का रहा है। भारत के अनेक व्यक्ति रूसी संस्थानों में प्रशिक्षित हो चुके हैं और अब भी काफी संख्याओं में उधर जाते हैं। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में सोवियत सहायता की मात्रा काफी मूल्यवान रही है। एक प्रकार से भारत की पंचवर्षीय योजनाओं का स्वरूप बनाने में रूस की योजनाएँ भी सामने रही हैं। महान् क्रान्ति के पश्चात् यह आवश्यक हुआ कि देश में समाजवादी व्यवस्था तो स्थापित हो ही परन्तु देश को आगे भी बढ़ाया जाए, और यह क्रिया योजनाबद्ध हो। सोवियत योजनाओं का आरम्भ सन् १६२८ से हुआ और ३० वर्ष की लघु अवधि में ६ पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इतनी उन्नति हुई कि उसका स्थान विश्व के समृद्ध राष्ट्रों में अग्रगण्य होगया। पहली पंचवर्षीय योजना केवल ६४० लाख रूबलों की थी जो ६ठी योजना में बढ़ कर ६६ लाख रूबलों हो गई। १६२६ में सप्तवर्षीय योजना प्रारम्भ हुई और परिणाम बहुत सतोषप्रद निकले—औद्योगिक उत्पादन ८४ प्रतिशत बढ़ा, कृषि में ७० प्रतिशत वृद्धि हुई तथा राष्ट्रीय आय ६५ प्रतिशत बढ़ी और सभी पिछड़े हुए प्रान्त विकसित होगए। इस योजना की पूर्ति में तरुणों का योगदान विशेष रूप से था। विज्ञान की उपलब्धियों का तो कहना ही क्या? साईबेरिया और मध्य एशिया भी बहुत आगे आगए। मजदूरों की आमदनी में १५० प्रतिशत की वृद्धि हुई और किसानों की आमदनी तीन गुनी हो गई। उपभोक्ता सामान के उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है। इन के साथ ही गीत, संगीत और नृत्य

तथा अन्य कलाएं विकसित हुईं। रूस की अगली पंचवर्षीय योजना १९७० तक चलेगी, इसमें उद्योग और कृषि की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

रूस के आर्थिक विकास से भारत को भी प्रेरणा मिली है, और यद्यपि दोनों की अनेक आधारभूत बातों में असमानता है, फिर भी भारत ने योजनाबद्ध प्रगति के मार्ग को स्वीकार किया—उसकी तीन पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो चुकी हैं, और चौथी सामने है। भारत की योजनाओं में सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों को महत्व दिया गया है। भारतीय गणतंत्र का आदर्श 'समाजवादी समाज की स्थापना' है, अतः सोवियत संघ की योजनाओं का स्वरूप बहुत मूल्यवान सिद्ध हुआ है। सच तो यह है कि भारतीय अर्थतंत्र के विकास में सोवियत संघ और भारत का सहयोग बहुत आवश्यक बन गया है। सोवियत संघ ने भारत को लगभग ४०० करोड़ रुपए की सहायता दी जिनसे मशीन तथा अन्य उपादान उपलब्ध किए जा सकें। रूसी सहायता की एक विशेषता यह रही है कि वह किसी भी योजना को पूर्ण रूप में प्रदान करता है—द्रव्य, मशीनें, विशेषज्ञ आदि। अनेक योजनाएं सामने हैं—भिलाई का इस्पात-कारखाना, अंकलेश्वर के तेल-क्षेत्र, निवेली का विद्युत-संस्थान, बम्बई की तकनीकी संस्था, कलकत्ते की फाइल-फैक्ट्री, सूरतगढ़ का यांत्रिक-कृषि-फार्म, बरौनी का तेल-शोधक कारखाना, बोकारो का इस्पात कारखाना, हरिद्वार तथा ऋषिकेश के विद्युत एवं एण्टीबायोटिक कारखाने, ४-५ अन्य कृषि-फार्म, राँची का भारी मशीनों का कारखाना, दुर्गापुर का कोयला उद्योग आदि।

## भिलाई-कारखाना

लौह-धातुकर्म के क्षेत्र में सोवियत सहयोग भिलाई के इस्पात कारखाने में अभिलक्षित होता है। रूस को इस पर नाज है, और रूसी नेता के 'भिलई! भिलाई!!' शब्द इसका प्रमाण हैं। जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत के आर्थिक विकास का जो नक्शा तैयार किया गया उसमें इस्पात और लौह उद्योग का प्रमुख स्थान था। सोवियत संघ ने भारत सरकार के इस इरादे को बल प्रदान किया, और सन् १९५५ के फरवरी मास में १० लाख टन वार्षिक क्षमता वाले कारखाने की स्थापना के लिए एक ऐतिहासिक समझौते पर हस्ताक्षर हुए। सन् १९६१ में यह कारखाना पूरा हुआ, १९६६ में इसकी क्षमता २५ लाख टन वार्षिक हुई और चौथी पंचवर्षीय योजना के

मत मे यह ३० लाख टन हो जाएगी। भिलाई का कारखाना भारत सोवियत मैत्री का प्रतीक बना, और इसके उपरान्त सहयोग अधिकाधिक बढ़ने लगा। भिलाई ने अनेक रिकार्ड तोड़े हैं, और इसके सगठन मे भारतीय तथा सोवियत विशेषज्ञों का जो घनिष्ट सहयोग रहा है वह किसी की भी प्रशंसा का पात्र हो सकता है। एक अमेरिकन ने बताया कि भिलाई का सगठनात्मक ढाँचा इस प्रकार का है कि सोवियत टक्नीशियन और उनके भारतीय सहकर्मी निर्णयकर्ता की भूमिका अदा करते हैं तथा भारतीय विकास-कार्य को आगे बढ़ाते हैं।

बोकारो-प्लाट

भिलाई से भी बढ़कर बोकारो का निर्माण है। प्रसिद्ध भारतीय अर्थशास्त्री डॉ० राव ने कहा था कि बोकारो-योजना बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि आज के युग मे इस्पात पर बहुत कुछ निर्भर है। इसके द्वारा भारतीय अर्थतत्र के विस्तार में एक बड़ी भूमिका अदा हुई है। न्यूयाक टाइम्स ने इसे अमेरिका की हार बताया है। प्रधान मत्री ने ६ अप्रैल सन् १९६८ को इस्पात कारखाने की प्रथम धमन भट्टी का उद्घाटन करते हुए कहा था कि बोकारो देश को अर्थतत्र के क्षेत्र मे आत्म निर्भर बना देगा। यह एक बहुत बड़ी योजना है। मीलों मानव-समूह कार्य करता दिखाई देता है—कहीं नींव रखी जा रही है तो कहीं सड़कें, कहीं सुरगों का विस्फोट हो रहा है तो कहीं रेल की लाइनें बिछाई जा रही हैं। स्थान-स्थान पर पाइप, क्रेन, स्टील के ढाँचे आदि जमा हैं। बिजली के तेज प्रकाश मे अहर्निश काम चलता है। इसकी क्षमता ५५ लाख टन होगी—भिलाई से लगभग दोगुनी। दक्षिण-पूर्व एशिया का यह सबसे बड़ा कारखाना होगा। यहाँ दो लाख व्यक्तियों के लिए ४० हजार आवास-गृह बनेंगे। श्रमा रेड्डी ने ठीक ही कहा था, 'रूस और भारत के सहयोग की सुन्दरतम आकृति इस योजना में देखी जा सकती है'। वैसे बोकारो है भी ऐसे स्थान पर कि यह भारत का इस्पात-केन्द्र बन सकता है—कोयले की खानों से साफ किया हुआ लोहा, कुरु से कच्चा लोहा, कुटेश्वर से चूना, हिरो से डोलोमाइट, बारबिल से मैंगनीज, रांची से मशीनें आदि। इसमें २८६ यूनिटें होंगी, दामोदर नदी इसकी पानी की आवश्यकता को पूरा करेगी, और पेय जल गार्गी नदी से प्राप्त होगा। आर्तरिक परि-

यहन की सुंदर व्यवस्था होगी, और एक कारखाना होते हुए भी बोकारो नगर लहलहाता नजर आएगा।

## बरौनी और कोयाली

दिवंगत प्रधान मंत्री नेहरू ने कहा था, 'अपने देश में हमें तेल ढूंढ़ना ही पड़ेगा, और अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार करना होगा। हमें आत्मनिर्भर बनना होगा।' काम अंकलेश्वर से शुरू हुआ जहाँ १९६६ में तेल तथा गैस का उत्पादन २५ लाख टन हुआ। कलोल और नवगाम में भी काम चला। काम्बे में गैस खोजी गई। बाकू, वश्कीरिया, ग्रोज्नी आदि सोवियत तेल-क्षेत्रों में भारतीयों को प्रशिक्षित किया गया। बरौनी (बिहार) तथा कोयाली (गुजरात) में सोवियत आर्थिक तथा तकनीकी सहायता से दो आधुनिक तेल-शोध कारखाने बनाए गए हैं। प्रत्येक की क्षमता ३० लाख टन है। सोवियत सहायता से भारत के राष्ट्रीय तेल-उद्योग का विकास सिर्फ भारत की बढ़ती हुई माँगों को ही पूरा नहीं करेगा वरन् संपूर्ण देश की आर्थिक प्रगति को भी तीव्र गति प्रदान करेगा, क्योंकि जो मुद्रा पहले तेल और इसके उत्पादनों के आयात पर खर्च होती थी वह अन्य उद्योगों के विकास में काम आएगी।

## राँची और दुर्गापुर, हरिद्वार और ऋषिकेश

राँची में देश का सबसे बड़ा मशीन-निर्माण कारखाना है। ऐसा अनुमान है कि यहाँ ८० हजार टन साज-सामान तैयार होगा। दुर्गापुर का कोयला-खान-मशीन कारखाना ४५ हजार टन के लगभग खानों का साज-सामान प्रस्तुत करेगा। हरिद्वार में भारी बिजली मशीन-निर्माण कारखाना बनता आ रहा है। इस कारखाने में २ लाख किलोवाट तक की क्षमता के वाष्प तथा जलचालित टर्बाइन और जेनरेटर तथा मोटरें बनाई जाएँगी। इसकी पूर्ण क्षमता २७ लाख किलोवाट की होगी। ऋषिकेश का रोगाणुनाशक औषधि-निर्माण कारखाना ३०० टन तक पेनीसिलीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन आदि तैयार करेगा, और ३ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा बचाएगा। हैदराबाद में संश्लेषित औषधि-निर्माण कारखाना होगा। मद्रास के कारखाने में चीर-फाड़ के औजार बनेंगे।

सूरतगढ फार्म

राजस्थान में सोवियत संघ की एक महत्त्वपूर्ण भेंट है—सूरतगढ़ फार्म। १२१५ हजार हेक्टर भूमि पर अन्नोत्पादन की यह योजना सन् १९५५ में बनी, और १९५६ के स्वतन्त्रता दिवस पर रूसी ट्रैक्टर द्वारा इसकी पहली जुताई से शुभ उद्घाटन हुआ। अपनी तरह का यह फार्म सपूर्ण एशिया में सबसे बड़ा है, और कृषि के नए नए प्रयोगों तथा प्रशिक्षण के लिए सुंदर अवसर है। थार रेगिस्तान में स्थित ३०,००० एकड़ भूमि का यह विशाल रेगिस्तान सूरतगढ फार्म के माध्यम से अब गेहू, सरसों, ईख और रुई उत्पादित करने लगा है। क्या कभी यह कल्पना भी की जा सकती थी कि यह मरु भाग इस प्रकार के खेतों में लहराएगा? इस भूमि में ४०० एकड़ का एक बाग भी लगाया गया है। मवेशी और मुर्गियाँ भी पाली जा रही है। साथ ही फार्म पर ही इस बात का प्रबंध है कि ट्रैक्टरों की मरम्मत की जा सके और कृषि के काम में आने वाली अन्य मशीनों एवं लॉरियों को भी सुधारा जा सके। इस वर्कशॉप की एक विशेषता यह है कि यहाँ पुराने हिस्सों को बदला ही नहीं जाता, बल्कि कुछ नवीनता लाने की भी चेष्टा की जाती है। विविध प्रकार के ६०० पुर्जे बनाने में यह सक्षम है, और सारी मशीनें चालू रख सकता है। इसके साथ ही सूरतगढ़ का संस्थान बड़ी सफलता के साथ ट्रैक्टर चालकों, मेकेनिकों को प्रशिक्षित भी कर रहा है। अब तक ७००–८०० चालकों और यांत्रिकों को प्रशिक्षित किया जा चुका है। थोड़े ही समय उपरांत इस फार्म पर ७० हज़ार टन अनाज का उत्पादन किया जा सकेगा। यहाँ से १ लाख एकड़ में बोने योग्य बीज भी प्राप्त होते हैं। यहाँ ईख की भारी खेती होती है। मीलों के बीच लहलहाता हुआ यह फार्म इस बात का द्योतक है कि महनत और उद्योग से क्या कुछ सम्भव नहीं है। राजस्थान का यह रेगिस्तानी भाग जिस कहानी को सुना रहा है वह उसके अतीत से कितनी भिन्न है, और यही कारण है कि भारत ने इस बात का निर्णय लिया है कि इस प्रकार के अधिकाधिक फार्म खोले जाएँ ताकि भारत की खाद्य समस्या का समाधान हो सके। ४, ५ फार्मों में तो रूसी सहयोग की ही आशा है। यहाँ की कृषि-कला उत्तम कोटि की है। यहाँ के खेतों में भारत की औसत से लगभग दो गुना उत्पादन होता है। सभी देशों ने इस सहयोग की सराहना की है। प्रति वर्ष इसका उत्पादन वृद्धि पर है। इसकी प्रशंसा में अनेक कविताएँ भी लिखी गई हैं, कहानियाँ प्रब-

लित हुई हैं, और कतिपय लोकगीत भी जनता की जुबान पर हैं। जैतसर में भी कुछ ऐसी ही योजना अग्रसर करने की बात है।

प्रशिक्षण

कृषि-क्षेत्र में प्रदत्त रूसी सहायता कितनी मूल्यवान रही है यह इस बात से ही सिद्ध होती है कि भारत की कई अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में रूस ने भाग लिया और वहाँ अपने मंडपों में इस बात को प्रदर्शित किया गया कि सोवियत जनों द्वारा कृषि में कितनी प्रगति हुई है। इन मंडपों में भारी भीड़ रहती थी और हमारे देश के मान्य नेताओं, विशेषज्ञों और औद्योगिक संस्थानों ने इनकी काफी प्रशंसा की। इन मंडपों का दर्शन बहुत ही प्रेरणादायक था क्योंकि इनसे स्पष्ट होता था कि कितने कम समय में रूस ने सैकड़ों वर्षों के पिछड़ेपन को दूर फेंक दिया और उन सभी समस्याओं का समाधान निकाला जो आज भारत के सामने हैं।

एक बहुत बड़ा सहयोग जो भारत को मिल रहा है वह है विविध क्षेत्रों में प्रशिक्षण। एक निश्चित योजना के अनुसार प्रतिवर्ष भारत के मेधावी व्यक्ति रूस के संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। यह शिक्षण अनेक क्षेत्रों में है, जैसे—इंजीनियरिंग, डॉक्टरी, उद्योग, सामाजिक विज्ञान। रूस में पेट्रिक लुमुम्बा विश्वविद्यालय की स्थापना इसी उद्देश्य को लेकर की गई है कि विदेशी विद्यार्थियों को शिक्षा-प्रशिक्षा मिल सके। इस प्रसंग में एक बात द्रष्टव्य है। रूस में शिक्षण प्राप्त करने के लिए रूसी भाषा का जानना अनिवार्य है—रूस के लिए यह एक गौरव का विषय है और प्रशिक्षणार्थियों के लिए उपयोगी। रूस पहुँचने पर सर्वप्रथम रूसी भाषा का शिक्षण होता है। रूसी एक कठिन भाषा है किंतु व्यक्तिगत वार्ता और परिशीलन के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि कुछ ही महीनों में इतनी क्षमता प्राप्त हो जाती है कि भाषा-संबंधी रुकावट नहीं रहती। भाषा के शिक्षण में रूस ने आधुनिकतम साधनों का उपयोग किया है। वहाँ की भाषा-प्रयोगशालाएँ सभी प्रकार के साधनों से युक्त हैं। ये प्रयोगशालाएँ काफी बड़ी और खर्चीली होती हैं, पर इस प्रकार की चेष्टा की जा रही है कि इन्हें छोटा और सस्ता बनाया जाए। थोड़े ही दिनों पूर्व समाचार-पत्रों में यह सूचना प्रकाशित हुई थी कि मलाया विश्वविद्यालय के भाषा-विभाग ने एक ऐसी मशीन का

निर्माण किया है जिसे भाषा-प्रयोगशाला का संक्षिप्त रूप कहा जा सकता है, और जिसे लगाने में केवल बारह सौ रुपये लगते हैं। आधुनिक प्रयोगशालाओं को चालू करने में १-२ लाख रुपये की आवश्यकता होती है। अभी यह भविष्य के गर्भ में है कि यह सस्ती मशीन कितना काम करेगी। मॉस्को के जिन मिकैनिकों से मेरी बात-चीत हुई उनका कहना था कि प्रयोगशालाओं को कम खर्चीला बनाया जा सकता है। इन प्रयोगशालाओं में भाषा सीखने के उपरान्त प्रशिक्षणार्थी को किसी उपयुक्त विश्वविद्यालय से सम्बन्धित कर दिया जाता है, जहाँ विशेषज्ञों की देखरेख में वह ज्ञान-सम्वर्द्धन करता है। रूस से लौटे और अन्य विदेशों से लौटे प्रशिक्षितों में मैंने एक अन्तर अवश्य देखा। रूस में प्रशिक्षित विशेषज्ञ अपने प्रशिक्षण का लाभ अपने देशवासियों को देना चाहते हैं, अन्य अपने देश में सन्तुष्ट न रहकर विदेश जाने की बात सोचते हैं। इंगलैंड, जर्मनी, अमेरिका आदि के अनेक प्रशिक्षितों को मैं जानता हूँ जो किसी भी प्रकार स्वदेश में न रह सके—परन्तु रूस को लौटता कोई भी प्रशिक्षित देखने में नहीं आया। इस स्थिति से पंडित नेहरू भी परिचित थे। सन् १९६० में, जब मैं लंदन विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था, नेहरू जी ने लंदन-स्थित इंडिया हाउस में यह बात बड़े दुख के साथ, एक बड़ी सभा में, कही थी कि भारत के सपूत जो विदेश में प्रशिक्षित होते हैं कठिनाइयों को सहन करते हुए भी अपने देश की सेवा करें। संभव है विदेश में उन्हें कुछ अधिक सुविधाएँ मिलती हों पर जिस मातृभूमि ने अपने स्तन का पयपान कराकर उन्हें सर्वाद्धित किया है, विदेश में भेजने का त्याग किया है, उस माँ के प्रति भी उसके पुत्रों का कर्तव्य है। हमारी शिक्षा केवल इसलिए नहीं होती कि हम सुख सुविधा प्राप्त करें किन्तु इसलिए कि हमारी सेवाओं से देश आगे बढ़े, और हमारे देशवासी सुख का अनुभव करें। पंडित जी के ये शब्द कानों में गूंजते रहते हैं, और रूस से लौटे प्रशिक्षित विद्वानों के कार्य-कलाप से इसकी प्रतिध्वनि होती है।

## सहयोग का वर्तमान स्वरूप

भारत और रूस का सहयोग वृद्धि पर है। कभी कभी कुछ कुभावनाएँ भी सुनी जाती हैं। कुछ लोगों का कहना है कि रूस का ध्यान अब पाकिस्तान की ओर बढ़ता जा रहा है, और भारत के प्रति उसके रुख में परिवर्तन हो रहा है। कुछ

ही दिनों पूर्व किए गए सोवियत संघ के इस निर्णय ने तो देश में तहलका मचा दिया है कि वह पाकिस्तान को हथियार देगा, और यह घोषणा भी तब जब हमारे राष्ट्रपति संघ के दौरे पर, भारत की सद्भावनाओं के साथ, गए हुए थे। किन्तु हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि कोई देश किसी अन्य देश के प्रति मैत्री रखता है तो इसका अर्थ सर्वदा यह नहीं होता कि वह हमारी मैत्री में, अनिवार्यत:, कमी करता है। शस्त्रों की बात कुछ विचित्र सी है, नहीं तो रूस की यह मान्यता रही है कि दोनों देशों के बीच स्वस्थ संबंधों की स्थापना हो। इसमें तो संदेह नहीं कि रूस की मैत्री हमारे देश के लिए बहुत ही मूल्यवान है, और देश का कोई भी विचारशील व्यक्ति इस संबंध में कमी नहीं आने देना चाहता—परन्तु पाकिस्तान का जो रवैया चलता रहा है उसने देशवासियों को चिंतित अवश्य किया है। वैसे रूस की सद्भावना में संदेह नहीं किया जाता, और उसकी मैत्री को पहले जैसा ही दृढ़ समझा जाता है। अनेक कठिन परिस्थितियों में रूस ने भारत का साथ दिया है, भारत की प्रगति में उसका सहयोग बहुमूल्य है और आगामी अनेक वर्षों में सहयोग की यह मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ती ही रहेगी ऐसा विश्वास है।

## पारस्परिक सहयोग का एक वर्ष—१९६७

यहाँ हम रूस-भारत सहयोग के केवल एक वर्ष—सन् १९६७ का कुछ विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे यह सिद्ध होगा कि रूस-भारत सहयोग का प्रत्येक वर्ष कितना महत्त्वपूर्ण हो सकता है।

पिछले वर्ष भारत में खाद्यान्न का अभाव था। रूस ने दो लाख टन अनाज उपहार में दिया, इसके अतिरिक्त बिहार तथा भारत के अन्य स्थानों में, अकाल-पीड़ितों की सहायतार्थ, ट्रेडयूनियनों तथा केन्द्रीय परिषद् ने खाद्य-पदार्थों के उपहार भी भेजे। ढाई लाख टन उर्वरक भारत के हाथ बेचा, और चार हजार ट्रैक्टरों के देने की बात कही। एक अन्य करार के अनुसार भारत से सोवियत संघ को १ लाख टन बेलित इस्पात दिए जाने की व्यवस्था की गई। साथ ही रूस ने यह भी कहा कि भारत जितने भी अतिरिक्त रेल के डिब्बे बनाएगा उन सब को वह खरीद लेगा। साठ लाख मिट्टी के तेल का आयात कर ११ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा बचाई। सांस्कृतिक और वैज्ञानिक सहयोग भी चालू रहा। इस कार्यक्रम में धातु-कर्म, रसायन, इलैक्ट्रोनिक्स और

अन्य शाखाओं में आदान प्रदान हुए। मिलजुल कर भारतीय भाषाओं में पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने का काम भी जारी रहा और यह भी फैसला किया गया कि १६वीं शताब्दी के भारतीय मुक्ति आंदोलन के इतिहास पर संयुक्त रूप से कार्यारम्भ किया जाए। इस वर्ष १ जनवरी को भारत सोवियत सांस्कृतिक सोसाइटी की राष्ट्रीय परिषद् के अध्यक्ष के० पी० एस० मेनन ने कहा था—१६६७ का वर्ष भारत और सोवियत संघ के इतिहास में स्मरणीय वर्ष रहेगा। १६६७ में ही महान अक्टूबर-क्रांति की ५०वीं जयन्ती पड़ती है और इसी वर्ष भारतीय स्वतंत्रता की २०वीं। यह वर्ष भारत-सोवियत सांस्कृतिक स्थापना का भी १४वां वर्ष होगा।' इस वर्ष सोवियत कलाकारों के एक बड़े प्रतिनिधि मण्डल ने सांस्कृतिक विनिमय के अधीन एक माह के लिए भारत का भ्रमण किया और स्थान स्थान पर कार्यक्रम प्रस्तुत किए।

इसी वर्ष प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' का उजबेक भाषा में ३०,००० प्रतियों का सस्करण प्रकाशित हुआ। सांस्कृतिक केन्द्र में भारतीय भाषाओं में प्रकाशित अनेक पुस्तकें प्रदर्शनी में रखने के लिए भेजी गईं। इस वर्ष की समाप्ति इस करार के साथ हुई कि सोवियत संघ भारत को निर्माण तथा मलबा ढोने का साज सामान, धातु तथा खनिज, धातु काटने के औजार, ट्रैक्टर, कृषि मशीनें, विमान, वेल्लित धातुएँ, लकड़ी का गूदा, अखबारी कागज, दवाइयाँ, आदि माल देगा तथा भारत सोवियत संघ को बकरे की खाल, काफी चाय व तम्बाकू, ऊन, चमड़ा, काजू, मूंगफली, सूती कपड़े, रस, डिब्बों में बन्द फल, मोटर टायर रेल के डिब्बे आदि देगा।

यह है भारत सोवियत पारस्परिक सहयोग का एक वर्षीय संक्षिप्त चित्र जो अपने आप में अपनी कथा कहता है।

### चौथी पचवर्षीय योजना

भारत की चौथी पचवर्षीय योजना को पूरा करने में भारत की मदद करने वाला प्रथम देश सोवियत संघ है। इस बीच बोकारो इस्पात कारखाने का काम पूरा हो जाएगा। यह परियोजना सोवियत भारत सहयोग में सब से बड़ी होगी। इस योजना की बातचीत सन् १६६६ में ही पूरी हो चुकी थी, जब हमारी प्रधान मंत्री सोवियत संघ के दौरे पर गई थीं। कोरबा में १ लाख टन, नेइवेली में ६ लाख किलोवाट तथा तेल और गैस के ढूंढने और निकालने

में सहयोग की व्यवस्था हो चुकी है। १० करोड़ रूबल का ऋण देने की भी बात है—पर लौटाने की शर्त वही है—१२ वर्षों की समान किश्तों में २॥ प्रतिशत ब्याज सहित। प्रधान मंत्री ने कहा था, 'सोवियत संघ भारत के एक महत् प्रयास के क्रियान्वयन—पिछड़ेपन के विरुद्ध संघर्ष में मदद कर रहा है। बढ़ती हुई भारत-सोवियत मैत्री में आर्थिक सहयोग एक मूल्यवान अंश है जिसके सजीव स्मारक इस देश में सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं।' सोवियत प्रधान मंत्री ने भी कहा था—'सोवियत संघ और भारत के घनिष्ठ सहयोग से निर्मित प्रतिष्ठान भारतीय अर्थतंत्र के विकसित होने में तथा विदेशी निर्भरता से आजादी हासिल करने में मदद करते हैं। वे भारतीय जनता का जीवनमान और संस्कृति को ऊँचा उठाने में भी सहायक हैं एवं भारतीय कर्मियों के प्रशिक्षण के लिए एक स्कूल का काम करते हैं।'

इस समय सोवियत संघ भारत के सार्वजनिक क्षेत्र में लगभग ४० औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा अन्य परियोजनाओं के निर्माण तथा विस्तार में तकनीकी सहायता कर रहा है। इस सहयोग में लौह धातु-कर्म, मशीन-निर्माण, विद्युत-इंजीनियरी, तेल, कोयला जैसे महत्त्वपूर्ण उद्योग शामिल हैं। भारत सरकार के अनुरोध पर सोवियत संघ राजकीय क्षेत्र में उद्योगों के निर्माण में भी सहायता कर रहा है क्योंकि राजकीय क्षेत्र का विकास तथा उसकी दृढ़ता स्वतंत्र अर्थतंत्र के संवर्द्धन में एक प्रमुख उपादान है जवाहरलाल नेहरू के स्वतंत्र अर्थतंत्र को दृढ़ बनाने में सोवियत सहयोग, निश्चय ही, महत्त्वपूर्ण है।

# अतीत से वर्तमान

## बौद्ध धर्म

यों तो भारत और रूस के सम्बन्ध बहुत पुराने रहे हैं, और भारत के दर्शन तथा धर्म ने रूस के समाजाकाश को प्रकाशित किया है। व्यापार संबंधी सहयोग भी काफी पुराना है और रूस के पुरातत्व अनुसन्धानों ने भी इस बात की पुष्टि की है कि दोनों देशों के सम्बन्ध काफी समय से रहे हैं। बैकाल झील के किनारे जो भूमि स्थापित है वह बौद्धों का स्वप्न देश है, तथा वहाँ जो रेशमी कपड़ों और कागजों पर लिखे ग्रन्थ मिलते हैं उनका महत्व केवल ऐतिहासिक ही नहीं सांस्कृतिक भी है। अभी कुछ दिनों पूर्व प्राच्य विद्या-विशारद डॉ० रघुवीर के पुत्र डॉ० लोकेशचन्द्र के नेतृत्व में जो शिष्टमण्डल सोवियत बौद्ध भिक्षुओं के निमन्त्रण पर वहाँ गया था उसने इस विषय पर काफी जानकारी दी है, और बताया है कि किस प्रकार दोनों देश अनेक क्षेत्रों में सम्बन्धित रहे।

सोवियत संघ में बौद्ध धर्म और उसके दर्शन का प्रादुर्भाव ईसा की प्रथम शताब्दी में ही हो चुका था। सबसे पहले बौद्ध धर्म प्राचीन खोरेजम में आया और फिर देश के अन्य भागों में फैलने लगा। इन क्षेत्रों में एशिया की ही संस्कृति थी। मध्य युग में अनेक बौद्ध विहारों का निर्माण हुआ, और एक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ में यह भी लिखा हुआ है कि समरकन्द के मन्दिरों का जीर्णोद्धार सातवीं शताब्दी में हुआ। काफी समय तक इस बात की कोई विशेष जानकारी नहीं थी लेकिन अब पुरातत्व-विशारदों द्वारा यह जानकारी व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत की जाने लगी है। गान्धार शैली में निर्मित बुद्ध की प्रस्तर प्रतिमाओं के कुछ खण्ड तर्मेज नगर के निकट पाए गए। कुछ समय पश्चात् इसी स्थान पर एक बौद्ध मंदिर के भग्नावशेष और काँसे के सिंह भी प्राप्त हुए। निश्चय ही यहाँ बौद्ध संस्कृति का प्रचार रहा होगा और इससे केन्द्रीय एशिया के केवल आध्यात्मिक जीवन में ही नहीं वरन् सामाजिक जीवन में भी परिवर्तन हुआ होगा। वहाँ की वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला आदि पर भी प्रभाव पड़ा होगा।

खरोष्ठी और ब्राह्मी लिपियों में लिखी २० से भी अधिक कृतियाँ मिल चुकी हैं। बौद्ध धर्म के अनेक केन्द्रों का भी पता लगाया जा चुका है, विशेष कर सेमीरैच्ये, फरगना की घाटी, ताजिकिस्तान का दक्षिण भाग आदि यह प्रतिपादित किया जा चुका है कि सातवीं सदी तक वहाँ बौद्ध धर्म का काफी प्रचार था। इसके उपरान्त इस्लाम के दबाव से बौद्ध धर्म लुप्त होने लगा, फिर भी कुछ स्थानों में वह चौदहवीं शताब्दी तक बना रहा। जब मंगोलों के आक्रमण हुए तो बौद्ध धर्म एक बार फिर चमका, क्योंकि मंगोल खान बौद्ध थे। अन्तिम बार बौद्ध धर्म का दर्शन १७, १८ वीं शताब्दी में हुआ, जिसकी परम्परा किसी न किसी रूप में आज तक चली आती है। सन् १६२० में राजकुमार बातर ने तिब्बती बौद्ध धर्म जो 'पीत विश्वास' कहा जाता है स्वीकार किया। १६३० में पश्चिमी मंगोल वोलगा के तटों पर बौद्ध धर्म फैलाने में सफल हुए। बेकाल क्षेत्र में भी यह फैला। १७४१ में बुरिया-तिया का प्रथम बौद्ध बिहार बना। योरुप की राजधानियों में सबसे पहले रूस की राजधानी सेन्ट पीटर्सबर्ग में बौद्ध मन्दिर निर्मित हुआ। आजकल बौद्ध धर्म केवल साइबेरिया में है।

यद्यपि सोवियत संघ साम्यवादी है, परन्तु वहाँ धर्म की स्वतन्त्रता है। अधिक लोगों का धर्म रूसी आरथोडॉक्स चर्च है। इसके पश्चात् इस्लाम का नम्बर आता है। कैथोलिक, बौद्ध, लूथेरन्स आदि की सभाएँ भी हैं। वहाँ के बौद्ध मन्दिर ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे मंगोली अथवा तिब्बती हों। वैसे वहाँ बौद्ध मन्दिर और विहार काफी संख्या में हैं। यहाँ के बौद्ध चीन, तिब्बत और मंगोलिया से अधिक संबंधित हैं, पर भारत के प्रति इनकी बहुत आस्था है, और सारनाथ के सम्मेलन में तो सोवियत बौद्धों ने प्रमुख भाग लिया था।

## प्रथम विवरण—अफानासी निकितिन

रूस के अनेक प्राचीन ग्रन्थों में भारत के विवरण मिलते हैं। सबसे पहला विवरण सन् १२६४ के एक हस्त-लिखित ग्रन्थ में मिलता है जो त्वेर नाम के उस स्थान में लिखा गया, जहाँ के अफानासी निकितिन ने ५०० वर्ष पूर्व भारत की यात्रा की थी। पार्चमेन्ट पर लिखा यह हस्तलेख मास्को स्थित लेनिन राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित है। जिस प्रकार अमरतोल ने इस ग्रन्थ में भारत का विवरण लिखा है उसको एक अज्ञात रूसी कलाकार ने चित्रबद्ध

भी किया है। उसने एक चौड़ी तथा गहरी नदी बनाई है, जिसके किनारे पर अनेक विचित्र पुष्प बनाए हैं। यह चित्र भी क्षतिग्रस्त हो चुका है, किन्तु इससे इन चित्रों का महत्त्व कम नहीं होता, क्योंकि इनके द्वारा भारत के मनुष्य और भारत की प्रकृति के द्योतक विवरण प्राप्त होते हैं।

मॉस्को के राजकीय इतिहास-संग्रहालय में अनेक जिल्दों में लिखित एक हस्तपुस्तिका है, जिसे १६ वीं शताब्दी में नोवगोरोद नामक स्थान पर लिखा गया। इसमें एक लेख है जिसे वाइजनटीन व्यापारी ने लिखा है, और जिसमें उसकी ६ ठी शताब्दी में की गई भारत-यात्रा का उल्लेख है, तथा भारत के बारे में बहुत सी जानकारी है। इसके आधार पर नोवगोरोद के कलाकारों ने अनेक चित्र बनाए। सात पृष्ठों में तो ऐसे विचित्र पशुओं के चित्र हैं जैसे रूस में कभी नहीं देखे गए। सुपारी के पेड़ तले एक भारतीय का चित्र भी मिलता है। इस विवरण की पुनरावृत्तियाँ १२ वीं शताब्दी में भी हुईं, जिसकी अनेक प्रतियाँ विद्यमान हैं।

## बाबर का दूत

शुमीलोव्स्की क्रानिकल की एक हस्तलिखित प्रति में जो एक छोटा रेखा-चित्र मिलता है वह बड़े महत्त्व का है। १६ वीं शताब्दी के मास्को के एक कलाकार ने १५३२ में बाबर द्वारा भेजे गए एक दूत का चित्र बनाया है। यह सर्वविदित ही है कि बाबर भारत में मुगल-राज्य का संस्थापक था। बाबर ने मैत्री और भ्रातृत्व से रहने की सद्भावना के साथ अपना दूत रूस-दरबार में भेजा। कलाकार ने इस भारती दूत को सामान्य योरुपीय पोशाक में दिखाया है, और क्रानिकल के दो पृष्ठों में एक अध्याय है जिसका शीर्षक है—'एक संदेश के साथ भारतीय व्यापारी ख्वाजाहुसेन के आगमन पर'। चित्र में हम देखते हैं कि इस भारतीय दूत का स्वागत मॉस्को के ग्राण्ड प्रिंस वासिली तृतीय द्वारा किया गया। जिस स्थान पर यह स्वागत समारोह हुआ वह, संभवत, मॉस्को स्थित क्रेमलिन के अंदर महल का कोई भाग है। एक अन्य चित्र में यह भी दिखाया गया है कि रूस के शासक को बाबर का संदेश देते हुए यह दूत उसके समुदाय के साथ है। निश्चय ही यह चित्र बहुत मूल्यवान है क्योंकि इसमें ४०० वर्ष पूर्व एक भारतीय प्रतिनिधि मंडल रूसी शासक के सम्मुख उपस्थित होता है। आज तो इन मंडलों की संख्या बहुत बढ़ चुकी है।

## भारतीय सम्राट पोरस

रूसी चित्रकारों ने भारत से संबंधित व्यक्तियों और घटनाओं पर विशेष ध्यान दिया। चित्रों में बहुत अधिक लोकप्रिय चित्र भारतीय सम्राट पोरस का है, जो सिकन्दरिया की कहानी के संबंध में चित्रित किया गया है। यह कहानी रूसी कलाकारों द्वारा १२ वीं से १८ वीं शताब्दी तक बराबर अंकित की गई, और इसकी अनेक सचित्र प्रतिलिपियाँ आज तक विद्यमान हैं। लेनिनग्राड के एक पुस्तकालय में मॉस्को के १७ वीं शताब्दी के कलाकारों द्वारा चित्रित एक अति मूल्यवान कृति है, जिसमें सम्राट पोरस को एक विशाल सिरवाले देव के रूप में दिखाया गया है, जो संबंधित साहित्य में वर्णित उसके विशाल व्यक्तित्व से साम्य रखता है। ऐसे भी चित्र हैं जिनमें हाथियों द्वारा युद्ध के दृश्य बताए गए हैं, और पोरस की मृत्यु तथा दाह-संस्कार भी।

एक भारतीय राजकुमार आसफ का भी बहुत चित्रण हुआ है। उसके चित्र १२वीं से १८वीं शताब्दी में लिखित और मुद्रित पुस्तकों में ही नहीं बल्कि खुदाई में भी पाए गए हैं। इन सभी प्रसंगों से यह सिद्ध होता है कि रूसी कलाकारों के लिए भारत एक रोचक विषय था।

## प्राचीन संपर्क

लेनिन राजकीय पुस्तकालय को देखने के लिए जो भारतीय प्रतिनिधि-मंडल सन् १९५८ में रूस गया था उसने इस प्रकार की कृतियों और चित्रों की बड़ी प्रशंसा की है। रूसी संग्रहालयों में सुरक्षित यह सामग्री रूस और भारत के पुराने मैत्री संबंध को प्रतिपादित करती है। एक चित्र में भारत के कई स्थल दिखाए गए हैं और उनके ऊपर सूर्य-चन्द्र के गोलाकार बिम्ब भी हैं जिनसे निकली प्रकाश की आभा इन स्थानों को प्रकाशित कर रही है, और चित्र के ऊपर लिखा है 'भारत'। निश्चय ही भारत को सूर्य की ये उद्दीप्त किरणें और चन्द्रमा की शीतल ज्योत्स्ना प्राप्त हैं जो पश्चिम के देशों में भारत के प्रति आकर्षण उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार भारतीय 'सिंह' भी विदेशियों द्वारा चित्रित हुआ है, और तीर द्वारा उसके शिकार की बात भी बताई गई है। भारतीयों का रूसी दरबार में वहीं की पोशाक में जाना चित्रकार के व्यक्तित्व का परिचायक तो है ही, साथ ही यह इस बात को भी बताता है कि राज-दरबार में वेश-भूषा और आचरण के नियम क्या थे। 'सिकन्दरिया' हस्त-

लिखित ग्रंथ में जो चित्र मिले हैं वे भारतीय तथा यूनानी दोनों पक्षों को सफलतापूर्वक चित्रित करते हैं किन्तु भारतीय सम्राट को उसकी मुखाकृति और हथियार द्वारा प्राथमिकता दी गई है। १६वीं शताब्दी में भारतीय पशुओं के जो चित्र हैं उनमें घोड़े और सिंह को प्रमुखता दी गई है। युद्ध स्थल में घोड़े को बहुत महत्त्व दिया गया था, और चित्र में जो उसकी लहरदार घनी पूंछ दिखाई गई है वह यहाँ की परंपरा के अनुरूप है। खुदाई में भी जो संबंधित स्थल मिले हैं उनमें भी चित्रों का ही अनुगमन किया गया है। निश्चय ही भारत और रूस के बीच इस प्रकार के संपर्क और उस ओर किए गए अनुसंधान दोनों देशों की मैत्री को अधिकाधिक दृढ़ बनाते हैं।

अनेक यात्रा-संस्मरणों का अनुवाद रूसी भाषा में किया गया था। इस सामग्री में स्वयं देखी हुई सामग्री भी है और अन्य यात्रियों से सुनी हुई भी। इन लेखों के आधार पर भारत एक दूर का देश है, जो योरुप से नितांत भिन्न है, जिसकी समृद्धि और विचित्रताओं की कोई सीमा नहीं। इस दूर-देश भारत का विवरण रूसी लोक-साहित्य, कहानियों, दंत-कथाओं और दार्शनिक कविताओं में मिलता है।

## रूसी नाविक–लिस्यान्स्की

कुछ ही दिनों पूर्व एक रूसी नाविक की भारत–यात्रा का विवरण पढ़ा था। जनवरी सन् १७९९ में एक दिन प्रातःकाल एक ब्रिटिश जहाज मद्रास पहुँचा। तत्काल एक भारतीय नौका–जोड़ा जहाज के निकट पहुँचा। जहाज के डेक पर खड़े दाढ़ी वाले व्यक्ति ने इन नौकाओं को बहुत शानदार बताया। उसने अपनी डायरी में लिखा कि ये नौकाएँ बहुत अच्छी थीं और इनके चालक अत्यंत कुशल थे। इस प्रख्यात रूसी नाविक का नाम था—लिस्यान्स्की। वह पहली बार भारत आया था। यद्यपि उसकी अवस्था केवल २४ वर्ष की परन्तु वह स्वयं एक कुशल नाविक था, और विश्व के अनेक भागों में यात्रा कर चुका था। संस्मरणों में बताया है कि उन दिनों ब्रिटिश फौजें मैसूर से लड़ रही थीं, और जहाजों द्वारा बहुत सी युद्ध सामग्री ब्रिटेन से भारत भेजी जाती थी। यह एक ऐसा ही जहाज था।

यह संस्मरण पुस्तिका लेनिनग्राद के संग्रहालय में मिली। इसमें लिखा है—मद्रास के एक हिस्से में योरुपीय लोग बड़े ठाट-बाट से रहते थे। 'काला

प्रदेश' स्थानीय लोगों के लिए था। इसमें कोठरियाँ होती थीं, जिनमें वे लोग रहते थे। श्रमजीवी लोगों के बारे में लिखा है कि वे परिश्रमी होते थे और तत्काल सोचने की क्षमता रखते थे। वे जिस तरह मन ही मन हिसाब लगा लेते थे, वह आश्चर्यजनक था। हजारों का गुणा-भाग वे चुटकी बजाते लगा लेते थे। लिस्यान्स्की ने भारत की राजनीति के बारे में भी लिखा है। उसका कथन है—'हैदर अली के बहादुर बेटे टीपू सुल्तान के रण-कौशल से डरते हुए ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी एक अरसे से उसे खत्म करने का मौका तलाश कर रही थी। लेकिन ऐसा करने में कम्पनी असमर्थ रही। पर योरुप से मदद मिल जाने पर और फ्रांस से मैत्री का बहाना बनाकर उसने टीपू से माँग की कि कम्पनी की फौजों को श्रीरंगपट्टम् में रखने की इजाजत दी जाए। यह माँग अस्वीकार हुई, और इस बीच टीपू ने एक शानदार तोपखाना तथा अनेक कुशल सैनिकों की सेना तैयार करली।' नाविक ने कम्पनी की कार्यवाहियों को न्यायसंगत नहीं बताया है। उसे विश्वास था कि साधन-सम्पन्न टीपू न केवल योरुप के लोगों को ही अपना जौहर दिखाएगा बल्कि समस्त हिन्दुस्तान उसका जौहर देखेगा। उसका अनुमान था कि टीपू विजयी होगा।

यह यात्री तीन माह तक बम्बई में भी रहा। बम्बई में उसने अनेक हिंदू और पारसी अपने मित्र बनाए। वह अनेक उत्सवों तथा विवाहों में भी शामिल हुआ। उसने लिखा है—'सूर्य अस्त होते ही शहनाइयाँ तथा नगाड़े सुनाई देने लगते हैं और सड़कों पर एक के बाद एक मशाल लिए जुलूस दिखाई देने लगते हैं, ऐसा लगता है जैसे सड़कों पर आग लग गई हो'। इस नाविक ने एक व्यापारी के घर पर आदि से अंत तक एक विवाह-संस्कार देखा और उसका विवरण कई पृष्ठों में दिया गया है। उसकी डायरी से मालूम होता है कि भारत छोड़ देने के कई वर्ष बाद तक वह भारत के बारे में सोचता रहा। उसे यह जानकर दुख हुआ कि ईस्ट इंडिया कम्पनी के अत्याचारी अधिकारी सारे भारत पर विजय पाना चाहते हैं। उसने अपनी डायरी में लिखा—'सारे भारत को वे अधीन बनाएँगे'।

लिस्यान्स्की के यात्रा-संस्मरण केवल रूस-भारतीय संबंधों के इतिहासकारों ही को दिलचस्पी की चीज नहीं हैं, इनमें इस नाविक ने हिंद-महासागर और विशेष रूप से भारत के भीतरी भागों में नाविकी से संबंधित महत्त्वपूर्ण सुझाव भी दिए हैं।

दानिवेगोव की भारत-यात्राएँ

थोड़े ही दिनों पूर्व मॉस्को में प्रकाशित एक कृति से पता लगता है कि राफेल दानिवेगोव नाम के एक जार्जियाई यात्री ने १८वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों तथा १९वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारत की तीन यात्राएँ कीं। यह कृति १८१५ में लिखी गई थी। इस पुस्तक से मालूम होता है कि दानिवेगोव ने अपनी दो यात्राओं में १८ वर्ष व्यतीत किए—पहली यात्रा ३ वर्ष और दूसरी में १५ वर्ष। उसने समुद्र तथा खुश्की के रास्ते से कोई २० हजार किलोमीटर की यात्रा की होगी। इस यात्रा के प्रसंग में उसने तुर्की, ईराक, भारत, लंका, बर्मा, चीन आदि कितने ही देश देखे। इसका संबंध व्यापारियों और कूट-नीतिज्ञों के एक ऐसे परिवार से था जो जार्जियाई नरेश, तेमूराज द्वितीय, की सेवा में उच्च पदों पर पहुँचा था। इसके पिता और दादा अपनी व्यावसायिक गतिविधियों के साथ-साथ कुछ राजनीतिक दायित्वों को भी पूरा करते रहते थे।

दानिवेगोव की पहली यात्रा १७८५ १७८८ तक रही और दूसरी १७९९ से १८१४ तक। इसने भारत के मद्रास, कलकत्ता, पटना, बनारस, लखनऊ, दिल्ली, आगरा, श्रीनगर आदि नगर देखे इस को इस बात का दायित्व सौंपा गया था कि भारत में स्थित ब्रिटिश फौजों की सूचना प्राप्त करे, तथा दोनों देशों के बीच व्यापारिक संभावनाओं का पता लगाए। यात्रा का अधिक समय भारत में ही बिताया गया। यह मैसूर में भी उस समय रहा जब अंग्रेजों का टीपू के साथ संघर्ष चल रहा था। इसने मुगल सम्राट के टैक्स कलक्टर का काम भी किया। देखे गए नगरों की धार्मिक तथा सामाजिक गतिविधियों का विवरण भी दिया गया है। रीति रिवाज भी इसकी निगाह से नहीं बचे। ब्रिटिश फौजों के स्वरूप और शक्ति के आँकड़े भी दिए हैं।

रूसी तथा भारतीय संबंधों के इतिहास पर अनुसंधान करने वाले लेनिनग्राड के विद्वान स्युस्तरनिन के अनुसार दानिवेगोव की तीसरी यात्रा १८२२-२९ के बीच हुई। इस बार यह अफगानिस्तान से होते हुए कास्पियन सागर को पार कर बम्बई पहुँचा था। अनुमान किया जाता है कि यह यात्रा सामान्य नहीं थी, बल्कि ऐसे उद्देश्यों से अनुप्रेरित थी जिनके अंतर्गत रूस और भारत के बीच धार्मिक संबंधों का विकास करना था। इन यात्राओं के लिए दानिवेगोव ने

अपने जीवन के २३ वर्ष अर्पित किए। सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा इस प्रमुख यात्री के जीवन एवं लेखों के बारे में अनुसंधान का क्रम जारी है। जार्जिया, रूस और भारत के लेखागारों की खोज में, संभवतः, इस यात्री के जीवन एवं क्रिया-कलाप के बारे में नई सूचना उपलब्ध होगी।

सन् १६५० तक इस महान यात्री के जीवन और क्रिया-कलाप का अध्ययन किसी ने नहीं किया था, परन्तु इसके पश्चात् जार्जियाई इतिहासज्ञों तथा भूगोल-विशारदों ने अज्ञात पड़ी दस्तावेजों को ढूंढ़ निकाला। भौगोलिक आधार पर उपलब्ध की गई सामग्री से यात्रा-मार्ग को ठीक-ठीक निर्धारित किया गया। यह पुस्तक दो जार्जियाई और एक रूसी—तीन संस्करणों में प्रकाशित हुई है।

## मार्क्स का दृष्टिकोण

अंग्रेजी शासन के प्रति मार्क्स का दृष्टिकोण बड़ा उग्र था। उन्होंने लिखा—'इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान पर जो मुसीबत ढाई है वह, हिंदुस्तान ने जितनी मुसीबतें उठाई थीं उनसे, बुनियादी तौर पर भिन्न और अधिक गहरी है। मेरा संकेत योरप की निरंकुश तानाशाही की ओर नहीं है, जिसे ईस्ट इंडिया कम्पनी ने हिंदुस्तान पर लाद दिया है और एशिया की अपनी तानाशाही के साथ जिसके मेल से एक ऐसा भयानक दैत्य पैदा हुआ है कि उसके सामने सालसेट के मंदिर की भयंकर देव-मूर्तियाँ भी फीकी पड़ जाती हैं।

हिंदुस्तान में अनेक गृह-युद्ध छिड़े हैं, विदेशी आक्रमण हुए हैं, क्रान्तियाँ हुई हैं, देश को बार-बार विदेशियों द्वारा जीता गया है, अकाल पड़े हैं; परन्तु ये घटनाएँ ऊपर से देखने में अनोखी, उलझनों से भरी, जल्दी-जल्दी होने वाली और सत्यानाशी क्यों न मालुम पड़ती हों, वे हिंदुस्तान की केवल ऊपरी सतह को छूती थीं, और उनका असर उससे गहरा नहीं जाता था। लेकिन इंगलैंड ने भारतीय समाज के पूरे ढांचे को तोड़ डाला है, और उसके पुनर्निर्माण के अभी कोई चिह्न नहीं दिखाई दे रहे हैं। पुरानी दुनिया का इस तरह बिछुड़ जाना और नई का कहीं पता न लगना—इससे हिंदुस्तानियों के वर्तमान दुखों पर एक विशेष प्रकार की उदासी की परत चढ़ जाती है; और ब्रिटेन के शासन तले, हिंदुस्तान अपनी सारी प्राचीन परंपराओं और अपने संपूर्ण पुराने इतिहास से कट जाता है।

## नेहरू का आभार

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि सोवियत संघ के प्रति भारत विशेष रूप से आभारी है, क्योंकि सोवियत वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों ने भारत के प्रति अभूतपूर्व सहयोग का निर्वाह किया है।

सोवियत जनों ने भारतीयों को सर्वदा ही सम्मान की दृष्टि से देखा है, और इस बात को माना है कि संस्कृति के क्षेत्र में भारत का योगदान महान् है। सोवियत जनता भारत के स्वतन्त्रता-युद्ध के प्रति सर्वदा ही सहयोग करती रही, और जब, आजादी के पश्चात्, भारत विकास-मार्ग पर आरूढ हुआ तो सोवियत संघ तत्काल ही हर प्रकार के सहयोग के लिए प्रस्तुत हो गया।

## टैगोर और नेहरू

सोवियत संघ ने भारतीय भावना को सर्वदा सहानुभूति के साथ देखा है। उद्योग और राजनीति के क्षेत्र में तो दोनों देश मिलते ही रहे हैं, भावना के क्षेत्र में भी मिलना एक बहुत बड़ी बात है। रूस में पश्चिम की औद्योगिक प्रगति के साथ पूर्व की सुष्ठ भावना भी है, जो वहाँ के व्यक्तियों, कृतियों, मूर्तियों और भवनों में लक्षित होती है। मेरा व्यक्तिगत अनुभव है कि योरुप के अ म किसी भी देश को देखकर भारत की सुखद स्मृतियाँ इतनी तीव्र नहीं हुईं जितनी रूस के मॉस्को नगर को देखकर। भावना के इस घने और पावन आमन्त्रण पर ही स्वतन्त्रता के अनेक वर्षों पूर्व भावुक जवाहरलाल और भावना की मूर्ति टैगोर ने रूस की यात्राएँ की थीं। सन् १६२६ में जब नेहरू अपने पिता, बहिन तथा पत्नी के साथ सोवियत संघ गए तो उन्होंने कहा था कि रूस का अध्ययन बहुत रोचक है। अपनी ख्यातिप्राप्त पुस्तकों में उन्होंने 'क्रांति' तथा लेनिन' के बारे में लिखा। नेहरू के माध्यम से अनेक विचारकों में सोवियत संघ के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हुई। इसके एक वर्ष बाद, सन् १६३० में, विश्वकवि टैगोर वहाँ गए। अपने एक पत्र में उन्होंने लिखा था कि यदि वे सोवियत संघ नहीं जाते तो उनके जीवन की धार्मिक यात्रा अधूरी रह जाती। मुंशी प्रेमचंद, जो अपनी कृतियों के कारण रूस में इतने विख्यात हैं, उधर गए तो नहीं, परन्तु सन् १६३२ में उन्होंने लिखा था—सोवियत संघ का आर्थिक विकास इतनी द्रुत गति से हुआ है कि मनुष्य के इतिहास में यह एक

अभूतपूर्व घटना है। सद्भावना बढ़ती रही, परन्तु नेहरू के शब्दों में सोवियत संघ द्वारा प्रदत्त अनेक उपहारों में सबसे मूल्यवान उपहार 'मैत्री' है। उनका कहना था कि सोवियत मैत्री स्वार्थ के ऊपर आधारित न होकर दोनों देशों के गंभीर तत्त्वों पर आधारित है।

## एहरनबर्ग के विचार

एहरनबर्ग भारत के मित्र व प्रशंसक हैं। उन्होंने भारत की जो यात्रा की उसके कुछ विवरण बहुत रोचक हैं। एहरनबर्ग का विचार है कि भारत एक सजीव और फलता-फूलता देश है। उसका अतीत तो कलाकृतियों में संग्रहीत है ही, इस युग में भी वह जनता के दुख-दैन्य, राजनीति, शरणार्थियों की समस्या आदि से विमुख नहीं है। योरुप के लोग शांतिपूर्ण सह-जीवन के बारे में बातें करते हैं, प्रदर्शन करते हैं, पर उन्होंने इस बात का चिंतन तथा निर्वाह कब किया। सचाई तो यह है कि सहजीवन का अर्थ तभी समझ में आता है जब किसी देश में विविधताएँ मौजूद हों। भारत में भाषा, वर्ण, धर्म, वेशभूषा, संस्कृति संबंधी जितनी विभिन्नताएँ हैं उन सब के होते हुए 'भारतीयता' इन सब का ऐसा समन्वित प्रतीक बन गई है जो शांतिपूर्ण सह-जीवन को चरितार्थ करती प्रतीत होती है। सहजीवन एक देश, प्रान्त या शहर में ही नहीं होता, वह एक व्यक्ति के अंदर भी होता है, जिसके भीतर विविध विचारों की लड़ियाँ पिरोई होती हैं, और कभी-कभी उनकी आपस में अंदर ही अंदर जबरदस्त टक्कर होती है। भारत में पाप का पर्यवसान पुण्य में, द्वेष का क्षमा में और विषमता का समानता में होता है। हिंदू-धर्म में किसी एक देवता की पूजा नहीं होती, देवी-देवताओं की संख्या असंख्य है। इसके साथ ही बुद्ध, मुहम्मद, ईसा मसीह आदि भी भारत में पूजित हैं। इन सबके होने पर भी देश में राष्ट्रीयता की भावना है। भारत का व्यक्तित्व वास्तव में विशाल है।

## एक खूबसूरत शाम

जब एहरनबर्ग एक शाम को नेहरू के अतिथि थे, तो भोजन पर नेहरू, इंदिरा, लेडी माउण्टबेटन और कृष्णा मेनन भी थे। भोजन के बाद एहरनबर्ग नेहरू के साथ एक छोटी मेज पर चाय के लिए बैठे। उन्होंने लिखा है

'उस आदमी की जबरदस्त सादगी और मानवीयता देखकर मैं आश्चर्यचकित था। वह आदमी ऐसा था जिसे, प्राय, प्रत्येक भारतीय पूजता था। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन भारत के स्वातंत्र्य संग्राम में लगा दिया। उन्होंने विभिन्न लोगों से मुलाकात तथा बातें की थीं, वैज्ञानिकों में आइंस्टीन, लेखकों में रोमांरोला तथा मॉम। इन सभी के साथ उनका विचार-विमर्श बहुत गवेषणापूर्ण था। और तारीफ यह कि अपने देश के किसान से भी वे स्वाभाविक ढंग से बातें करते थे, जिस प्रकार कैंब्रिज के किसी विद्वान प्रोफेसर के साथ। उस व्यक्ति की विशाल हृदयता, भावुकता और देशभक्ति इस बात से विदित होती है कि अपनी मृत्यु के दस वर्ष पूर्व लिखी गई वसीयत में उसने कहा था कि उसके शरीर की भस्म भारत की भूमि पर बिखेर दी जाए। भारत में जब किसी विदेशी का सत्कार फूलों की बड़ी-बड़ी मालाओं से होता है तो वह भाव-विभोर हो जाता है। तरह तरह के गुलाब और गर्म देशों के फूलों की सुगंधि इतनी मादक होती है कि पश्चिम से आया हुआ अतिथि उसमें झूमने लगता है। कुछ ऐसा ही सत्कार हमारा हुआ था।

समन्वय का देश

भारत सहजीवन का एक विचित्र देश तो है ही, यहां नए पुराने का सम्मिश्रण भी आसानी से हो जाता है। इस बात को बताते हुए एहरनबर्ग ने इसका एक कारण यह बताया कि ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने सदियों तक एक विशाल राष्ट्र के जीवन को अवरुद्ध बनाए रखा—साथ ही बड़े-बड़े कारखानों, सचित्र साप्ताहिकों, रेडियो प्रसारण और चल चित्र ने भारतीय जनता के हृदय में सजे हुए हाथियों के प्रति, धार्मिक मेलों के प्रति, प्राचीन नृत्यों का प्रदर्शन करने वाले कुशल नर्तकों के प्रति जो अनुराग है उसमें किसी भी प्रकार की बाधा नहीं डाली। दोनों का सामंजस्य आसानी से हो गया। भारत की इस समन्वयवाली विशेषता को लेकर भारतीय तथा विदेशी अनेक विद्वानों ने इसका स्पष्टीकरण करने की चेष्टा की है। एक प्रकार से भारतीय जीवन में विरोधी भावनाएँ एक दूसरे से मिल जाती हैं, और ऐसी भावनाओं को जन्म देती हैं जो यहाँ की आध्यात्मिकता के निकट हैं। सुख दुख, लाभ हानि, जीवन मरण, यश अपयश, राग द्वेष यद्यपि विरोधी भावनाएँ हैं, पर भारतीय दर्शनकारों ने इन में आस्था न रखने की बात कही है और इन्हें

संसार के बाह्य उपकरण बता कर आध्यात्मिकता से दूर रखा है। भारतीय जीवन की यह विशेषता है, तभी उसमें इतना संयम है, इतनी विशालता है। यहाँ का चिंतन इसी दृष्टिकोण से हुआ कि पारस्परिक विरोधी भावनाओं में सामंजस्य स्थापित करके वास्तविक तथ्य का निरूपण किया जाए। यह देश समन्वय का है, और सांसारिकता की अपेक्षा आध्यात्मिकता में कहीं अधिक आस्था है। यहाँ देशी-विदेशी दोनों धाराएँ स्वीकृत हैं। दिल्ली के संग्रहालय में सबसे अधिक प्रभावोत्पादक वह कमरा है जहाँ अमृता शेर गिल के चित्र टंके हैं। उनके पिता सिख थे, माँ हंगेरियन, शिक्षा पाई पेरिस में और लौटीं वे स्वदेश—भारत। अजन्ता के भित्ति-चित्रों ने उन्हें अनुप्राणित किया। उन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकारी की नींव डाली। भारतीय कला में समन्वय की रूपरेखा निरंतर लक्षित होती है। वास्तव में यह एक विचित्र देश है।

## कला के प्रति—लोक-साहित्य

कई व्यक्तियों ने मुझ से कहा था कि साम्यवादी रूस ने कला की परिसमाप्ति कर दी है और घोर भौतिकतावादी बन गया है। रूस-दर्शन के पश्चात् यह धारणा नष्ट हो गई, और मैं मानने लगा कि सोवियत संघ कला के प्रति भी जागरूक है। सोवियत संघ द्वारा प्रकाशित 'संस्कृति और जीवन' इस विषय में वहाँ का दृष्टिकोण स्पष्ट करता रहता है। कला के विभिन्न अंग हैं, जिनमें एक 'गायन' अथवा 'संगीत' भी है। कहा जाता है किसी जाति का हृदय उसके गीतों में विद्यमान रहता है। रूस की गीत-परंपरा काफी समृद्ध और पुरानी है, और लोक-साहित्य के रूप में विद्यमान है। इन गीतों से उदारता के भाव जागृत होते हैं, और उस समय के लोगों की बुद्धि की सराहना करनी पड़ती है। रूस के प्रसिद्ध मानवतावादी रचयिता तुर्गनेव ने १९वीं शताब्दी में एक कहानी लिखी थी—'गायक'। इस कहानी के द्वारा गायन के विशेष प्रभाव की बात बताई गई है। इसके काफी दिनों बाद गोर्की ने भी गीतों का महत्त्व समझा—जब दो स्त्रियाँ पारस्परिक वार्तालाप में गीतों का प्रयोग कर रही थीं। आजकल के एण्टोनोव ने भी एक कहानी उन गीतों के बारे में लिखी जिनके लिखने वालों के नाम अज्ञात हैं। प्राचीन रूस और वर्तमान 'संघ' ने लोक-साहित्य के अनेक संग्रह प्रस्तुत किए। कृषकों के गीतों के तो अनेक मूल्यवान संग्रह हैं। अब नए युग के गीत भी लिखे जाने लगे हैं।

गीतों की कलात्मकता के लिए यूक्रेन प्रसिद्ध है। यूक्रेन की धुनें ऐसी प्रभावपूर्ण और हृदयस्पर्शी होती हैं कि वहाँ की भाषा न जानकर भी श्रोता आनन्द ले सकता है—उनकी गंभीरता, माधुर्य और आह्लाद स्वयं स्पष्ट हो जाते हैं। यहाँ पेशेवर गानेवाले इतने नहीं हैं जितने बिना पेशेवाले। प्रस्तुतकर्ता और गायक बराबर दौरे करते रहते हैं, और उनके कार्यक्रम एक गाँव से दूसरे गाँव में चलते हैं। वे कहीं भी जाते हैं, उनका हार्दिक स्वागत होता है, और उनके माध्यम से एक प्रदेश के गीत दूसरे प्रदेश में पहुँचते रहते हैं—यह पहले था, यही अब है।

रंगमंच

रूस में अनेक रंगमंच भी हैं जहाँ पेशेवाले और बिना पेशेवाले दोनों ही अपने प्रदर्शन देते हैं। एक स्थान के लोग दूसरे स्थानों पर जाकर भी प्रदर्शन देते हैं। नाटक में रुचि रखने वाली अनेक सोसाइटियाँ हैं। १९५१ में मॉस्को के रंगमंच पर ही २५ उत्तम कोटि के रूसी नाटकों का अभिनय पेशेहीन लोगों के द्वारा दिया गया था। रूस में इस प्रकार के प्रदर्शनों का बड़ा रिवाज है, इस प्रकार की अनेक सोसाइटियाँ हैं। सोवियत समाज के विकास के साथ जनता की अभिरुचि नाटकों में बढ़ी है। सोवियत संघ के सांस्कृतिक भवन वहाँ की विशेषता हैं—यह ऐसे समझें जैसे अपने यहाँ के रवीन्द्र भवन, रवीन्द्र-मंच, कला-भवन, विज्ञान भवन आदि। रंगमंच आदि सांस्कृतिक कार्यों की देखरेख के लिए सोवियत संघ का एक अलग ही मन्त्रालय है—संस्कृति मन्त्रालय जिसके साथ केन्द्रीय व्यवसाय-संघ मंडली भी लगी हुई है।

रंगमंच पर कई बार भारतीय कथाएँ भी अभिनीत होती हैं। मुझे स्मरण है कि भारतीय राजदूत मेनन साहब की परमविदुषी पत्नी श्रीमती सरस्वती मेनन ने मॉस्को में रामकथा से संबंधित एक नाटक का सफल निर्देशन किया था। श्री मेनन के सफल दौत्यकर्म का सांस्कृतिक पक्ष श्रीमती मेनन के द्वारा उतनी ही सफलता के साथ प्रतिपादित होता रहा है। शकुन्तला आदि नाटकों का अभिनय तो कई बार हुआ है। अभिनेता और अभिनेत्रियों के सुनियोजित प्रतिनिधि मंडलों का आदान प्रदान भी होता रहता है।

रजतपट

आज के युग में सिनेमा के द्वारा मैत्री के सूत्र बहुत घने हो जाते हैं।

सिनेमा उद्योग के क्षेत्र में भारत तो एक प्रमुख देश है ही, परन्तु सोवियत संघ भी इस ओर प्रयत्नशील है, और कहा जाता है कि भारत के चलचित्र वहां बहुत लोकप्रिय होते हैं। रूसी-भारतीय सहयोग से कुछ चित्र भी बने हैं। पर अभी तक भारतीय सिनेमा-घरों में रूसी चित्र नहीं दिखाए जाते। फिल्म समारोहों के अवसर पर तो ऐसा होता ही है। अंतर्राष्ट्रीय फिल्म-समारोह वास्तव में ऐसे अवसर प्रदान करते हैं, जब हम अन्य देशों के चलचित्र भी देख पाते हैं, और वहां के जीवन की झांकी करते हैं। कुछ दिनों पूर्व सूचना और प्रसार की उप-मंत्री श्रीमती नन्दिनी सतपथी भारतीय फिल्मों का एक कार्यक्रम लेकर रूस गई थीं। सात फीचर और सात छोटी फिल्में प्रदर्शन के हेतु ले जाई गई थीं। रूसी जनता में भारतीय चलचित्र देखकर भावनात्मक प्रक्रिया भी होती है; जिसका अर्थ यह हुआ कि वे प्रभावित होते हैं। 'वार एण्ड पीस' 'सरमन' 'विस्तृत पूर्वजों की परछाइयाँ' आदि रूसी फिल्में भी भारतीय दर्शकों में इसी प्रकार का भाव उत्पन्न कर सकती हैं। अनुमान है कि यदि इस प्रकार के चलचित्र सामान्य रूप से भारत में दिखाए गए तो वे लोकप्रिय हो सकते हैं। कला की भाषा अंतर्राष्ट्रीय होती है—चित्र कला का यह एक प्रकृत स्वरूप है, चलचित्रों के दर्शन में भाषा का व्यवधान नहीं आता है। अतः रूसी तथा भारतीय चित्र एक दूसरे को आनन्द प्रदान कर सकते हैं। रूस में चलचित्रों का निर्माण साम्यवादी तथा अन्य देशों के सहयोग से हो रहा है। वैसे रूस में फिल्मों के निर्माण की संख्या उतनी नहीं है जितनी भारत में। विश्व में भारत का नाम दूसरे नम्बर पर है, वह प्रति वर्ष ३०० से ऊपर चल-चित्र निर्माण करता है। साथ ही १६० डोक्यूमेंट्री फिल्में भी सरकार के द्वारा निर्मित होती हैं। बच्चों के लिए भी कुछ चलचित्र बनाए जाते हैं।

सोवियत संघ में १३०,००० प्रदर्शनग्रह होंगे, और शायद इतने ही ग्राम्य और नागरिक क्लब भी होंगे, जहाँ ऐसे प्रदर्शनों की व्यवस्था हो सकती है। इस प्रकार भारतीय फिल्मों को रूस में दिखाने की अच्छी संभावनाएं हैं और यही बात सोवियत फिल्मों के बारे में भी कही जा सकती है, क्योंकि भारत में भी प्रदर्शनग्रहों की संख्या काफी बड़ी है।

ताशकंद के २२ सिनेमाघरों में १६६३ के अगस्त में भारत के राष्ट्रीय त्यौहार स्वतंत्रता-दिवस के उपलक्ष में भारतीय फिल्में दिखाई गईं। शहर के सिनेमाघरों में 'धूल का फूल', 'राखी', 'बजती हुई घंटी', इत्यादि १०

भारतीय फिल्में दिखाई गईं। फिल्म दर्शकों ने इन्हें पसंद किया। ११ दिनों के दौरान इन चित्रों को २ लाख १२ हजार नागरिकों ने देखा। इन फिल्मों में 'बिस देश में गंगा बहती है' नामक फिल्म, जिसमें भारत और सोवियत संघ के लोकप्रिय अभिनेता राजकपूर ने भाग लिया था, दर्शकों के लिए विशेष आकर्षक रही। इस फिल्म को ६२ हजार दर्शकों ने देखा। सभी विदेशी मेलों में भारतीय मेला सब से बड़ा एव आकर्षक रहा।

नवम्बर १९६६ में विशेष रूप से भारतीय चलचित्रों के प्रदर्शन की व्यवस्था की गई थी—सिनेमा हाउस का नाम था 'उदारतिक'। 'फूल और पत्थर' सबसे पहले प्रदर्शित हुई। इसके अतिरिक्त 'शहीद', 'तू ही मेरी जिंदगी', 'आरजू', 'छम्मी', 'प्रतिधि', 'पराई गुन्दुकार' आदि अनेक फिल्में थीं। भारत के विमलराय, राजकपूर, सत्यजित रे, बलराज साहनी आदि के नाम वहां बड़े सम्मान के साथ लिए जाते हैं। विविध पत्रों में समाचार प्रकाशित हुए थे, और भारतीय चलचित्रों की बड़ी प्रशंसा हुई थी।

यह प्रतिनिधि-मंडल अजरबाइजान की राजधानी बाकू भी गया—वहां रूसी तथा भारतीय दोनों प्रकार के प्रदर्शन प्रस्तुत किए गए। 'शहीद' चलचित्र की तो बहुत ही प्रशंसा हुई।

मेरा बेटा' चित्र भी अति चर्चित था। यह दोनों देशों के सहयोग से बना चित्र है, और इसे रूसी दूतावास के सांस्कृतिक विभाग में भी अनेक अवसरों पर दिखाया जाता है। यह सोवियत फिल्म 'एक सिपाही का बाप' का हिन्दी-रूपान्तर है। यह एक शान्ति का चित्र है, और जिन लोगों ने लड़ाई की भीषणता देखी है वे इस चित्र को बड़ी प्रशंसा के साथ देखेंगे।

इसी प्रकार मई सन् १९६७ में सोवियत फिल्मों का प्रदर्शन भारत के कई नगरों में हुआ। इसमें तीन रूसी फिल्में बहुत ख्याति प्राप्त थीं—'सरयोझा', 'स्काइलाक' तथा 'अब मैं तुम्हें कैसे पुकारूं'। पहली फिल्म बच्चों से संबंधित है, इसमें बाल-मनोविज्ञान का यथातथ्य चित्रण किया गया है। दूसरी और तीसरी फिल्में रूस की ख्यातिप्राप्त कृतियां हैं। रूस में सिनेमा-निर्माण का कार्य भी काफी गति से चल रहा है, और पिछले वर्ष ही मॉस्को नगर में ही दस नवीन सिनेमा गृह निर्मित हुए बताए जाते हैं। पिछले वर्ष जुलाई ५ से २० तक अंतर्राष्ट्रीय फिल्म प्रदर्शनी हुई, जिसमें ११६ देशों

को भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया। इस प्रदर्शनी में भारत ने भी भाग लिया। सिनेमा दर्शकों के अनुरोध पर इस प्रतियोगिता के प्रदर्शन मॉस्को के अतिरिक्त लेनिनग्राड, कीएव, रीगा, मिंस्क, त्बिलिसी, वोलग्रेड तथा अन्य नगरों में भी हुए। इस अवसर पर प्रसिद्ध अभिनेत्री नरगिस ने लिखा था—'रूस जो कि प्रगतिशील किसान, मजदूर, नेता और वैज्ञानिकों का देश है, मानव पर विशेष बल देता है। गुरुदेव टैगोर की तरह ही मैं भी इस देश के प्रति आकृष्ट हूँ, और निरंतर इसकी प्रगति का अवलोकन करती रहती हूँ। मैंने रूस देखा है, और इसका मुझे गौरव है—यह ऐसा देश है जहाँ काम का महत्व है, ज्ञान ही कला है, और कर्तव्य ही मनुष्य की शान है।' बलराज साहनी ने लिखा था—'सोवियत संघ जिस प्रकार की उन्नति प्रति वर्ष कर रहा है उससे हमारा हृदय प्रसन्नता से उछलता है। आपकी मैत्री हमारी शक्ति का साधन है। फिल्मों का आदान-प्रदान देशों की मैत्री में बड़ा उपयोगी होता है।'

इसी वर्ष कुछ समय उपरान्त भारत के निमंत्रण पर सोवियत फिल्मों के अधिकारी डेवीडोव भारत पधारे थे। इनके यहाँ आने का उद्देश्य था कि फिल्मों का आदान-प्रदान बड़े पैमाने पर हो।

इसमें तो संदेह नहीं कि दोनों देशों की विचार-धारा में पर्याप्त अंतर है, रहन-सहन, रीति-रिवाज, धर्म-परंपराएँ सभी अलग-अलग हैं परन्तु चित्रों, विशेष कर चलचित्रों के माध्यम से जीवन का नैकट्य प्राप्त कर एक दूसरे को समझने में आसानी होती है, और हम अलग-अलग विचारधाराओं के होते हुए भी एक-दूसरे के प्रति सद्भावना रख सकते हैं। यह आवश्यक नहीं कि सहयोगियों की विचार-धारा समान ही हो परन्तु एक दूसरे के प्रति श्रद्धा-सम्मान का भाव, सह-अस्तित्व में दृढ़ विश्वास और मानव के प्रति मानवी दृष्टिकोण बनाना आवश्यक है, चलचित्रों से यह बहुत कुछ संभव है।

### क्रीड़ा-प्रांगण

खेल के मैदान में भी रूस की प्रगति आश्चर्यजनक है। ओलम्पिक खेलों में कितने ही स्वर्ण-पदकों का विजेता सोवियत संघ अनेक नए रिकार्ड स्थापित कर चुका है। स्त्री और पुरुष दोनों ही प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हैं। सोवियत महिलाओं की उपलब्धियाँ तो विश्व को चकित करती रही हैं। कई बार

भारत में रूसी कोचों का भी आह्वान किया गया है।

वालीबॉल सोवियत संघ का लोकप्रिय खेल है, और जहाँ कहीं भी आप जाएँगे वालीबॉल के कोर्ट मिल जाएँगे। सन् १६५२ में मॉस्को की वालीबॉल प्रतियोगिता में भारत भी शामिल हुआ। यद्यपि वहाँ भारतीय टीम विजयी नहीं हो सकी, परन्तु कुछ सफलताएँ अवश्य मिलीं—भारत को छठा स्थान प्राप्त हुआ। भारत की महिला टीम का कार्य अच्छा नहीं रहा क्योंकि भारत में यह खेल पुरुषों तक ही सीमित है। कुछ समय पश्चात् एक सोवियत टीम भी भारत में आमंत्रित हुई। हिंदुस्तान में किएव की 'स्पारतक' टीम भेजी गई थी, और इसके अच्छे प्रदर्शन हुए। अब खेलों की ओर भारत की रुचि बढ़ चली है, और इस ओर भी सोवियत संघ का अच्छा सहयोग है। रूस के विमेनोव दो वर्षों तक भारत में प्रशिक्षण देते रहे। यद्यापि बहुत से ओलम्पिक खेल भारत में नहीं खेले जाते और कुछ केवल प्रारंभिक अवस्था में हैं—पर अब इस ओर ध्यान दिया जाने लगा है, और भारत का क्रीडा स्तर भी बढ़ने लगा है। कुछ में तो अब मॉस्को की टीमें भी भारत को जीतने में कठिनाई का अनुभव करने लगी हैं। अनेक भारतीय क्रीड़ा-विशेषज्ञ सोवियत संघ में प्रशिक्षित हो रहे हैं, और लेनिनग्राड तथा ताशकंद में शिक्षण प्राप्त कर रहे हैं।

## इतिहास पुनर्लेखन

प्रकाशन की दृष्टि से रूस के विद्वानों ने इस बात का ध्यान रखा है कि जो कृतियाँ वे प्रकाशित कराएँ वे उनके मौलिक चिंतन का परिणाम हों। भारत का इतिहास, प्राय, ऐसे लोगों द्वारा लिखा गया जो सत्य का उद्घाटन नहीं करना चाहते थे, और काफी समय तक हम इसी प्रकार का इतिहास पढ़ाते रहे। इतना ही नहीं, हम लोगों ने भी जो पुस्तकें प्रकाशित कराईं उनका प्रमुख आधार भी वे ही पुस्तकें रहीं जो सत्य का अपहरण कर चुकी थीं। अभी कुछ दिनों पूर्व सामन्तवादी भारत का इतिहास—'मध्य युग में भारत का इतिहास' शीर्षक से रूसी भाषा में प्रकाशित हुआ है। मॉस्को के विद्वानों के एक दल ने इस संपूर्ण पुस्तक को प्रस्तुत किया है। इसमें ६वीं शताब्दी से लेकर १८वीं शताब्दी तक के प्रारंभिक वर्षों का इतिहास दिया गया है। पुस्तक में देश के राजनैतिक इतिहास के मुख्य चरणों तथा उसके धार्मिक और सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण पक्षों को लिया गया है। इस पुस्तक के

अनेक अध्याय भारतीय धर्म तथा संस्कृति से संबद्ध हैं। विशेष ध्यान उस युग पर दिया गया है जिसका अध्ययन बहुत कम हुआ है, उदाहरणार्थ भारत का १३वीं शताब्दी का इतिहास। भारत में भी इतिहास के पुनर्लेखन का प्रश्न विद्वानों के सामने आ चुका है, और इस ओर कुछ प्रयास भी हुए हैं, जिनमें एक स्वतंत्र राष्ट्र के नागरिक का दृष्टिकोण रख कर कार्य किया गया है। गुलामी इतिहास के तथ्यों को छिपाने पर मजबूर करती है।

इतिहास के साथ-साथ ऐतिहासिक स्मारकों का काम भी चलता है। कहा जाता है कि रूसी विद्वानों ने यह साबित कर दिया है कि समरकंद उतना ही पुराना है जितना रोम। समरकंद की २५०० वीं वर्ष गाँठ मनाने की तैयारियाँ हो रही हैं। ये जीर्णोद्धारक, वास्तव में, इतिहास के शल्य-चिकित्सक हैं जो इन आश्चर्यजनक रूप के सुन्दर स्मारकों को उनका पुराना सौंदर्य वापिस दिलाते हुए इतिहास के पृष्ठों का पुनर्लेखन-कार्य भी संभव बना रहे हैं।

## रक्षा-बंधन की तरह पवित्र

कई वर्षों पूर्व चेलिशेव ने एक लेख लिखा था। उनका कहना है कि भारत-रूस की मित्रता रक्षा-बंधन की तरह पवित्र और सद्भावना तथा स्नेह से पूरित है। स्नेह के ये धागे दिन प्रतिदिन मजबूत होने ही चाहिएँ। चेलिशेव का भारत में स्वागत होता रहा है। गनेश मंडल नाम के एक विद्यार्थी ने न जाने कितनी दूर दौड़कर उन्हें ईसापूर्व छठी शताब्दी के कुछ मिट्टी-पात्रों के खंड भेंट किए थे। उन्होंने लिखा है—नेहरू में मेरी बड़ी रुचि है, उनका चित्र मेरे साथ रहता है। अनेक अवसरों पर उनका साक्षात्कार हुआ, भाषण सुने। सन् १९५६ में जब वे नेहरू से मिले तो 'हिंदी-रूसी-कोष' तथा रूसी भाषा में लिखित 'गाँधीजी का आत्मचरित'—दो पुस्तकें भेंट की। उस अवसर पर नेहरू ने कहा था—'मुझे आप लोगों का साहित्य प्रिय है। मैंने तालस्ताय, चेखव, गोर्की आदि सभी पढ़े हैं। आपकी किताबें भी अवश्य पढ़ूँगा। चेलिशेव को विश्वास है कि उनके भारतीय मित्र कठिन परिश्रम कर सकेंगे। भारतीयों ने दासता को उखाड़ फेंका है, और नवजीवन का निर्माण कर रहे हैं। पर काम बहुत है—जमीन को जोतना, चट्टानों को तोड़ना नहरों को बनाना—तभी तो मधुर फल प्राप्त होंगे।'

चेलिशेव का कहना है,—'मैंने अपना जीवन भारतीय विद्या और विषयों

के लिए समर्पित कर दिया है। मैं चाहता हूँ कि भारतीय कला और साहित्य से सोवियत जनता परिचित हो। भारत के कलाकारों ने अपने देश के लोगों का जीवन-निर्माण किया, उनकी कृतियां वास्तविकता का प्रतिबिंब हैं, जिनके माध्यम से सोवियत के करोड़ों व्यक्ति भारत को अच्छी तरह समझ सकेंगे। भारत की लगभग ५०० पुस्तकें सोवियत संघ की ४२ भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं—प्रकाशित प्रतियों की संख्या दो करोड़ समझिए। सोवियत जन यशपाल के 'झूठा सच', अमृतलाल नागर के 'बूंद और समुद्र', रेणु के 'मैला आँचल', किशनचंदर के 'एक औरत और हजार पागल' से बहुत प्रभावित हैं। टैगोर, भारती, इकबाल, निराला, पंत आदि की भी प्रशंसा होती है। सुमित्रानंदन पंत का 'लोकायतन' बड़ी रुचि के साथ पढ़ा जाता है।'

परिवर्तन की क्रिया जारी है। भारतीय भी अपने पड़ोसी सोवियत संघ को बहुत कुछ समझने लगे हैं। अंग्रेजों द्वारा प्रसारित मिथ्या धारणाएँ अब दूर हो रही हैं। भारत के लड़के-लड़कियाँ रूसी गाने गाते हैं, सोवियत पुस्तकें पढ़ते हैं, और अनूदित पुस्तकों का अध्ययन करते हैं। भारतीय भाषाओं में सोवियत साहित्य भी प्रकाशित होता है।

### कलकत्ते का प्रथम थियेटर

रूस के एक प्रसिद्ध समुद्रयात्री का एक पत्र-संग्रह सोवियत नौ सेना के केन्द्रीय अभिलेखागार में सुरक्षित है। इसमें १८वीं सदी के अंत और १९वीं सदी के आरंभ में रूसी यात्री लेबदेव के अप्रकाशित पत्र हैं। वे १२ वर्षों तक भारत में रहे। उन्होंने हिंदी तथा बंगला भाषाएँ सीखीं। सन् १७९५ में उन्होंने कलकत्ते में पहला थियेटर खोला, जिसमें बंगला भाषा के नाटक प्रस्तुत किए। बंगला में नाटकों के अनुवाद स्वयं लेबदेव ने किए थे। कलकत्ते की हिंदी बोली का लिखा उनका व्याकरण लंदन में प्रकाशित हुआ। रीति-रिवाज की किताब पीटर्सबर्ग में छपी। एक पत्र में लेबदेव ने यह इच्छा व्यक्त की है कि यदि उनकी मृत्यु हो जाए तो भारत से लाई गई पुस्तकें और पांडुलिपियाँ पीटर्सबर्ग की विज्ञान अकादमी को सौंप दी जाँय।

### इंडियन इंस्टीट्यूट ऑव टैक्नोलॉजी

दस वर्षों पूर्व स्थापित यह संस्था सोवियत संघ से लगभग १२० लाख रुपयों की सामग्री प्राप्त कर चुकी है। इस संस्थान में विज्ञान, अभियांत्रिकी,

मानविकी आदि अनेक विषय हैं। वहां स्नातक, स्नातकोत्तर तथा शोध तक की व्यवस्था है। इसे बहुत से लोग एशिया की सर्वोत्कृष्ट संस्था मानते हैं। इसके बारे में जवाहरलाल नेहरू ने कहा था—'रूस की जो विविध प्रकार की सहायता भारत को मिल रही है उसमें, संभवतः, यह संस्थान सर्वोत्तम है। यह संस्थान बहुत ही उपयोगी व्यक्तियों का निर्माण करेगा, जिनमें उत्तम वैज्ञानिक और उत्तम तकनीकी होंगे। भारत-सोवियत विद्वानों का एक आयोग भी बना जो उत्तम पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण कर सके। भारत सरकार की ओर से यह संस्था तकनीकी प्रकाशन का सर्वोत्तम माध्यम है। इस संस्थान के पुस्तकालय तथा प्रयोगशालाएँ बहुत समृद्ध हैं। यहां का कार्य-संचालन विद्यार्थियों द्वारा ही होता है, उन्हें इस बात की भी छूट है कि यदि वे उचित समझें तो संस्थान की आलोचना भी करें। पुस्तकों के अनुदान में रूस ने काफी उदारता दिखाई है, साथ ही अध्यापक भी काफी मात्रा में भेजे हैं। पठन-पाठन में रूसी तथा भारतीय सहयोग बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। इसका सम्बन्ध औद्योगिक केन्द्रों से भी है अतः इसके सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों पक्ष प्रबल हैं। भारत-सोवियत सांस्कृतिक आदान-प्रदान के अन्तर्गत बहुत से अध्यापकों का इधर-उधर जाना भी संभव होता है।

## रूसी अध्ययन-संस्थान

इस संस्थान का उद्घाटन १४ नवम्बर, १९६५ को हुआ। यहां भारत के लोग रूसी भाषा और साहित्य का अध्ययन कर सकेंगे। रूस के सामान्य जीवन को जानना, रूस के दार्शनिक पक्ष का अनुशीलन करना, वहां की तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति से परिचित होना आदि भी सम्भव हो सकेगा। यह वही दिन है जब नेहरू की जन्म-तिथि 'बाल-दिवस' के रूप में मनाई जाती है। चागला के शब्दों में सोवियत संघ और सोवियत जनों का जवाहरलाल नेहरू से बढ़कर कोई मित्र नहीं था। वही भारत-सोवियत मैत्री का निर्माता था। सोवियत जनों का वह बड़ा प्रशंसक था। जिस बहादुरी और धैर्य के साथ सोवियत जनता ने नाजी आक्रमण का मुकाबिला किया, इसका वह प्रशंसक था। वह इस बात से और भी प्रसन्न था कि किस प्रकार एक नये समाज का निर्माण हुआ, और सोवियत संघ विश्व के महान् प्रगतिशील राष्ट्रों में विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र में अग्रगण्य बन गया। जब 'जवाहरलाल विश्वविद्यालय' पूरी तरह

संस्थापित हो जाएगा तो यह संस्थान उसी का एक अंग बन जाएगा। इसका उद्घाटन उच्च तथा माध्यमिक शिक्षा के सोवियत मंत्री श्री येलूतिन ने किया था।

श्री चागला और येलूतिन की वार्ता के फलस्वरूप स्थापित यह संस्थान एक-वर्षीय और त्रि वर्षीय पाठ्यक्रमों से रूसी भाषा की पढ़ाई का प्रबन्ध करेगा। जो विद्यार्थी सोवियत संघ में जा कर उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं वे यहां पूरी तरह तैयार हो सकेंगे, ताकि समय की बचत और धन प्रवाह की कमी सम्भव हो सके। यहां शीघ्र ही स्नातकोत्तर तथा शोध कार्य की भी व्यवस्था होगी। रूसी भाषा और साहित्य पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। शिक्षक तथा शिक्षार्थी का अनुपात १ और १२ का होगा। कम से कम ५० प्रतिशत छात्रों को छात्रवृत्तियां मिलेंगी। भाषा और साहित्य के अतिरिक्त रूसी इतिहास, भूगोल, संस्कृति, कला, दर्शन आदि पढ़ाने की व्यवस्था भी होगी। दोनों देशों को एक दूसरे के निकट लाने में यह प्रयोग और प्रयास नि:सन्देह सफल होगा।

रूसी अध्ययन संस्थान से भाषा की रुकावट दूर हो जाएगी। सोवियत संघ में तो भारतीय भाषाओं के गहन अध्ययन की व्यवस्था है परन्तु भारत में अभी इसका श्रीगणेश ही है। 'संघ' की अनेक संस्थाओं में, वैज्ञानिक विधि से कई भारतीय भाषाएँ, जैसे बंगाली, हिन्दी, मराठी, पंजाबी, तमिल, उर्दू पढ़ाई जाती हैं। पाठ्य-पुस्तकों, कोष, सहायक पुस्तकों आदि के काम भी किये जा रहे हैं। जहां तक अनुवाद का प्रश्न है दोनों ओर प्रयत्न जारी हैं। सोवियत संघ में 'इंडोलॉजी' केवल भाषा-विज्ञान तक ही सीमित नहीं है, यहां भारतीय इतिहास, अर्थशास्त्र, सामान्य जीवन, संस्कृति और कला का अध्ययन भी कराया जाता है। यहां के विश्वविद्यालयों में अभी तक रूसी शिक्षा की व्यवस्था इतनी समुचित नहीं थी जितनी अपेक्षित है। अब इस अभाव की पूर्ति रूसी शिक्षा-संस्थान करेगा।

१९१७ से

सोवियत क्रान्ति और भारतीय स्वतंत्रता में दोनों देशों ने पारस्परिक बड़ी रुचि ली है। सन् १९१७ में भारतीय क्रान्तिकारियों ने एक प्रस्ताव पास कर सोवियत सरकार को भेजा था—'सोवियत सरकार ने जो विजय प्राप्त की है

उसके प्रति भारत सम्मान प्रदर्शित करता है। इससे सम्पूर्ण विश्व में लोकतंत्र का सिर ऊँचा हुआ है। सत्ता हाथ में लेने पर सोवियत संघ ने जो मानवी सिद्धान्तों की घोषणा की है उस पर भारत को प्रसन्नता है। भारत की भगवान से प्रार्थना है कि आप अपने सिद्धान्तों को अक्षुण्ण रखने की शक्ति प्राप्त करें।' उस समय लेनिन के बारे में भी अनेक प्रशंसापूर्ण लेख निकले। ब्रिटिश सरकार का बहुत कुछ नियंत्रण होने पर भी राजा महेन्द्रप्रताप, मुहम्मद बरकतुल्ला खाँकोजे प्रभृति क्रान्तिकारी रूस गये जहां उनका स्वागत स्वयं लेनिन ने किया। लेनिन व्यक्तिगत रूप से इसमें रुचि रखता था, और भारत में जो कुछ होता था पूरी निगाह रखते हुए भारत के स्वतंत्रता-आन्दोलन का पक्का हिमायती था। उस पर वह ब्रिटिश राज की अत्याचारपूर्ण नीति का विरोधी था। जब कभी भारत में या अन्यत्र ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध विद्रोह हुए तो लेनिन ने उनकी हिमायत की।

१९४७ तक

लगभग २० वर्ष पूर्व भारत-रूस के बीच राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित हुए। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में यह एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। दोनों देशों की नजदीकी के अतिरिक्त अन्य अनेक समानताएँ हैं। पुराने जमाने में संस्कृति, व्यापार, वाणिज्य आदि क्षेत्रों में दोनों देशों के बीच निरन्तर सम्बन्ध कायम था। उस जमाने की यात्रा आसान नहीं थी, आनन्द से अधिक खतरा था। फिर भी कुछ साहसी व्यक्तियों ने एक-दूसरे देशों की यात्राएँ की थीं। ब्रिटिश-शासन की स्थापना से प्राचीन सम्बन्धों में व्याघात हुआ। विदेशी शासन ने आदान-प्रदान रोकने के लिए अनेक दीवारें खड़ी करदीं, फिर भी नेहरू और टैगोर जैसे महामानव, प्रतिबन्धों को तोड़ कर सोवियत संघ पहुंचे। सोवियत संघ ने भी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए भारतीय जनता के प्रति गहरी अभिरुचि और सहानुभूति प्रगट की। भारतीय जनता के बलिदानों की समग्र सोवियत जनता ने सराहना की। लेनिन ने कहा था कि जनता अपनी प्रगति के लक्ष्य तक तभी बढ़ सकती है जब वह अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद से लड़ने वाली शक्तियों से नाता जोड़े। जब भारत स्वतंत्र हुआ तो सोवियत जनता ने इसका अभिनन्दन एशिया-अफ्रीका की गुलाम-जनता के लिए एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण घटना के रूप में किया। और तब स्थापना हुई भारत

और सोवियत संघ के बीच दृढ़ मैत्री-सम्बन्धों की—स्थापनकर्त्ता थे जवाहर-लाल नेहरू।

तब से

दोनों देश संस्कृति के क्षेत्र में भी एक दूसरे का सहयोग कर रहे हैं। कलाकारों, संगीतज्ञों, गायकों, नर्तकों, आदि के शिष्ट मण्डलों की यात्रा एक नियमित विशेषता बन चुकी है। बड़े बड़े भारतीय लेखकों की पुस्तकें—पुरानी और आधुनिक—सोवियत जनगण की विभिन्न भाषाओं में, बड़ी संख्या में, प्रकाशित होती हैं। इसी तरह सोवियत लेखकों की कृतियां भी भारत में प्रकाशित की जाती हैं। पुस्तकों की प्रदर्शनी, फिल्म-महोत्सव, वैज्ञानिकों और शिक्षा शास्त्रियों के शिष्ट मण्डलों की यात्राओं आदि से दोनों देशों के जनगण एक दूसरे के अधिक निकट हो रहे हैं।

भारत सोवियत मैत्री विश्व शान्ति की सुरक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक है। दोनों देश बहुत ही बड़े हैं। भारत की शान्ति और शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व तथा फौजी गुटों से अलग रहने की नीति से शान्ति के ध्येय की प्रगति होती है। सोवियत संघ भी शान्ति का इच्छुक है, और इस प्रकार दोनों देशों के उद्देश्य समान हैं।

## सांस्कृतिक परिषदों की स्थापना

भारतीय वैज्ञानिकों का प्रथम शिष्ट मण्डल सन १९५२ में सोवियत संघ की यात्रा पर गया। इस मण्डल के नेता डॉ वालिया ने इस बात को बहुत पसंद किया कि दोनों देशों के बीच व्यवस्थित रूप से सांस्कृतिक सहयोग हो। अब तो यह बीज बढ़ कर विशाल वृक्ष हो गया है। हर प्रकार का सहयोग तीव्र गति से बढ़ रहा है। भारत में 'इस्कस' शब्द बहुत प्रचलित हो गया है, और उधर रूस में भी इस ओर काफी प्रगति है। सोवियत भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्धों की परिषद् के वर्तमान अध्यक्ष नि० रचीतिसन हैं और और भारतीय सोवियत सांस्कृतिक परिषद् के वर्तमान अध्यक्ष हैं कुमार पद्म शिवशंकर मेनन (के० पी० एस० मेनन)।

## के० पी० एस० मेनन

भारत सोवियत सांस्कृतिक सम्बन्धों में आशातीत वृद्धि का बहुत कुछ श्रेय

श्री के.पी.एस. मेनन को है। श्री मेनन का व्यक्तित्व बेजोड़ है। मेनन जैसा वक्ता, लेखक, साहित्यकार, प्रशासक, राजदूत और पर्यटक मिलना बहुत कठिन है। चीन के पर्यटक ह्वानसांग का ऋण आपने ही चुकाया जब आपने 'दिल्ली से चुंकिंग' की यात्रा खुरकी के रास्ते से की। 'हिंदी-चीनी भाई-भाई' का नारा उनके ही दौत्य-कर्म का परिणाम था, और भारत-रूस के मैत्रीपूर्ण संबंधों का श्रेय भी, काफी सीमा तक, उनको दिया जा सकता है। श्री मेनन ने विश्व के प्रायः सभी महाद्वीपों में महत्त्वपूर्ण कार्य किए हैं। १९४५ में वे सेनफ्रांसिस्को कांफ्रेंस में भारत के मुख्य परामर्शदाता थे, और १९४७ में कोरिया-आयोग के अध्यक्ष। इस प्रसंग में उनका सबसे महत्त्वपूर्ण कार्यकाल सोवियत संघ में भारत के राजदूत पद पर १९५२ से १९६१-नौ वर्षों तक प्रतिष्ठित रहना है। भारत-सोवियत सांस्कृतिक परिषद् के अध्यक्ष होने के साथ साथ आप 'सोवियत भूमि' नेहरू पुरस्कार समिति के भी अध्यक्ष हैं। रूसी-अध्ययन-संस्थान में भी आप महत्त्वपूर्ण पद पर आसीन हैं। क्रान्ति की ५०वीं जयन्ती के महोत्सव पर आप भी रूस गए, और वहाँ आपका भव्य स्वागत हुआ। जब दिल्ली-मास्को का हवाई मार्ग खुला तो आपको प्रथम यात्रा के प्रमुख यात्री बनने के लिए आमंत्रित किया गया। रूस से आपका निकटतम संबंध है, और आपकी धर्मपत्नी श्रीमती मेनन तो रूसी भाषा की भी पंडिता हैं। आपने चीनी भाषा का भी अध्ययन किया। पश्तो, संस्कृत, सिंघाली आदि भाषाओं पर भी आपका आधिपत्य है। भारत-सोवियत सांस्कृतिक परिषद् का आज इतना विस्तार है—बताया जाता है इसकी ४०० से ऊपर शाखाएँ हैं, और प्रत्येक बड़े नगर में इसका संगठन है। इस संगठन का कुछ रूप तब देखने में आया जब पिछले दिनों गुंटूर में 'इस्कस' का सम्मेलन हुआ, और जब क्रांति की ५०वीं जयन्ती मनाई गई थी।

## सोवियत सत्ता की सुवर्ण-जयन्ती

पिछले वर्ष रूस की महाक्रान्ति और सोवियत सत्ता की ५०वीं जयन्ती, सुवर्ण जयन्ती के रूप में मनाई गई। रूस में ही नहीं, विश्व के अनेक देशों में इस अवसर पर समारोह आयोजित किए गए। भारत में तो यह समारोह भाषणों द्वारा ही नहीं, संगीत और नृत्य के माध्यम से भी मनाया गया। नई दिल्ली में जो आयोजन हुआ उसमें राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति आदि उच्च अधिकारी शामिल थे। गांधी मैदान में हुई विशाल सभा का तो कुछ विस्तार ही

न पूछिए। इस अवसर पर प्रधान मन्त्री ने बधाई देते हुए भाषण दिया और कामना की कि सोवियत जनता के अनुरूप ही भारत भी आगे बढ़े। नई दिल्ली के मावलंकर ऑडिटोरियम मे उजबेक कलाकारों के प्रदर्शन हुए। बम्बई के सुंदरबाई हॉल मे एक सभा हुई। कलकत्ता के रांजी स्टेडियम में अजय मुखर्जी ने समारोह का उद्घाटन किया। दिल्ली मे नागरिकों की ओर से हुई सभा मे प्रसिद्ध क्रांतिकारी अरुणा बोली। हैदराबाद, विजयवाड़ा, मैंगलोर, मैसूर, मद्रास, बँगलोर, गूटूर आदि मे भी आयोजन हुए। सच तो यह है कि सारे देश मे उल्लास छा गया। जोधपुर में भी एक सभा का आयोजन हुआ; भिलाई, रांची, ऋषिकेश, हरिद्वार, बोकारो आदि की तो बात ही अलग है।

## दो जयन्तियां

महान क्रांति की ५०वीं जयंती के अवसर पर भारत स्वतंत्रता की २०वीं जयंती भी मनाई गई। इस प्रसंग में दोनों देशों के बीच जो सद्भावनापूर्ण सन्देश तथा प्रतिनिधि मण्डलों के आदान प्रदान हुए वे किसी भी व्यक्ति को यह सोचने के लिए मजबूर कर देते हैं कि दोनों देशों के सम्बन्ध बहुत ही मैत्रीपूर्ण हैं, और किसी प्रकार का मनोमालिन्य नहीं है। ये दोनों समारोह भारत तथा रूस दोनों ही जगह मनाए गए, इसका उल्लेख सांस्कृतिक समझौते के अंतर्गत भी था। इस बात पर विशेष रूप से विचार किया गया कि प्रगति के क्षेत्र में क्या कार्य हुए और सहयोग का रूप कितना दृढ़ हुआ। इस प्रसंग में पाशिन के उद्गार उल्लेखनीय हैं—'भारत की निरपेक्षता तथा गुटबन्दी से अलग रहने की नीति ने उसे सभी शान्तिप्रिय देशों और नागरिकों का सम्मान प्रदान कराया है और विश्व में उसका स्थान ऊंचा हुआ है। इस अवसर पर इनोसोव ने लिखा था— सोवियत जन भारतीयों के प्रति बहुत ही सम्मान और प्रेम का भाव रखते हैं और उनके प्रयासों से आजाद होने की सफलता और प्रसन्नता में अपनी भावनाएँ मिलाते हैं। अपनी स्वतन्त्रता को मजबूत बनाने में भारत की जो कठिनाइयाँ और समस्याएँ हैं उनको सोवियत जनता भली प्रकार समझती है।

मैत्री के ये कदम डगमगा नहीं सकते, क्योंकि दोनों देशों के बीच समानता की काफी बातें हैं और सबसे प्रमुख बात तो यह है कि जैसे सोवियत जनता ने सैकड़ों वर्षों के अत्याचारों के बाद मुक्ति पाई, वैसे ही भारत ने भी शताब्दियों की

दासता के पश्चात् स्वतन्त्रता प्राप्त की। सोवियत संघ के सामने यह प्रश्न था कि देश के पिछड़ेपन को कैसे दूर किया जाए, विकास कैसे हो, विविध क्षेत्रों में कैसे आगे बढ़ कर विकसित देशों के समकक्ष पहुंचा जाए। उसने यह सब कुछ किया और वह भारत की परिस्थिति, उसके संकल्प, उसकी समस्याओं और कठिनाइयों को भी समझता है। दोनों देश एक दूसरे को जानते हैं फिर उनकी मैत्री क्यों न दृढ़ हो ?

## सांस्कृतिक संबंध—नई चोटियां, नई सीमाएं

जिस प्रकार सोवियत क्रान्ति की जयन्ती भारत में मनाई गई उसी प्रकार भारत के राष्ट्रीय पर्व सोवियत संघ में मनाए जाते हैं। सुवर्ण जयन्ती के अवसर पर जब नि० स्तोलिन भारत में थे, सम्पूर्ण भारत में एक अपूर्व उत्साह की लहर देखी गई। सोवियत संघ की यात्रा करने वाले भारतीयों ने अनेक बार कहा कि विश्व के किसी भी दूसरे देश में भारत के राष्ट्रीय पर्व इतने हर्ष व उत्साह से नहीं मनाए जाते जितने सोवियत संघ में। सोवियत लोगों में भारत सम्बन्धी रुचि और ज्ञान देख कर प्रसन्नता होती है, क्योंकि इसमें दोनों देशों के सांस्कृतिक समाज का हाथ है।

पिछले कुछ वर्षों में मैत्री के कुछ नए तथ्य सामने आए हैं, जिससे वह मैत्री और भी व्यापक और गहरी हो गई है। भारत के विभिन्न प्रदेशों और विभिन्न सोवियत जनतन्त्रों के बीच मैत्री-सम्बन्ध स्थापित किए गए। उदाहरण के लिए पंजाब और उज़्बेकिस्तान, केरल और कज़ाखिस्तान, आन्ध्रप्रदेश और आर्मीनिया के बीच मैत्री सम्बन्ध कायम हुए हैं। हमारे देशों की जनता की मैत्री को सुदृढ़ बनाने में कलाकार एक विशेष भूमिका अदा करते हैं। यही कारण है कि सोवियत संघ में भारतीय कलाकारों के कार्यक्रम बहुत ही सफल होते हैं। ताजिकिस्तान में भारतीय कला-प्रदर्शनी के लिए लिखा था—'जब हमने भारतीय कला की यह प्रदर्शनी देखी तो हमारे सामने कला की नई चोटियां, नयी सीमाएं प्रकट हुईं, यद्यपि ताजिक कलाकारों ने अपनी कृतियों में उच्चतम कला का परिचय दिया है। सांस्कृतिक सम्बन्धों में इस प्रकार की दोस्ती मजबूत होती है; और जनता निकट आती है।

## शास्त्री की कांस्य प्रतिमा

लालबहादुर शास्त्री का निधन ताशकंद में हुआ। उनकी मृत्यु भारतीय

इतिहास मे एक स्थान रखती है और ताशकद भावना को जागृत करती रहती है। सोवियत जनों ने हमारे इस मृत नेता को बहुत सम्मान प्रदान किया। जैसे पटियाला में ताशकन्द स्ट्रीट है, उसी प्रकार ताशकन्द मे शास्त्री स्ट्रीट है। लालबहादुर शास्त्री पर दो रील लम्बी एक रगीन फिल्म भी बनाई गई है। कुछ महीनों पूर्व श्री यशपाल जैन के नेतृत्व मे दिल्ली के मेयर श्री हसराज गुप्त, पत्रकार श्री अक्षयकुमार, अखिल भारतीय खडेलवाल वैश्य महासभा के कार्यवाहक प्रधान मंत्री श्री ताराचंद खडेलवाल और प्रसिद्ध ससद सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री का एक शिष्ट मडल एक आवक्ष कास्य प्रतिमा उजवेक सरकार को भेंट करने गया था। इस अवसर पर महापौर श्री हसराज गुप्त ने कहा था—'सोवियत सघ की यात्रा अपने आप में एक शिक्षा है।' सुना है कि अभी कुछ ही दिनों मे श्री हसराज गुप्त सोवियत सघ आदि देशों के निमत्रण पर उधर जाने वाले हैं। कुछ समय पूर्व श्री शास्त्री की धर्मपत्नी ने भी सपरिवार ताशकंद की यात्रा की थी—नित्य प्रति अपने पति की समाधि पर पुष्प अर्पित करने वाली इस साध्वी महिला की मानसिक स्थिति ताशकद पहुँच कर क्या हुई होगी !

### सास्कृतिक करार

सोवियत सघ और भारत के बीच अभी एक ही वर्ष पूर्व एक सास्कृतिक करार पर हस्ताक्षर हुए। हस्ताक्षर करते हुए के पी एस मेनन ने कहा—मैं देशों के करार पर दस्तखत करता आया हूँ आज दो सांस्कृतिक सस्थानों के करार पर दस्तखत हो रहे हैं। यह सरकारो की मैत्री न होकर नागरिकों की मैत्री का द्योतक है।' उधर से काबुलोव ने हस्ताक्षरों की प्रथा अदा की। इस करार की कुछ बातें द्रष्टव्य हैं, और दोनों देशों के सबधों पर प्रकाश डालती हैं—

'अक्टूबर क्रान्ति की ५०वीं वर्षगाठ के अवसर पर ३ व्यक्तियों का शिष्ट-मडल १४ दिन के दौरे पर सोवियत सघ जाएगा, और भारतीय स्वतत्रता प्राप्ति की २०वीं जयन्ती के अवसर पर ३ व्यक्तियों का शिष्ट मडल भारत के दौरे पर आएगा।' इसके अतिरिक्त कई अन्य बातें थीं—

१ भारतीय पत्रकारो का २ व्यक्तियों का मडल २० दिन के दौरे पर रूस।

ii भारत-सोवियत सांस्कृतिक परिषद् के ३ प्रतिनिधि १४ दिन के दौरे पर रूस।

iii रूस का सबसे अच्छा भारतीय ज्ञाता १५ दिनों के लिए रूस।

iv ७ भारतीय अभिनेताओं का शिष्टमंडल १० दिन के लिए उजबेकिस्तान।

v पश्चिम बंगाल की शाखा के २ सदस्य १० दिन के लिए सोवियत संघ।

vi मैसूर शाखा का प्रतिनिधिमंडल १० दिन के लिए सोवियत संघ।

vii रूसी भाषा के ५ अध्यापक मॉस्को विश्वविद्यालय के निमन्त्रण पर १० मास मॉस्को में।

viii अन्य ५ रूसी भाषा के अध्यापक लुमुम्बा विश्वविद्यालय को।

भारत की ओर से निमन्त्रण था कि—

i सोवियत संघ के २ व्यक्ति १४ दिन के लिए मैसूर।

ii अन्य २ व्यक्ति आंध्र प्रदेश के दौरे के लिए।

iii ५ अभिनेताओं सहित ७ व्यक्तियों का मंडल भारत के दौरे पर।

iv १० दिन के लिए ३ व्यक्ति गुजरात के दौरे पर।

v पर्यटकों का एक समुदाय १० दिन के लिए भारत।

साथ ही रूस में—

(१) भारत की २०वीं स्वतंत्रता जयन्ती मनाई जाए।

(२) जवाहरलाल नेहरू का जन्म दिवस मनाया जाए, तथा

(३) कूटनीतिक संबंधों की २०वीं जयन्ती मनाई जाए।

इधर भारत में—

(१) क्रान्ति की ५०वीं जयन्ती आयोजित हो।

(२) लेनिन का जन्म-दिवस मनाया जाए।

(३) कूटनीतिक संबंधों की २०वीं जयन्ती मनाई जाए।

भारत और सोवियत संघ के बीच चित्र, फोटो, पुस्तक, स्लाइड्स, रिकार्ड्स, समाचार-पत्र, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं का आदान-प्रदान हो।

इस प्रकार के सभी संभव योजनाएँ रखी गईं जिनके द्वारा दोनों देशों के

बीच सांस्कृतिक व्यवस्था इतनी दृढ़ हो जाए कि मैत्री निरंतर घनी होती रहे, और दोनों एक दूसरे को समझते रहें।

प्रसन्नता का विषय है कि प्रायः सभी योजनाएँ क्रियान्वित हुईं। कूटनीतिक संबंधों की २० वर्षीय जयन्ती धूम धाम से मनाई गई, और पारस्परिक सदेशों के आदान-प्रदान में इस बात पर प्रकाश डाला गया कि दोनों देशों के बीच संबंध दृढ़तर होते रहें। ये संबंध १३ अप्रैल सन् १६४७ को स्थापित हुए थे और सन् १६६७ में इन्हे २० वर्ष हो गए। इस बीच रूस ने सर्वदा इस बात का ध्यान रखा कि विभिन्न सामाजिक व्यवस्था होने पर भी शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की आवश्यकता मानी जाए। इस बात को भी माना गया कि जो देश साम्यवादी तो नहीं है पर पूंजीवाद के विपरीत विकास मार्ग का अनुसरण कर अपनी राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था कायम रखना चाहते हैं उनके साथ भी वही मैत्रीपूर्ण व्यवहार होना चाहिए। ४० वर्षों पूर्व भारत के ताज-रहित बादशाह जवाहरलाल नेहरू इस निर्णय पर पहुँचे थे कि ब्रिटिश सरकार का कोई रुख क्यों न हो पर भारत और रूस तो निश्चय ही मित्र बन कर रहेंगे। और यह बात चरितार्थ हुई।

## एक और समझौता

अभी अभी कुछ सप्ताहों पूर्व भारत सरकार के शिक्षा-मंत्रालय तथा सोवियत संघ के विदेश मंत्रालय के बीच एक और समझौता हुआ है। इसमें विज्ञान, शिक्षा, स्वास्थ्य, खेलकूद, सिनेमा, रेडियो, दूरदर्शन, कला संस्कृति-प्रदर्शनी और अन्तरनगरीय आदान-प्रदान पर बल दिया गया है। १६६८-६६ में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ४०० व्यक्तियों का आदान-प्रदान होगा—६८ विज्ञान के क्षेत्र से, २२८ शिक्षा के क्षेत्र से, १२ स्वास्थ्य के क्षेत्र से, ४० खेल कूद से, १६ सिनेमा रेडियो से, १११ संस्कृति और कला क्षेत्र से और १० अंतरनगरीय आदान प्रदान के अन्तर्गत होंगे। पिछले वर्ष जो कार्यक्रम रहा उसके अन्तर्गत १३८ व्यक्ति सोवियत संघ से भारत आए थे, तथा ७७ भारतीयों ने सोवियत संघ की यात्रा की थी। इस वर्ष संख्या दुगुनी से भी अधिक हो गई है। निश्चय ही आदान प्रदान की ये यात्राएँ बहुत लाभप्रद होंगी। जीवन के सभी क्षेत्रों में मिलना जुलना, भाग लेना विचार-विनिमय करना उपयुक्त होता है, और भारत तथा रूस दोनों ही इस ओर सक्रिय हैं।

## सम्मानित और पुरस्कृत

जिस समय के० पी० एस० मेनन अपने राजदूत-पद की समाप्ति के उपरांत मास्को से विदा हो रहे थे तो वहां के विश्वविद्यालय ने आपको इतिहास विषय में उच्चतम उपाधि से विभूषित किया। उस समय कहा गया था कि मेनन साहब ही ऐसे प्रथम व्यक्ति हैं जिन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ है अन्यथा रूस के विश्वविद्यालय आँनरेरी उपाधियाँ नहीं देते। इसी प्रकार पिछले वर्ष सन् १९६७ में जो लेनिन पुरस्कार मिले उनमें शांति-परिषद के महासचिव श्री रमेशचंद्र भी हैं। रमेशचंद्र सन् १९३७ से ही समाजवादी और मेहनतकश लोगों के साथ संबंधित रहे हैं। हिंदी भाषा के कई ख्यातिप्राप्त विद्वान भी पुरस्कृत हो चुके हैं। डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन' उत्तरी मंडल के तो अध्यक्ष हैं ही, इन्हें नेहरू पुरस्कार भी मिल चुका है। सुमित्रानंदन पंत तथा रघुपति-सहाय 'फिराक' भी पुरस्कृत हुए हैं। बनारसीदास चतुर्वेदी और यज्ञदत्त शर्मा भी इसी प्रकार सम्मानित हुए। राजस्थान की रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत भी एक पुरस्कार पा चुकी हैं। ख्वाजा अहमद अब्बास तो विशेष रूप से सम्मानित हुए हैं। अनेक लेखकों की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद कर उन्हें सम्मानित किया है।

## स्नेह-बंधन का रहस्य

भारत-सोवियत मैत्री के इस स्नेह-बंधन का रहस्य आखिर क्या है? इस प्रश्न पर अनेक व्यक्तियों ने अपने विचार स्पष्ट किए हैं। सुनीतिकुमार चटर्जी के शब्दों में इसका रहस्य दोनों देशों की 'शांति-प्रियता' है। भारत स्वभाव से शांतिप्रिय है और उसका महान सिद्धांत 'अहिंसा' रहा है। इसी प्रकार भारत का महान पड़ोसी देश रूस भी 'मिरू मिर' यानी विश्व-शांति में विश्वास रखता है। भारत और सोवियत संघ की इस विशेषता के कारण ही 'मिलते क्षितिज' नाम की सार्थकता है। वैसे तो मानव होने के नाते हम सब भाई भाई हैं पर रूस और भारत के बीच कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनसे पारस्परिक संबंध इतने घने हो चले हैं।

सर्वप्रथम भाषा का ही प्रेम-बंधन है। रूसी, बाल्ट, आर्मेनियन, ताजिक सभी भाषाएँ भारत यूरोपीय परिवार की हैं, और हिंदुस्तान में इसी परिवार की संस्कृत तथा आधुनिक और मध्यकालीन आर्य भाषाएँ हैं। संस्कृत की एक विशेषता यह भी है कि उसने देश की सभी दक्षिणी भाषाओं को शब्दों के

माध्यम से पोषित किया है। सोवियत संघ के सभी लोग रूसी सीखते हैं और अब यहाँ भी 'रूसी भाषा अध्ययन-संस्थान' होने से रूसी प्रचार बढ़ेगा। अनेक विश्वविद्यालयों में तो पहिले से ही रूसी भाषा सिखाई जाती है। इस प्रकार सम्पूर्ण सोवियत संघ हमारे निकट होता जा रहा है। न केवल रूसी तथा स्लैव वरन् मध्य एशिया के पूर्वी तुर्की, उजबेक, तुर्कमन, कज्जाक तथा किर्गीज भी शताब्दियों से भारत के साथ घनिष्ठ संबंध रखते आए हैं।

वैसे देखा जाय तो भारत तथा रूस के संबंध हजारों वर्ष पुराने हैं। बाकू बातूम आदि से व्यापार होता रहा है, सिंध और पंजाब के व्यापारियों ने जो हिंदू मंदिर मध्य एशिया के विविध नगरों में बनवाए वे हमारे सांस्कृतिक संबंधों की प्राचीनता के परिपोषक हैं। अब भी भारत में लगभग एक सहस्र भारतीय नागरिक ऐसे हैं जो आर्मीनियन परम्परा के हैं और जो अभी तक अपने धर्म और भाषा को रखे हुए हैं—उनकी भाषा, संस्कृति और धर्म आर्मेनिया पर ही आधारित है।

सोवियत संघ को विज्ञान की महान प्रगति को देख कर आज का नवयुवक रूस के निकट हो चला है। वहां की आर्थिक व्यवस्था भी भारत के काफी लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती है। अब ऐसा युग नहीं कि शोषित चुपचाप बैठा रहे। वे उठ खड़े हुए हैं, और प्रेरणा का स्रोत आया सोवियत संघ से।

भारत और रूस का साहित्यिक संपर्क अंग्रेजी भाषा के माध्यम से हुआ। तालस्ताय, गोगोल, दोस्तोव्स्की, तुर्गनेव, पुश्किन, चेखव, गोर्की आदि तो रूसी भाषा के महान साहित्यकार हैं ही—इन सब का साहित्य अंग्रेजी भाषा के माध्यम से भारत में प्रसारित हुआ। ब्रिटिश काल में रूसी भाषा, विचार, दर्शन, आदान प्रदान पर एक प्रकार से रोक सी थी, पर तु स्वतंत्रता के पश्चात् रूस और भारत का संपर्क बहुत बढ़ गया। रूसी भाषा, साहित्य, इतिहास, कला, संस्कृति, विज्ञान, तक्नीकी ज्ञान—सभी का अध्ययन किया जाने लगा, और इस समय भारत में लगभग एक दर्जन तो ऐसे संस्थान होंगे ही जहाँ रूसी विषय पढ़ाए जाते हैं। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी भाषा-प्रसार योजना में रूसी भाषा रखने का ध्यान रखता है। उधर रूसी विद्वानों ने भारत की भाषा संस्कृत [illegible] है। [illegible]रत के [illegible] विद्वानों [illegible] तारस्की, [illegible]

# साहित्यिक धरातल पर

भारत और रूस के बीच सभी क्षेत्रों में आदान-प्रदान हुआ है पर साहित्य के क्षेत्र में यह आदान-प्रदान स्थायित्व के गुण रखता है। सोवियत विचारधारा भारत में पनपी है, और आज का भारतीय साहित्य उससे प्रभावित है, इसी प्रकार सोवियत संघ में भारतीय साहित्य का बहुत प्रचार हुआ है, और यह साहित्य बड़ी निष्ठा और रुचि के साथ वहाँ पढ़ा जाता है।

## 'बोल्शेविक जादूगर 'लेनिन' और 'नया रूस'

काफी पहले आधुनिक सोवियत संघ तथा लेनिन पर कई पुस्तकें निकलीं। सन् १६२० में प्रकाशित 'रूस की राज्य-क्रान्ति' के लेखक थे श्री रमाशंकर अवस्थी। इन्हीं के द्वारा १६२१ में एक अन्य पुस्तक निकली, जिसका शीर्षक था—'बोल्शेविक जादूगर (लेनिन)। श्री देवदत्त शास्त्री ने 'वर्तमान रूस' नाम से एक अन्य पुस्तक लिखी, और सन् १६२२ में हसन अजीज भोपाली ने एक पुस्तक प्रकाशित करवाई जिसका नाम था—'लेनिन और इन्कलाबे रूस'। उस समय रूसी क्रान्ति से भारत बहुत प्रभावित हुआ था। महात्मा गांधी ने इस क्रान्ति के संबंध में कहा था—'इसमें कोई प्रश्न ही नहीं उठता कि बोल्शेविक आदर्श के पीछे असंख्य नर-नारियों का पवित्र बलिदान है। इन लोगों ने अपने आदर्श के पीछे सर्वस्व त्याग दिया। और लेनिन जैसे व्यक्ति की तपस्या से जो आदर्श पवित्र हुआ है, वह व्यर्थ नहीं जा सकता। उनके उत्थान का सुंदर उदाहरण सर्वदा स्थित रहेगा, और जैसे जैसे समय निकलेगा वह अधिकाधिक पवित्र होता जाएगा।'

मद्रास से सन् १६२२ में लेनिन संबंधी जो प्रथम प्रकाशन हुआ उसका शीर्षक था—'नया रूस' इसकी भूमिका जी. वी. कृष्णाराव नाम के व्यक्ति ने लिखी थी। यह सज्जन सन् १६२० में मद्रास में काम करते थे और आजकल गुंटूर में रहते हैं। 'इस्कस' का जो सम्मेलन गुंटूर में हुआ उस अवसर पर श्री जी. वी. कृष्णाराव को समुचित रूप में सम्मानित किया गया। मद्रास में 'प्रावदा' के संवाददाता जब उनके पास पहुँचे तो उन्हें ऐसी वेशभूषा में देखा जिसमें टॉल्स्टाय रहा करते थे। संवाददाता ने बताया कि श्री कृष्णाराव ने केवल 'भूमिका'

माध्यम से पोषित किया है। सोवियत संघ के सभी लोग रूसी सीखते हैं और अब यहाँ भी 'रूसी भाषा अध्ययन-संस्थान' होने से रूसी प्रचार बढ़ेगा। अनेक विश्वविद्यालयों में तो पहिले से ही रूसी भाषा सिखाई जाती है। इस प्रकार सम्पूर्ण सोवियत संघ हमारे निकट होता आ रहा है। न केवल रूसी तथा रवेत वरन् मध्य एशिया के पूर्वी तुर्की, उजबेक, तुर्कमन, कज्जाक तथा किर्गीज भी शताब्दियों से भारत के साथ घनिष्ठ सबंध रखते आए हैं।

वैसे देखा जाय तो भारत तथा रूस के संबंध हजारों वर्ष पुराने हैं। बाकू बातूम आदि से व्यापार होता रहा है, सिंध और पंजाब के व्यापारियों ने जो हिन्दू मंदिर मध्य एशिया के विविध नगरों में बनवाए वे हमारे सांस्कृतिक संबंधों की प्राचीनता के परिपोषक हैं। अब भी भारत में लगभग एक सहस्र भारतीय नागरिक ऐसे हैं जो आर्मीनियन परम्परा के हैं और जो अभी तक अपने धर्म और भाषा को रखे हुए हैं—उनकी भाषा, संस्कृति और धर्म आर्मीनिया पर ही आधारित है।

सोवियत संघ की विज्ञान की महान प्रगति को देख कर आज का नव-युवक रूस के निकट हो चला है। वहाँ की आर्थिक व्यवस्था भी भारत के काफी लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती है। अब ऐसा युग नहीं कि सोवियत चुप-चाप बैठा रहे। वे उठ खड़े हुए हैं, और प्रेरणा का स्रोत आया सोवियत संघ से।

भारत और रूस का साहित्यिक संपर्क अंग्रेजी भाषा के माध्यम से हुआ। टाल्स्टाय, गोगोल, दोस्तोव्स्की, तुर्गनेव, पुश्किन, चेखव, गोर्की आदि तो रूसी भाषा के महान साहित्यकार हैं ही—इन सब का साहित्य अंग्रेजी भाषा के माध्यम से भारत में प्रसारित हुआ। ब्रिटिश काल में रूसी भाषा, विचार, दर्शन, आदान प्रदान पर एक प्रकार से रोक सी थी, परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् रूस और भारत का संपर्क बहुत बढ़ गया। रूसी भाषा, साहित्य, इतिहास, कला, संस्कृति, विज्ञान, तकनीकी ज्ञान—सभी का अध्ययन किया जाने लगा, और इस समय भारत में लगभग एक दर्जन तो ऐसे संस्थान होंगे जहाँ रूसी विषय पढ़ाए जाते हैं। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी भाषा-प्रसार योजना में रूसी भाषा रखने का ध्यान रखता है। उधर रूसी विद्वानों ने भारत की भाषा संस्कृत और यहाँ की संस्कृति का बड़े उत्साह के साथ अध्ययन किया है। भारत के प्राय सभी विषय, जैसे—दर्शन, भाषा, साहित्य, कला आदि में रूसी विद्वानों की रुचि है और इस देश में ओल्डनबर्ग, मिनायेव, वासीलीएव, दीवानस्की, बारान्निकोव, चेलिशेव प्रभृति विद्वानों के नाम आदर से लिए जाते हैं।

# साहित्यिक धरातल पर

भारत और रूस के बीच सभी क्षेत्रों में आदान-प्रदान हुआ है पर साहित्य के क्षेत्र में यह आदान-प्रदान स्थायित्व के गुण रखता है। सोवियत विचारधारा भारत में पनपी है, और आज का भारतीय साहित्य उससे प्रभावित है, इसी प्रकार सोवियत संघ में भारतीय साहित्य का बहुत प्रचार हुआ है, और यह साहित्य बड़ी निष्ठा और रुचि के साथ वहाँ पढ़ा जाता है।

## 'बोल्शेविक जादूगर 'लेनिन' और 'नया रूस'

काफी पहले आधुनिक सोवियत संघ तथा लेनिन पर कई पुस्तकें निकलीं। सन् १९२० में प्रकाशित 'रूस की राज्य-क्रान्ति' के लेखक थे श्री रमाशंकर अवस्थी। इन्हीं के द्वारा १९२१ में एक अन्य पुस्तक निकली, जिसका शीर्षक था—'बोल्शेविक जादूगर (लेनिन)। श्री देवदत्त शास्त्री ने 'वर्तमान रूस' नाम से एक अन्य पुस्तक लिखी, और सन् १९२२ में हसन अजीज भोपाली ने एक पुस्तक प्रकाशित करवाई जिसका नाम था—'लेनिन और इन्कलाबे रूस'। उस समय रूसी क्रान्ति से भारत बहुत प्रभावित हुआ था। महात्मा गांधी ने इस क्रान्ति के संबंध में कहा था—'इसमें कोई प्रश्न ही नहीं उठता कि बोल्शेविक आदर्श के पीछे असंख्य नर-नारियों का पवित्र बलिदान है। इन लोगों ने अपने आदर्श के पीछे सर्वस्व त्याग दिया। और लेनिन जैसे व्यक्ति की तपस्या से जो आदर्श पवित्र हुआ है, वह व्यर्थ नहीं जा सकता। उनके उत्थान का सुंदर उदाहरण सर्वदा स्थित रहेगा, और जैसे जैसे समय निकलेगा वह अधिकाधिक पवित्र होता जाएगा।'

मद्रास से सन् १९२२ में लेनिन संबंधी जो प्रथम प्रकाशन हुआ उसका शीर्षक था—'नया रूस' इसकी भूमिका जी. वी. कृष्णाराव नाम के व्यक्ति ने लिखी थी। यह सज्जन सन् १९२० में मद्रास में काम करते थे और आजकल गुंटूर में रहते हैं। 'इस्कस' का जो सम्मेलन गुंटूर में हुआ उस अवसर पर श्री जी. वी. कृष्णाराव को समुचित रूप में सम्मानित किया गया। मद्रास में 'प्रावदा' के संवाददाता जब उनके पास पहुंचे तो उन्हें ऐसी वेशभूषा में देखा जिसमें टॉल्स्टाय रहा करते थे। संवाददाता ने बताया कि श्री कृष्णाराव ने केवल 'भूमिका'

ही नहीं लिखी बल्कि 'नया रूस' के प्रकाशन से एक साल पहले उन्होंने लेनिन की जीवनी भी लिखी, जिसके दो संस्करण प्रकाशित हुए थे। यह पुस्तक लेनिन के जीवन और कृतित्व दोनों से संबंधित थी। कृष्णाराव ने 'टॉलस्टाय' पर भी एक किताब लिखी थी। पुस्तकें अधिक विस्तृत नहीं हैं, फिर भी इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि १९२०-२१ में लेखक को कितना परिश्रम करना पड़ा होगा। इस पुस्तक के लिए उन्होंने लेनिन के उस सुप्रसिद्ध चित्र को भी प्राप्त किया था जिसमें लेनिन लाल मैदान के बीच में खड़े हुए हैं। कृष्णाराव ने उन सभी प्रचारों का जवाब दिया जो साम्यवाद और लेनिन के खिलाफ थे। उन्होंने लिखा कि लेनिन को हिंसा उतनी ही अप्रिय थी जितनी महात्मा गांधी को।

कहा जाता है इसी समय के आसपास बँगला भाषा में भी लेनिन की जीवनी प्रकाशित हुई। शायद, भारत की अन्य भाषाओं में भी इस प्रकार की कृतियाँ हों। उस जमाने में, अंग्रेजी राज्य के होते हुए, इस प्रकार की कृतियों को प्रकाशित कराना अदम्य साहस का काम था, किन्तु जब कोई विचार किसी व्यक्ति के हृदयस्थ हो जाते हैं तो वह उन्हें प्रकाश में लाना चाहता है।

### रूस और भारत का भाषा-वैविध्य

विचाराभिव्यक्ति का माध्यम भाषा होती है, और विचारों की रक्षित परंपरा को साहित्य का रूप मिलता है। देश के विस्तार के अनुरूप भाषाओं की विविधता पाई जाती है। भारत और रूस दोनों ही देश बहुत बड़े हैं, इसलिए यहाँ अनेक भाषाओं का अस्तित्व है, किन्तु दोनों देशों की बहुत सी भाषाओं में साम्य भी मिलता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से रूस विश्व के सभी देशों में विस्तृत समझा जाता है, यह अमेरिका से ३ गुना तथा फ्रांस से ४० गुना बड़ा है। सोवियत संघ उत्तर से दक्षिण ४॥ हजार किलोमीटर तथा पश्चिम से पूर्व १० हजार किलोमीटर में फैला हुआ है। भारत अपेक्षाकृत छोटा है, परन्तु जनसंख्या की दृष्टि से दो गुना है। सोवियत संघ के अंतर्गत रूस, युक्रेनिया, बाइलोरूसी, उजबेक, कजाक, जोर्जिया, अजरबाइजान, लिथुनिया, मोल देविया, लतविया, किरगीज, ताजिक, आर्मेनिया, तुर्कमेनिया एसतोनिया—१५ जनतंत्र हैं, और इसी प्रकार भारत में काश्मीर, पंजाब, बंगाल, आंध्र, तमिलनाड, असम, बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र,

दिल्ली, उड़ीसा आदि अनेक राज्य हैं। प्रत्येक जनतंत्र अथवा राज्य की अलग-अलग भाषाएँ हैं, और प्रत्येक में साहित्य भी है। सोवियत संघ की राजकीय भाषा रूसी है किन्तु अन्य जनतंत्रों की भाषाओं में भी प्रचुर मात्रा में साहित्य-कार्य होता है; भारत की स्वीकृत राजभाषा हिंदी है, पर देश की सभी भाषाओं का साहित्य-निर्माण-कार्य तेजी पर है। इनके अतिरिक्त भारत में दो भाषाएँ और हैं, जो अपनी साहित्यिक गरिमा के लिए विश्व-विख्यात हैं—इनमें एक है संस्कृत और दूसरी अंग्रेजी। संस्कृत की गरिमा से तो संपूर्ण विश्व परिचित है और ऐसा कोई भी बड़ा विश्वविद्यालय नहीं होगा जहाँ भारत की इस गर्वशालिनी भाषा का स्थान न हो। आधुनिक भारतीय भाषाओं के कुछ विद्वान भी बहुत ख्याति प्राप्त कर चुके हैं, और सोवियत संघ में भी उनके नाम प्रचलित हैं तथा उनकी कृतियों के अनुवाद हुए हैं। इनमें सर्वोपरि नाम गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का है; अन्य नाम कबीर, नानक, मीरा, कृष्णदेव, तुलसी, गालिब, मायकेल मधुसूदनदत्त, बंकिमचन्द्र चटर्जी, हरिनारायण आप्टे, शरत्चंद्र, सुब्रह्मण्य भारती, प्रेमचंद, नारायण मेनन आदि के हैं।

भाषाओं की पारिवारिक एकता

भारत-यूरोपीय परिवार में एक किनारे पर आर्य भाषा उप-समुदाय है और दूसरे किनारे पर स्लॅव समुदाय है। इस प्रकार रूस और भारत दोनों देशों की अनेक भाषाएँ एक ही भाषा-परिवार से संबंधित हैं। डॉ० आन्द्रोनेव ने एक और स्थापना की है। उनके अनुसार द्रविड़ तथा यूराली भाषाओं का प्राचीन संबंध है। द्रविड़ तथा यूराली बोलियों के कुछ समान शब्द ढूंढ कर निकाले गए हैं, और इस आधार पर इन भाषाओं के ऐतिहासिक संबंध लगाने की चेष्टा की जा रही है। डॉ० आन्द्रोनोव सोवियत विज्ञान-अकादमी के वरिष्ठ शोधकर्ता हैं, और यदि ये और इनके सहकर्मी अपनी स्थापना को प्रमाणित कर सकें तब तो भारत की सभी भाषाएँ सोवियत संघ की भाषाओं से संबंधित हो जाएँगी।

मॉस्को के प्राच्य-पंडित प्रोफेसर आव्सितनोव ने बताया था कि रूसी और संस्कृत का बड़ा गहरा संबंध है। रूसी में ३ लिंग, २ वचन और ६ कारक होते हैं, और संस्कृत के अनुसार ही विशेषण के रूप भी परिवर्तित होते हैं। संख्यावाचक विशेषण के रूप भी उतने ही होते हैं जितने संस्कृत के। संस्कृत की तरह ही रूसी भाषा का व्याकरण भी कठिन है, परन्तु दोनों भाषाओं की अभिव्यक्ति-क्षमता अद्भुत है।

संस्कृत और रूसी भाषा के अनेक शब्दों में साम्य है। इस विषय पर गुसेव ने एक निबन्ध लिख कर कुछ उदाहरण दिए हैं। कुछ लोग तो ऐसा अनुमान करने लगे हैं कि भारत में वेद और महाभारत की रचना कहीं पश्चिमी साइबेरिया में हुई होगी। बालगंगाधर तिलक और राहुल सांकृत्यायन कुछ इसी विचारधारा के थे, और इन्होंने अपनी मान्यता को पूरी व्याख्या के साथ प्रस्तुत किया है। बहुत लोगों की मान्यता है कि प्राचीन आर्य काला सागर, कैस्पियन तथा अराल सागरों के आसपास कहीं मध्य एशिया में रहते थे। मध्य एशिया को आर्यों का मूल स्थान बताया जाता है, और यदि इस आधार पर रूसी तथा संस्कृत में समानता मिल जाए तो आश्चर्य क्या।

कुछ क्रियाएँ देखिए। 'पच्' (प्यॅक्), 'पत' (पदत्य), 'विद्' (वेदत्य), 'जीव्' (जीत्य), 'प्लु' (प्लवत्य), 'ज्ञा' (ज्नात्य)। इसी प्रकार कुछ उपसर्ग भी—'उत्' (अत्) 'प्र' (प्रो), 'सह' (स), 'प्रति' (प्रोतिव), 'निस्' (निस्)। क्रियाओं की रूप रचना में भी समानता है—'अत्ति' (जिस्योत्), 'सीदति' (सीदीत्), 'पीयते' (प्योत्)। कुछ विशेषण और अव्ययपद भी द्रष्टव्य हैं—'प्रिय' (प्रियात्नो), 'दुर' (दुर), 'कदा' (कग्दा), 'तदा' (तग्दा)। कुछ और शब्द भी—'देवी' (देव), 'दिन' (देन्), 'धाम' (दोम्), 'नभ' (नेवो), 'हिम' (जिमा)। भाषा का नैकट्य स्थापित करने में पारिवारिक संबंध बताने वाले शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। कुछ इस प्रकार के शब्द भी देखें—'मातृ', (मात्येर) 'प्रमातृ' (प्रमात्येर), 'स्वसृ' (स्यास्त्र), 'भ्रातृ' (ब्रात्), 'सूनु' (सिन्), 'स्नुषा' (स्नोहा), और एक प्रत्यय 'त्व' भी—'अस्तित्व' (येस्तेस्त्वो) 'भ्रातृत्व' (ब्रात्स्त्वो)।

## रूसी साहित्य की परम्परा

रूसी साहित्य का प्रारम्भ ११वीं शताब्दी से माना जाता है। इसका आदर्श यूनानी साहित्य रहा और इसकी प्रारम्भिक कृतियाँ धार्मिक हैं। कीव युग में काफी साहित्य का सृजन हुआ। यह युग सन् १२४० तक चला, किन्तु मंगोलों के आक्रमणों से इस समय का बहुत सा साहित्य नष्ट हो गया। कथा और कहानियों के रूप में कुछ चीजें अवश्य मिलती हैं। कीव राज्य के पतनोपरान्त तातारियों का युग १४८० तक चला। इस युग में नेस्टरकी आत्मकथा, भारतीय साम्राज्य की कथा प्रसिद्ध रहीं—'समुद्रों के पार यात्रा' और 'डोन के उस पार' बहुत

प्रसिद्ध हुए। 'निकितिन की यात्राएँ' भी प्रसिद्ध हुई, क्योंकि लेखक ने इसमें फ़ारस से भारत की पदवर्षीय यात्रा का सुंदर चित्रण किया है। शायद निकितिन प्रथम योरपीय है जिसने भारत का विवरण लिखा है। मॉस्को युग १५६८ तक रहा। इस समय इवान की एक अलग विचारधारा प्रचलित थी जो सुल्तान मुहम्मद की कहानी से स्पष्ट होती है। रूस में एक नए जीवन का प्रारम्भ हो रहा था, और इवान की प्रशस्तियाँ प्रकाश में आ रही थीं।

अगले १०० वर्षों को परिवर्तन का युग कहना चाहिए। इसके बाद गद्य को स्थान मिलने लगा। इस युग का एक महत्त्वपूर्ण नाम अवाकुम है। अवाकुम की जीवनी एक प्रसिद्ध कृति है। इसके बाद आधुनिक युग प्रारम्भ हो जाता है, जो दो भागों में बाँटा जाता है—क्रांति से पहिले और क्रांति के बाद। पिछला युग तो अभी केवल ५० वर्षों का ही है।

१८वीं शताब्दी के शुरु में ही रूसी भाषा पर विदेशी प्रभाव पड़ने लगा। ट्रेद्याकोस्की ने पहली बार नई प्रकार की कविताएँ लिखीं। पोलोत्स्की ने भी नई शैली अपनाई। रैडिसचैव की व्यंग्यात्मक रचना, 'पीटर्सबर्ग-मास्को की यात्रा' बहुत प्रसिद्ध रही, पर कुछ दिनों बाद इस रचना को जलाया गया। करंजीन की लिखी 'पूअर लिज़ा' की कहानी रूसी का प्रथम उपन्यास कही जाती है। शेक्सपियर, मोलिअर आदि विदेशी साहित्यकारों की कृतियाँ भी रूसी में अनुदित की जाने लगीं। इस समय साहित्य में कृत्रिमता लाने का प्रयास किया गया और उसे अलंकृत किया जाने लगा, ठीक उसी प्रकार जैसे भारत का रीतिकालीन साहित्य। फ्रांस के वाल्टेयर और रूसो ने रूस में एक नवीन विचारधारा को जन्म दिया, और रैडिसचेव ने अपनी रचनाओं के द्वारा तत्कालीन शासकों को अप्रसन्न करके १० वर्ष का बनवास पाया।

इसी युग में पुश्किन का वह स्वर्णयुग आता है जब परंपरावादी और रूमानी लेखकों में संघर्ष चला था। रूस के कृषकों के प्रति क्राइलोव का स्नेह बढ़ा, और ज़ूकोवोस्की ने ग्रे की 'एलेजी' का रूपान्तर किया। पुश्किन को फ्रेंच और अंग्रेजी नाटक से बहुत प्रेम था, परन्तु उसने जो कुछ किया उससे रूस का मस्तक ऊँचा हुआ। गद्य-पद्य दोनों के माध्यम से अपने छोटे से जीवन में पुश्किन ने रूस के साहित्य को समृद्ध किया। 'कप्तान की लड़की की कहानी' लिख कर तो वह अमर हो गया। उसके बारे में कहा जाता है—'आधुनिक कवियों में पुश्किन सबसे अधिक रूसी है, सबसे अधिक योरपीय, सबसे अधिक स्वाभाविक

और सबसे अधिक कलाकार'। कौलसोव ने रूसी गीत प्रचलित किए तुर्गनेव की शेष रचनाएँ बहुत सुंदर बन पड़ीं। नेक्रासोव ने जन जीवन को चित्रित किया। प्रतीकात्मक पुनरुत्थान का सबसे बड़ा कवि ब्लोक है। इसके युग में महान् क्रांति हो चुकी थी, और अपनी रचनाओं से उसने इसका स्वागत किया। साम्यवादी क्रांति का सबसे बड़ा पुजारी उस समय मायाकोव्स्की था और दूसरा ईवानोव। पैस्टरनिक का नाम भी बहुत प्रसिद्ध है। कथा साहित्य में तुर्गनेव सर्वोच्च स्थान पर है। टॉलस्टाय और दोस्तोयेवस्की बहुत ही प्रसिद्ध नाम हैं। टॉलस्टाय तो भारतीय साहित्य में इतने घुलमिल गए हैं कि उन्हें भारत का एक अंग ही समझा जाता है। इनके सर्वाधिक प्रसिद्ध नाटक 'युद्ध और शान्ति' तथा 'अन्नाकेरिना' विश्व साहित्य में स्थान रखते हैं दूसरे लेखक के 'अपराध और दंड' तथा 'मूर्ख' बहुत प्रसिद्ध हैं। कहानीकारों में चेखव शायद सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। मैक्सिम गोर्की ने कहानी, उपन्यास और नाटक के माध्यम से समाज के पीड़ित तथा शोषित वर्ग का चित्रण करके क्रांति के पश्चात् रूस में अपना नाम स्थापित किया। नाटककारों में ग्रिबोयेदोव, फ़ाइलोव आदि नाम लिए जाते हैं।

## महान् क्रान्ति का साहित्य

यह साहित्य अभी ५० वर्षों का ही है। गोर्की तथा मायाकोव्स्की के नाम तो आ ही चुके हैं। शोलोखोव तथा एहरनबर्ग दो प्रसिद्ध नाम हैं। पैस्टरनिक एक महान कवि है। कुप्रिन ने 'यामा' लिख कर बड़ा नाम कमाया। गद्य में बिलोकी ने 'देवताओं की मृत्यु' और 'अराजकतावादी' लिख कर अपना नाम ऊँचा किया। क्रान्ति के बाद पुराने लेखकों में से बोरिस, इवानिन और सियोनेव हैं। फेदेयेव के अनेक उपन्यास हैं। एहरनबर्ग का 'पेरिस पतन' द्वितीय महायुद्ध से सम्बन्धित है। पिछले महायुद्ध का वर्णन 'इन्द्र धनुष' नामक उपन्यास में हुआ। आज के युग में रूसी साहित्य का जितना प्रचार किया जा रहा है वह उसे विश्व में आगे लाने की क्षमता रखता है। इसके साथ ही रूसी तथा 'संघ' की अन्य भाषाओं के माध्यम से जो अन्य देशों का साहित्य अनूदित होता है वह रूसी साहित्य को काफी आगे बढ़ा रहा है। उदाहरण के लिए उजबेकिस्तान को ही लीजिए।

उजबेक प्राच्य साहित्य प्रकाशन-गृह

भारत-उजबेकिस्तान के सांस्कृतिक सूत्र की जड़ें सुदूर अतीत में गड़ी हुई

हैं। यह संबंध प्राचीन कुशन काल से लेकर मध्य युग और आधुनिक युग तक फैला हुआ है। भारत के साहित्य ने मध्य एशिया के प्रमुख लेखकों और कवियों का जैसे बेदिल, फुर्कत, बरूनी, अलीशेरनवाई आदि का ध्यान आकर्षित किया है। उज्बेकिस्तान में रवि बाबू, प्रेमचंद, यशपाल, दिनकर, उदयशंकर भट्ट प्रभृति लेखकों के जीवन और कृतित्व पर पुस्तकें लिखी गई हैं। प्राच्य-संस्थान के नवी मुख्मेदोव ने अली सरदार जाफरी की कृतियों पर एक व्यापक प्रबंध प्रस्तुत किया है। अरीयोव ने ख्वाजा अहमद अब्बास के जीवन और कृतित्व पर एम. ए. का शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया। स्वेतलाना येमरिवोवा ने सुभद्राकुमारी चौहान की देशभक्तिपूर्ण प्रवृत्तियों पर लेख लिखा।

दोनों स्थानों के पत्र-पत्रिकाओं में दोनों देशों की कृतियाँ, प्रायः, कविता और कहानियाँ छपती रहती हैं। इतिहास का भी विधिवत् अध्ययन होने लगा है। उज्बेक पाठकों को सुप्रसिद्ध भारतीय लेखकों जैसे प्रेमचंद (गोदान), ख्वाजा अहमद अब्बास (भारत का बेटा), भवानी भट्टाचार्य (भूख) की कृतियाँ पढ़ने का अवसर मिला है। हाल ही में राजेन्द्रसिंह बेदी का कहानी संग्रह, (कन्या-हरण), का प्रकाशन हुआ है। मिर्जा गालिब की कविताओं का उज्बेक भाषा में अनुवाद और प्रकाशन हो चुका है। 'तरुण-प्रकाशन-गृह' ने मध्यकालीन पुस्तक 'हितोपदेश' का अनुवाद प्रस्तुत किया है। पिछले दशक में ६० से अधिक भारतीय लेखकों की कृतियाँ प्रकाशित हुईं और प्रकाशित होते ही हाथों-हाथ बिक गईं।

## सोवियत संघ के हिंदी-प्रकाशन

बहुत पहले पढ़ी थी—'टाल्स्टाय की कहानियाँ'। अँग्रेजी अनुवाद से यह हिंदी रूपान्तर था। अब तो रूसी पुस्तकों का सीधा अनुवाद हिंदी-भाषा में हो रहा है, और बड़ी तेजी के साथ। जब मैं मॉस्को में था तो ऐसे अनेक भारतीयों से परिचय हुआ जो रूसी पुस्तकों का हिंदी-रूपान्तर कर रहे थे; साथ ही ऐसे रूसी विद्वानों की संख्या भी काफी है जो हिंदी-अनुवाद का कार्य करते हैं। तास्ताय, गोर्की, चेखव तथा पुश्किन की अनेक कृतियाँ हिंदी में अनूदित हो चुकी हैं। लेनिन के तो प्रायः सभी कथन हिंदी-भाषा में अनूदित हैं, और कार्ल मार्क्स की अनेक कृतियाँ हिंदी में रूपान्तरित की जा चुकी हैं। रूसी भाषा का व्याकरण भी हिंदी में अनूदित हुआ है। मॉस्को का विदेश

प्रकाशन गृह इस ओर बहुत प्रगतिशील है। इन सारे प्रकाशनों का परिचय देने में सोवियत दूतावास का सूचना-विभाग बहुत सहायक सिद्ध होता है। उधर सांस्कृतिक विभाग के व्यवस्थित पुस्तकालय से भी लाभ उठाया जा सकता है।

हिंदी में प्रकाशित ग्रंथ दोनों प्रकार के है—मौलिक तथा अनूदित। प्रत्येक वर्ष हिंदी भाषा में अनेक ग्रंथ प्रकाशित होते हैं। कुछ शीर्षकों को देखिए— लेनिन : 'राष्ट्रीय नीति तथा सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयवाद के प्रश्न', मानव के स्वप्न साकार', 'हमारे लेनिन', लेनिन 'शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व', 'पाकर खो दिया', 'लोमड़ी और चूहा', 'कृषि की अर्थ व्यवस्था', एक पीढ़ी के जीवन काल में', 'सोवियत संघ की भावनाएँ और जनगण', 'तीन मोटे', 'तँराकी मास्टर', 'प्राक् पूजीवादी समाज का इतिहास', 'मार्क्सवादी अर्थशास्त्र के मूल सिद्धा त', 'मनुष्य महाबली कैसे बना ?' 'विजेता', निकिता का बचपन', 'गोर्की की श्रेष्ठ कहानियाँ', 'पापा जब बच्चे थे', 'हीरे-मोती', 'विश्व का संक्षिप्त आर्थिक भूगोल'।

हिन्दी के साहित्यकारों के प्रति रूस की बड़ी आस्था है। प्रेमचद के तो अनेक ग्रंथ न केवल रूसी भाषा में वरन् संघ की अन्य भाषाओं में भी प्रकाशित हुए हैं। गबन, रंगभूमि, कहानियाँ—बहुत कुछ प्रकाशित हुआ है। किसान और मजदूरों के कलाकार होने के नाते प्रेमचद का सोवियत संघ में विशिष्ट स्थान है। यशपाल की ६२वीं जयन्ती सोवियत संघ की जनता द्वारा मनाई गई थी, और उनके साहित्यिक क्रिया-कलाप की १०वीं जयन्ती भी साकार होने को है। कुछ दिनों पूर्व बाबाजान गफूराव ने सूचना दी थी कि मॉस्को की प्राच्य अध्ययन-संस्था अमीर खुसरो की जयंती मनाने की योजना बना रही है। अमीर खुसरो हिंदी के कवि थे, और हिंदू तथा मुसलमानों के बीच अच्छे संबंध स्थापित करने की उन्होंने चेष्टा की थी। इस संबंध में गफूराव प्रधान मंत्री और उपराष्ट्रपति से भी मिले थे। शांति स्थापना में सहायक तथा सहअस्तित्व के उन्नायक अमीर खुसरो इस सम्मान के अधिकारी हैं। मध्यकालीन कवियों के प्रति भी उदार दृष्टिकोण रहा है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि केवल समकालीन साहित्यकारों के प्रति ही नहीं, सोवियत संघ हिंदी के प्रायः सभी साहित्यकारों का अध्ययन करना चाहता है।

## कुछ रूसी साहित्यकार और उनके प्रति भारतीय भावनाएँ

रूस के अनेक साहित्यकारों की बात ऊपर बताई जा चुकी है। यहाँ कुछ

अन्य साहित्यकारों के प्रति भारतीय भावना स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे स्पष्ट हो सके कि दोनों देशों में कितनी गहराई के साथ अध्ययन का क्रम जारी है और एक दूसरे को समझने का कितना प्रयत्न किया जा रहा है। पहले एक कवि मायाकोव्स्की को लीजिए।

व्लादियेर मायाकोव्स्की

अपनी लघु वयस में ही इन्होंने अपनी प्रतिभा सर्वदा के लिये स्थापित कर दी। इनका यह कथन सोवियत जनता के कानों में गूंजता रहता है— 'संसार में कोई पुरुष जिंदा नहीं रहता। परन्तु लेनिन सर्वदा जिंदा रहेगा।' इन्होंने लिखा था—हमारी तलवार छिन गई। बन्दूक हमसे ले ली गई, मास्को—एक द्वीप पर हम खड़े हैं, हमारे पास कुछ नहीं हैं, हम अभावग्रस्त हैं; किन्तु लेनिन का नाम हमारे मस्तिष्क में हैं और यही हमारी शक्ति है। ये रूस की क्रांतिकारी कविताओं के जन्मदाताओं में से हैं उनकी कविताएं क्रांति का स्मारक हैं। इनकी रचनाएं अंग्रेजी, फ्रेंच, जापानी, पोलिश, चेक, जर्मन आदि भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं। भारत के भी कई लोगों ने इस कवि के प्रति सुंदर भाव रखा है—इनमें से अली सरदार जाफरी का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। वे इनके संग्रहालय को देख चुके हैं और मायाकोव्स्की को अपना गुरु मानते हैं। मुल्कराज आनंद का भी कहना है कि उनकी टेबिल पर मायाकोव्स्की की रचनाओं का संग्रह अवश्य रहता है। पंजाबी लेखक तेजसिंह ने उन्हें क्रांतिकारी कविताओं के रचयिताओं में अग्रगण्य बताया है। बंगाली हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने उनके द्वारा प्रतिपादित स्वतंत्रता, समानता, और बंधुत्व की प्रशंसा की है। यह वह आवाज है जो इसी प्रकार के भारतीय श्री घोष से मिल कर गुंजरित होती है। इनकी कविताओं का बंगला, हिंदी, मलयालम, मराठी आदि भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। मार्शल का अंग्रेजी अनुवाद तो अति सुंदर है। १८९३ में पैदा होकर १९३० में तो यह मेधावी कवि स्वर्ग सिधार गया।

चेखव

चेखव साहित्य-जगत में विश्व के तीन सर्वोत्तम कथाकारों में गिने जाते हैं। कहा जाता है कि चेखव का प्रभाव दुनियां की, प्रायः, सभी भाषाओं की कहानियों पर पड़ा है। हिंदी भाषा के कथाकार भी इसके अपवाद नहीं हैं।

प्रेमचंद की 'पूस की रात', 'कफन', 'नशा', 'शतरंज के खिलाड़ी' आदि कहानियों में चेखव की झलक देखी जा सकती है। व्यंग्य-चित्रण, पात्र चयन, परिस्थिति-वर्णन न जाने कितनी बातों में कहानीकार प्रेमचंद चेखव द्वारा अनुप्राणित हैं। यशपाल की कहानियों को भी यदि हम निर्माण की दृष्टि से देखें तो कथा की स्वाभाविकता और सहज गति चेखव की याद दिला देती है। उनका सबसे बड़ा गुण यह था कि उन्होंने साधारण लोगों के मानसिक द्वन्द्वों और उथल पुथल को मर्मस्पर्शी व्यंग्य के साथ प्रस्तुत किया है, जो पाठकों की आत्मा को उसी प्रकार प्रभावित करता है जिसकी अनुभूति उन्हें स्वयं हुई थी। नागार्जुन की 'हीरक जयन्ती', राजेन्द्र यादव की 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', विष्णु प्रभाकर की 'धरती अब भी घूम रही है', नलिन विलोचन शर्मा की 'विष के दांत' आदि कहानियां निश्चय ही चेखव से प्रभावित हैं। मोहन राकेश, प्रभाकर माचवे, मन्मथनाथ गुप्त भी प्रभावित हुए हैं। काशीनाथ सिंह और योगेश गुप्त की कहानियाँ भी पाठकों को चेखव के नजदीक पहुँचाती हैं। राजकमल चौधरी की कहानियाँ यौनरस और नग्न यथार्थ को चेखव की भाँति ही उपस्थित करती हैं।

## गुरुदेव और गोर्की

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रति सोवियत संघ का विशेष झुकाव रहा है। गत ५० वर्षों में वहाँ के विद्वानों ने इनके साहित्य का अध्ययन और कृतियों का अनुवाद किया है। गुरुदेव की जयन्ती १६६१ में मनाई गई और इसके चार साल पीछे ही उनकी सभी कृतियों को १२ जिल्दों के रूसी भाषा-संस्करण में प्रकाशित किया गया। शायद, भारत के बाहर टैगोर की कृतियों का यह सबसे बड़ा संस्करण है। इस संस्करण की १ लाख प्रतियाँ प्रकाशित हुईं। नोबेल पुरस्कार मिलने से काफी पहले कवि की प्रतिमा रूस में फैल चुकी थी, और उनकी गीतांजलि की २१ कविताएं रूसी भाषा में प्रकाशित हो चुकी थीं। क्रान्ति के पहले ही उनकी प्रायः सभी कृतियाँ अनूदित हो चुकी थीं। गीतांजलि के तो अनेक अनुवाद हुए। रूसी भाषा में ही नहीं, टैगोर की कृतियाँ युक्रेनियन, जोर्जियन, तातार, अजरबाइजान आदि भाषाओं में भी प्रकाशित हुईं। १६३० में जब कवि सोवियत संघ की यात्रा पर गए तब तक उनके ग्रंथों की ६० संस्करणों में २ लाख प्रतियाँ निकल चुकी थीं। टैगोर की

कृतियों पर अनुसंधानात्मक कार्य भी हुआ है, और इनके रचनात्मक प्रयासों का विधिवत् अध्ययन किया गया है। उपन्यासों में 'गोरा', 'रैक' 'घर और विश्व' तथा नाटकों में 'राजा', 'डाकघर', 'प्रकृति-प्रतिशोध' बहुत लोकप्रिय हुए। 'रूस की चिट्ठी' तो रूसी पाठकों को बहुत ही आनन्द प्रदान करती है।

इधर भारत में गोर्की बहुत प्रसिद्ध रहे हैं। 'गोर्की ने सोवियत साहित्य की उतनी ही सेवा की जितनी लेनिन ने रूसी क्रान्ति की'। जिस समय भारत अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहा था तब गोर्की ने उसके बुद्धि-जीवियों को प्रोत्साहित किया था। हमारे कुछ क्रान्तिकारियों तथा प्रगतिशील लेखकों से भी गोर्की का पत्र-व्यवहार हुआ। श्री कृष्णवर्मा श्यामजी, आर. जी. शाहनी, डी. आर. चौधरी, राजाराम्रो आदि के साथ उनका पत्र-व्यवहार, विज्ञान अकादमी द्वारा १९६० में प्रकाशित 'विदेशी लेखकों से गोर्की का पत्र-व्यवहार' शीर्षक में छापा गया था। प्रसिद्ध कवि सत्यनारायण सिनहा (मृत्यु १९२९) एक मात्र ऐसे भारतीय थे जो गोर्की से मिले—मुलाकात और तत्संबंधी प्रभावों की चर्चा 'विशाल भारत' में प्रकाशित हुई थी। गोर्की को विश्वास था कि स्वतंत्रता संग्राम में भारत की जीत निश्चित है। गोर्की ने लिखा था—'संसार के अन्य सभी देशों की तुलना में भारत के लोगों ने ही सबसे पहले आदर्शों की खोज की थी और उसकी सैद्धान्तिक खोज में वे सबसे आगे थे।' गोर्की का शताब्दी समारोह सारी दुनियां में मनाया गया, हमारे देश में भी यह समारोह अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित हुआ, और एक विशेष डाक टिकिट भी जारी किया गया।

गोर्की की पुस्तकों का प्रकाशन ४० विदेशी भाषाओं में किया गया है, जिनमें आठ भारतीय हैं—हिंदी, बंगला, उर्दू, पंजाबी, गुजराती, तमिल, तेलगु और मलयालम। गोर्की का उपन्यास 'माँ' भारतीयों में विशेष रूप से लोकप्रिय है। इसके चार हिंदी तथा दो बँगला संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। 'मेरा बचपन', 'जनता के बीच', 'मेरे विश्वविद्यालय' भी पठनीय हैं। 'मैक्सिम गोर्की तथा प्रेमचंद की रचनाएँ' नामक शोध-प्रबंध भी तैयार हो चुका है।

## एक तुलनात्मक अध्ययन—गोर्की और रवीन्द्र

साहित्यकारों को तुलनात्मक दृष्टि से देखने की प्रथा है। ये एक देश और एक काल के भी हो सकते हैं, और विभिन्न देश तथा विभिन्न कालों के भी।

रवीन्द्र और गोर्की विभिन्न देशों के हैं पर लगभग एक ही काल के। रवीन्द्र की जन्म शती १९६१ में मनाई गई और गोर्की की इसी वर्ष, १९६८ में। रवीन्द्र का शताब्दी समारोह मॉस्को के बोल्शोई थियेटर में आयोजित किया गया, और गोर्की का भारत में कई स्थानों पर। अपने अपने देशों में तो इनके समारोह विशेष उत्साह से मनाए ही गए।

'गोर्की की याद' शीर्षक लेख में श्री मेनन ने दोनों साहित्यकारों में स्पष्ट विभिन्नताएँ होते हुए भी कुछ समानताओं पर विचार किया है। रवि कवि थे, गोर्की गद्यलेखक; रवि रहस्यवादी थे, गोर्की यथार्थवादी। रवि का ईश्वर एक सजीव यथार्थ था, गोर्की उसके अन्वेषक थे और उसे उन्होंने जनता में ही प्राप्त किया। गोर्की की कृति 'स्वीकारोक्ति' में एक चरित्र जनता को सम्बोधित करते हुए कहता है—'तुम मेरे भगवान हो, तुम्हीं ने सब भगवानों को रचा है, तुम्हीं ने उन्हें अपनी आत्मा की गरिमा से कठिन परिश्रम और कष्ट के द्वारा गढ़ा है।

टैगोर भारत के राष्ट्रीय नव जागरण के एक प्रमुख शिल्पी थे। रूस में गोर्की का भी यही स्थान है। दोनों इतिहास के साथ कदम से कदम मिला कर चले हैं। रवि ने राष्ट्रीय आंदोलन का पक्ष लिया, गोर्की ने क्रांति का जोरदार समर्थन किया। उन्होंने उन झूठे नैतिकतावादियों की निंदा की जो रूसी क्रांति की 'खूनी निर्ममता' पर तो दुख प्रगट करते थे पर योरुपीय हत्याकांड के विरुद्ध कुछ भी नहीं कहते थे, जिसमें लाखों तरुण मरे या अपाहिज हो गए। गोर्की १९१७ की क्रांति के बालक भी थे और जनक भी। उनके हाथों में जो कलम थी वह तलवार से भी अधिक ताकतवर थी। गोर्की के लिए 'कलम' एक शक्तिशाली हथियार था, जिसे वे जनता की सेवा में अर्पित करना चाहते थे। वे मानव के भविष्य निर्माता भी थे, और उनकी कल्पना साकार हुई। रवीन्द्र-गोर्की का यही 'शिल्प' उन्हें समानता के धरातल पर अवतरित कराता है।

## सामयिक साहित्य

भारत में सोवियत संघ ने दोनों देशों के संबंध गहरे करने के लिए जो सर्वोत्तम कार्य किया है वह है प्रचुर मात्रा में प्रकाशित सोवियत और परिचयात्मक साहित्य। भारत की विविध भाषाओं में प्रकाशित इस साहित्य के माध्यम से सोवियत संघ की विचारधारा और वहां का जन जीवन भारत में अच्छी तरह समझा जाने लगा है। पुस्तकों तथा पत्रिकाओं के मूल्य इतने कम

होते हैं और गेटअप तथा छपाई इतनी आकर्षक कि पाठक स्वतः ही उस ओर खिंच जाता है। सोवियत साहित्य के प्रकाशन केन्द्र और वितरण व्यवस्था काफी विस्तृत हैं। इस स्थान पर यह उपयुक्त होगा कि उन साधनों का किंचित् उल्लेख कर दिया जाय तो सोवियत विचार और जीवन-क्रम को भारतीयों के निकट ला रहे हैं। यह मानना पड़ेगा कि रूस में भारतीय दर्शन और जीवन-क्रम के प्रचारार्थ भारत की ओर से इतना कार्य नहीं किया जा रहा है—केवल एक मात्र पत्रिका 'इंडिया' नाम से प्रकाशित होती है, पर इस ओर भी सोवियत संघ द्वारा काफी कार्य हो रहा है, जो विश्वविद्यालयों और अनुवादों तथा सामयिक साहित्य के माध्यम से उधर भी प्रचार पा रहा है।

## सोवियत भूमि

जब हम सोवियत साधनों द्वारा सामयिक साहित्य के प्रकाशन की बात करते हैं तो सबसे प्रमुख स्थान 'सोवियत भूमि' नामक पाक्षिक पत्रिका का है। अभी कुछ ही दिनों पूर्व इसकी २०वीं जयंती मनाई गई थी—बड़ा भव्य समारोह था। भारतीय स्वतंत्रता के बाद शीघ्र ही इस पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ, और यह उसी मैत्री संबंध की स्मृति दिलाता है जब भारत और रूस के कूटनीतिक संबंध स्थापित हुए। प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी ने कहा था—"इस पत्रिका ने इस बात में बड़ी सहायता की है कि भारत के लोग सोवियत सरकार तथा जनता की नीति, प्रगति और भावनाओं को अच्छी तरह समझें, और दोनों देशों के संबंध दृढ़ से दृढ़तर होते जाएँ। सोवियत प्रधान मंत्री कोसिगिन ने अपने संदेश में कहा कि भारत में सोवियत भूमि' पत्रिका का जो सम्मान हुआ है उससे यह बात स्थापित हो जाती है कि इस पत्रिका की सेवाएँ बहुत मूल्यवान रही हैं। डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने यह कामना व्यक्त की थी कि भारत के लोग 'सोवियत भूमि' को पढ़ें और सोवियत जीवन की जो अच्छी बातें हैं, उनको ग्रहण करें। डॉ० राधाकृष्णन् ने दृढ़ विश्वास व्यक्त किया कि हमारे दोनों देशों के बीच मैत्री संबंध का अधिकाधिक दृढ़ होना 'सोवियत-भूमि' का उद्देश्य रहा है। डॉ० जाकिरहुसेन ने 'सोवियत भूमि' के प्रयासों पर धन्यवाद प्रेषित करते हुए मैत्री की दृढ़ता की ओर संकेत किया। यथासमय पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री लालबहादुर शास्त्री ने भी 'सोवियत-भूमि' के कार्य की प्रशंसा की थी। डॉ० त्रिगुणसेन ने बताया कि 'सोवियत-

भूमि' के माध्यम से सबसे बड़ी बात जो सीखी जा सकती है वह यह है कि भारत की तरह सोवियत संघ भी एक बड़ा देश है, जिसमें विविध संस्कृतियाँ और परम्पराएँ हैं—पर सोवियत संघ एक है और निरन्तर उन्नति कर रहा है। के० के० शाह, रसोतिसन, बाबाजान गफूराव, दारानिकोव, यूरी गागारिन, तीतोव आदि ने शुभ कामनाएँ भेजीं। प्रोफेसर शेरसिंह ने समारोह का उद्घाटन किया और श्री के० पी० एस० मेनन ने एक सारगर्भित भाषण दिया। 'सोवियत भूमि' की सर्वोत्तम सेवा यह है कि उसने हमारी नीति का जोरदार समर्थन कर हम को आश्वस्त किया है कि सोवियत संघ भारत के साथ है। 'सोवियत भूमि' की सेवाएँ निःसंदेह मूल्यवान हैं। डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन' ने 'सोवियत भूमि' के प्रचार की बात बताई कि प्रति वर्ष २१००० प्रतियों की वृद्धि होती है। पहले यह ५०० छपती थी और अब ५ लाख। पत्रिका का प्रचार कार्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा दोनों देश इतने निकट हुए हैं।

'सोवियत भूमि' भारत की बहुचर्चित और काफी मात्रा में छपने वाली पत्रिका है। अनेक भाषाओं में प्रकाशित यह पत्रिका गत २,३ वर्षों से 'नेहरू पुरस्कार' भी आयोजित करती है, और हिंदी आदि भाषाओं के कई ख्यातनामा लेखक और पत्रकार पुरस्कृत हो चुके हैं। यह पत्रिका भारत स्थित सोवियत दूतावास से, पाक्षिक रूप में, अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी, बंगला, उर्दू, तमिल, मलयालम, कन्नड़, पंजाबी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगु, असमिया तथा नेपाली भाषाओं में छपती है। इसके वर्तमान मुख्य संपादक हैं कोलोकोलोव। भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से इस पत्रिका के विविध संस्करण बहुत उपयोगी हो सकते हैं। इस का कारण यह है कि भाषा का रूप आधुनिक तथा बोलचाल का होता है और इस बात की चेष्टा की जाती है कि रूपान्तर निकटतम हो। मेरे विचार के अनुसार 'सोवियत भूमि' के माध्यम से कोई भी विषय ऐसा नहीं रहा है जिस पर भारतीय तथा सोवियत दृष्टिकोणों से प्रकाश न डाला गया हो। रूस जनतंत्र के अतिरिक्त 'संघ' के अन्य जनतंत्रों का विवरण भी बड़े विस्तार के साथ दिया जाता है। वास्तव में 'सोवियत भूमि' एक महान् पत्रिका है, और इसके द्वारा भारत सोवियत मैत्री का किया गया कार्य अत्यंत मूल्यवान है।

सोवियत नारी

'सोवियत नारी' का भी भारत में बहुत प्रचार है, इसका एक कारण

इसका अत्यंत आकर्षक मुद्रण और नारी जीवन को चित्रित करने की कला है। यह पत्रिका हिंदी में ही नहीं छपती, वरन् रूसी, अंग्रेजी, कोरियाई, चीनी, जापानी, फ्रेंच, जर्मन, स्पैनिश तथा हंगेरियन भाषाओं में भी छपकर विश्व में प्रसारित होती है। यह पत्रिका सन १७४५ से प्रकाशित होती रही है। इसका प्रकाशन 'सोवियत नारी-समिति' तथा 'सोवियत संघ' की ट्रेड यूनियनों की केन्द्रीय परिषद द्वारा होता है। हिंदी-संस्करण के वर्तमान संपादक गोलूवेव हैं। संयुक्त राष्ट्र-संघ द्वारा स्वीकृत नारियों के प्रति भेदभाव बरतने का अंत करने संबंधी घोषणा-पत्र का 'सोवियत नारी' ने हार्दिक स्वागत किया। इस विषय पर इन्दिरा गांधी ने अपने विचार बताते हुए कहा था—'नारियों के प्रति भेद-भाव बरतने का अन्त करने संबंधी घोषणा-पत्र मानव-समाज के विकास में एक महत्त्वपूर्ण प्रगति चिह्न है।' यह एक सुखद संयोग है कि यह घोषणा-पत्र अक्टूबर-क्रान्ति की ५०वीं वर्षगांठ पर सर्वसम्मति से पास हुआ। 'सोवियत नारी' ने इसका स्वागत किया और पाठकों से उनके विचार मांगे। १०३ देशों में पढ़ी जाने वाली यह पत्रिका भारतीय जनता को भी विस्तृत जानकारी देती रही है।

सोवियत संघ में महिलाएँ उन्नति पर हैं। बुद्धिजीवियों में उनका प्रतिशत ५४ है। लगभग ८०० महिलाओं को लेनिन तथा स्टालिन पुरस्कार मिल चुके हैं। भारत में तो वर्तमान प्रधान मंत्री महिला हैं ही, पर वहाँ भी उज्बेक जनतंत्र की अध्यक्षा महिला हैं। 'माँ' को राष्ट्रीय अनुदान मिलता है। उदाहरण के लिए ३ बच्चे होने पर ६५ रूबल का एकमुश्त अनुदान और प्रतिमास ५ रूबल; १० बच्चे होने पर एकमुश्त २५० रूबल और प्रतिमास १५ रूबल। विवाह के बाद 'गोत्र-निर्धारण' में पति-पत्नी का समानाधिकार है।

## सोवियत संघ

एक अन्य ख्यातिप्राप्त मासिक पत्रिका है—'सोवियत संघ'। यह 'संघ' की सचित्र, सामाजिक-राजनैतिक पत्रिका है। भारत की तीन भाषाओं—हिंदी, उर्दू तथा बँगला में इसका प्रकाशन होता है। इसका हिंदी-संस्करण लेनिन-पदक प्राप्त लेनिन छापाखाना, मास्को द्वारा मुद्रित होता है। मुद्रण, गेटअप, आकर्षण आदि की दृष्टि से यह भी एक उत्कृष्ट पत्रिका है। तीन भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त रूसी, कोरियाई, चीनी, वियतनामी, मंगोली, हंगेरियाई

रूमानियाई, सेरव्याई, अरबी, अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच, स्पेनी, फिनिश और जापानी भाषाओं में भी यह पत्रिका छपती है। इसके वर्तमान प्रधान सम्पादक हैं प्रिवाचोव। इसका उद्देश्य सोवियत संघ के विविध पक्षों को विश्व के सम्मुख उपस्थित करना है। भारतीय भाषाओं में प्रकाशित इसके संस्करण भारतीय और सोवियत दोनों संघों को प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध करने के लिए प्रयत्नशील हैं। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने सोवियत संघ के बारे में कहा था—'मानव समाज की सदियों पुरानी संस्कृति का निर्माण आम लोगों के श्रम से होता है। मानव की भाँति रहने की उन्हें फुरसत नहीं। भूखे, फटेहाल, निरक्षर, श्रीमानों की जूठन पर जीने वाले वे हर किसी की सेवा करते हैं। उनकी महनत का तो कोई पार ही नहीं, किन्तु अधिकार उन्हें कुछ भी नहीं—उनकी हालत उन दमामबरदारों की तरह है जो हमेशा खड़े होकर, सिर पर दमा उठाए, ऊपर वालों को उजाला करते हैं। रूस में इस समस्या को हल करने की कोशिश की जा रही है।' चार्ली चैपलिन ने तो यहाँ तक कहा था—'रूसियो! भविष्य तुम्हारा है।' इस पत्रिका के द्वारा भारत को काफी जानकारी मिलती रहती है।

## दो 'दर्पण'—सोवियत दर्पण, युवक दर्पण

सूचना प्रदायन की दृष्टि से 'सोवियत दर्पण' बहुत महत्त्वपूर्ण है। अभी कुछ ही वर्षों पूर्व इसका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है पर 'दर्पण' के माध्यम से जो सामग्री मिलती है वह बहुत उपयोगी होती है। हिंदी, उर्दू, पंजाबी, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलगु, बंगला, मलयालम और अंग्रेजी में प्रकाशित इस पत्रिका के वर्तमान संपादक श्री कोलोकोलोव ही हैं। और हिंदी में इसके सहयोगी हैं श्री सच्चिदानंद शर्मा। इसका मुद्रण भारत में ही होता है। इसमें भारत तथा रूस की बहुत कुछ जानकारी रहती है, साथ ही रूसी पत्रों में प्रकाशित विशिष्ट लेख भी उद्धृत किए जाते हैं। 'कम्यूनिस्ट', 'प्रावदा', 'इज-वेस्तिया', 'मोस्कोव्स्काया', 'ज्नाम्या', 'नोवोस्ती प्रेस एजेंसी', 'एकानोमीचेस्काया गजेता' आदि माध्यमों के नाम लिए जा सकते हैं। इसमें प्रकाशित होने वाले लेखों की कोई सीमाएँ नहीं हैं, सभी प्रकार के लेख हैं, यथा—'समाजवादी जगत', 'पूंजीवादी जगत', 'वियतनाम और उसका मुक्ति संग्राम', 'चीन में वर्तमान घटनाक्रम के स्रोत', मार्क्सवाद', 'नियोजन', 'आर्थिक सुधार', 'कृषि का विकास', 'मेहूं', 'सोवियत पुस्तकें', 'लेनिन', 'सोवियत और हिन्दुस्तान

के निर्णय', 'ख्रुश्चेव का मॉस्को में भाषण', 'गागारिन को श्रद्धांजलि', 'गोर्की शताब्दी समारोह' 'विदेश व्यापार', 'सोवियत भूमि की २०वीं वर्षगांठ', 'मित्रता की यात्रा', 'पीकिंग की नीति' आदि आदि। प्रत्येक प्रकाशन किसी एक ही प्रश्न पर विचार करता है। भारत की इतनी भाषाओं में इसका प्रकाशन इसकी उपयोगिता तथा लोकप्रियता पर प्रकाश डालता है।

दूसरा दर्पण है 'युवक दर्पण'। इसके प्रकाशन का अभी दूसरा वर्ष है। यह एक समाचार-साप्ताहिक है, और भारत स्थित सोवियत संघ दूतावास के सूचना-विभाग द्वारा प्रकाशित होता है। इसमें प्रकाशित समाचार भारत और सोवियत संघ को कितने निकट ला रहे हैं इसके प्रमाणस्वरूप २५ जून, १९६८ के संस्करण को ही लीजिए—(१) सोवियत संघ में भारत का संसदीय प्रतिनिधि मंडल, (२) मिन्स्क में सोवियत-भारत मैत्री संघ की स्थापना, (३) सोवियत मेडिकल उद्योग के विशेषज्ञ भारत में—हैदराबाद, ऋषिकेष तथा मद्रास में मेडिकल प्रयोगशालाओं को देखेंगे, (४) भारत के सुप्रसिद्ध फिल्मी सितारे, विशेष रूप से राजकपूर, ख्वाजा अहमद अब्बास, ताशकंद समारोह में, (५) 'इस्कस' नेताओं का मंडल सोवियत संघ पहुँचा—बिहार राज्य परिषद के उपाध्यक्ष के नेतृत्व में १५ दिन के दौरे पर। तरुणों के लिए इसमें विशेष सामग्री होती है—खेलकूद, गोष्ठियाँ, क्लब, कंसर्ट प्रतियोगिताएँ आदि की जानकारी। इसका अंग्रेजी संस्करण भी निकलता है। इसके कुछ लेख सुनिए—'गंगा और वोल्गा', 'सोवियत और भारत कवियों का मुशायरा', 'पहले कदम', 'भारत की खूबसूरत गुड़िया', 'वैज्ञानिक वाद-विवाद'।

## बाल स्पुतनिक

सोवियत संघ सभी वर्गों के लिए पाठ्य सामग्री की आवश्यकता का अनुभव करता है। बच्चों के लिए एक पत्रिका है 'बाल स्पुतनिक'। इसके अभी ३ खंड पूरे हुए हैं, चौथा चल रहा है। अंग्रेजी में यह 'जूनियर स्पुतनिक' के नाम से निकलता है। और इसी का हिंदी संस्करण 'बाल स्पुतनिक' नाम से प्रकाशित होता है। हिंदी-विभाग की देखरेख, इस समय, शीला साहनी करती हैं। मनोरंजन और उपयोगिता दोनों पर ध्यान रखा जाता है। भाषा बहुत अनुकूल होती है। 'धूप में नहायी स्तेपी' की कुछ पंक्तियाँ देखें—'धूप खिली थी और चारों ओर चुप्पी छायी थी। क्षण भर के लिए सेर्गेई की समझ में न आया कि वह कहाँ

है। वह इतना जानता था कि वह बिलकुल अकेला है, और उसके चारों ओर स्तेपी है। सेर्गेई बहुत देर तक घुटनों पर हाथ रखे चुपचाप बैठा रहा। लॉरियां तो शायद घंटों पहले चली गई होंगी, और क्या मालुम वे कब लौटें।'

इस में वे सभी बातें दी जाती हैं जो भारतीय बच्चों के लिए सोवियत संघ की जानकारी हेतु आवश्यक हैं।

एक रूसी नेता ने बताया था कि रूस में एक मात्र सुविधाप्राप्त वर्ग में 'बालकों' का नाम आता है। मास्को का बाल-साहित्य प्रकाशन गृह प्रति वर्ष ६०० ७०० बाल पुस्तकों की लगभग १५ करोड़ प्रतियाँ छापता है। रूस की यह मान्यता रही है कि बच्चों का साहित्य जितना उत्कृष्ट और कलात्मक होगा, बच्चों का निर्माण भी उतना ही उपयुक्त होगा। पुश्किन और टॉलस्टाय दोनों का भी ऐसा ही विचार था। बाल-साहित्य की आधुनिक गतिविधि रूस की महान क्रान्ति के बाद आरम्भ हुई। गोर्की भी इस विषय में रुचि लेते थे, उन्होंने बाल साहित्य को सामान्य संस्कृति की प्रगति का एक अंग बताया। इस प्रसंग में कवि, अनुवादक, साहित्यकार चुकोव्स्की का नाम सबसे पहले लिया जाता है। मार्शाक (गोर्की का एक शिष्य) ने भी बाल साहित्य में अपना योग-दान दिया। आवश्यक अनुभव और कौशल की सहायता से किसी बच्चे का मनोरंजन करना उतना कठिन नहीं है, जितना कठिन उसे वास्तविक आनंद पहुँचाना है, जिसके आधार पर वह अधिक दयालु और चतुर बन सकता है। 'बाल पुस्तक शिक्षा और आनन्द का कोश होती है।' भारत में प्रकाशित 'बाल स्पुतनिक' भी इस उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न है। इस बात को स्पष्ट करने की चेष्टा की जाती है कि सोवियत संघ में बच्चों के प्रति क्या दृष्टिकोण है। लेख, कहानी, कविता, सूचना आदि के संयोग से 'बाल स्पुतनिक' अपने मार्ग पर अग्रसर है।

अन्य प्रकाशन

'रशियन लैंग्वेज' नाम से एक और पत्रिका निकलती है जिसका उद्देश्य निश्चय ही रूसी भाषा का शिक्षण है। इसके सम्पादक हैं प्राक्तिनोव और परामर्शदाता हैं, सुनीतिकुमार चटर्जी तथा के॰पी॰एस॰ मेनन। यह 'सोवियत भूमि' का ही एक अंग है जो भाषा शिक्षण के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर प्रस्तुत किया गया है। रूसी शिक्षा संस्थान के कार्य में इस प्रकाशन से सहायता मिलेगी।

'सोवियत साहित्य' अंग्रेजी में प्रकाशित होता है, परन्तु भारत में बहुत लोकप्रिय है। इसके द्वारा आधुनिक सोवियत साहित्य का विशद् परिचय मिलता है। इसके कुछ विशेषांक भी निकलते हैं, जैसे—सोवियत कवि, सोवियत कहानीकार, १९१७ से १९६७ तक का सोवियत साहित्य।

एक प्रकाशन केवल चित्रों का ही है—'सोवियत पैनोरमा। आर्टपेपर पर छपा यह साप्ताहिक रूसी जीवन की झांकियां कराता है। इसमें यह चेष्टा की गई है कि यह चित्रमय पत्रिका भारत की जनता को सोवियत जीवन और प्रगति के विभिन्न पक्षों का दर्शन करा सके। इसके अलग 'अलबम' भी बनवाए जा सकते हैं, क्योंकि यह एक तरफ ही मुद्रित होता है। इसमें चित्रित होने वाले विषय हैं—कृषि, सेना, कला, नगर और स्मारक, संस्कृति, शिक्षा, भूगोल, इतिहास, उद्योग, विज्ञान, सुरक्षा, अंतरिक्ष, खेल, परिवहन तथा सोवियत जीवन के विशेष पक्ष। एक अंक में प्रायः ८ चित्र प्रकाशित होते हैं।

भारत-सोवियत संस्कृति से संबंधित अभी-अभी एक और बुलेटिन निकलने लगा है। मैं अभी इसके तीन अंक ही देख पाया हूं पर ऐसा प्रतीत होता है कि अपने क्षेत्र में यह यथेष्ट कार्य करने की क्षमता रखता है। इसमें अधिक सूचनाएँ भारत-सोवियत सांस्कृतिक परिषद् संबंधी होती हैं। 'इस्कस' की शाखायें लगभग ५०० हैं, और यह आवश्यक है कि उसका एक मुखपत्र हो जो शाखाओं को संगठित रखता हुआ मैत्री और सहयोग के कार्य को आगे बढ़ाए।

कुछ और भी सामयिक प्रकाशन हैं जो भारत में पढ़े जाते हैं, जैसे—कल्चर एण्ड लाइफ, सोवियत फिल्म, स्पोर्ट, मिलिटरी रिव्यू, मास्को न्यूज। इन सारे प्रकाशनों के विस्तार को देख कर एक विचार मन में स्वतः उत्पन्न है कि क्या भारत साम्यवाद की ओर जा रहा है, अथवा क्या यह प्रचार भारत को साम्यवादी बनाने के विचार से किया जा रहा है। इनमें विभिन्न मत हो सकते हैं परन्तु दो-एक बातें स्पष्ट हैं—भारत और सोवियत संघों का निकट पड़ोसी होना एक दूसरे को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है; हर व्यक्ति और संस्था का यह उद्देश्य रहा है कि उसके विचारों का प्रसार हो—बल्कि उसके मन में यह लिप्सा भी छिपी रह सकती है कि लोग उसका अनुगमन करें। यह स्वाभाविक है। हर कोई व्यक्ति अथवा संस्था अपना दृष्टिकोण रखते हैं। इसके उपरांत सुनने वाले, पढ़ने वाले या देखने वाले का व्यक्तित्व सामने आता है। वह क्या सोचता है, उसकी आन्तरिक शक्ति कितनी है, उसके

विचारों में कितनी परिपक्वता है और दूसरे के विचार उसके लिए कहाँ तक उपयोगी हैं। परन्तु यह कहने मे कोई सन्देह नहीं कि किसी भी प्रकार से सोवियत संघ का ऐसा कोई दबाव नहीं है, और वह अपना सहयोग, सहायता अथवा ऋण, बिना किसी शर्त के भारतीय विकास के लिए देता है। ये सारे सहयोगी प्रकाशन मैत्री-सूत्रों को दृढ़ करने हेतु हैं ऐसी धारणा बनती है।

### कुछ कविताओं के हिंदी-रूपान्तर

इस प्रसंग को समाप्त करते-करते कुछ रूसी कविताओं के हिंदी रूपान्तर प्रस्तुत किए जा रहे हैं। रूपान्तरित करने का प्रशंसनीय कार्य डॉ हरिवंशराय 'बच्चन' ने भी किया है। इनकी पुस्तक में २४ रूसी कवियों की ६४ कविताएँ हैं।

ब्लोक की एक रचना का हिंदी रूप—

लेकिन मेरे देश पुरातन !
तेरा मुखड़ा पहले जैसा
रोदन से आरक्त बना है।
कब तक झोंपड़ियों में माताओं
का क्रंदन उठा करेगा ?
कब तक उनके ऊपर भूखा
गिद्ध लालची चक्कर देगा ?

पुश्किन की कुछ पंक्तियाँ—

लेकर फीके बात-बवण्डर,
बीहड़ बादल बिन्जु वितान।
काले-काले आसमान मे
चढ़ता आता है तूफान।

और मेकोसेव की कविता का एक अंश—

यह पतझड़ की हवा कि इसके
कर्कश स्वर से कान पक गए।
ऊब गई मैं बार-बार
धरती के ऊपर शीश झुकाते
और गिराते और मिलाते
मिट्टी मे मोती के दाने।

# आगत-स्वागत

## स्वतंत्रता से पूर्व

भारत और रूस के संबंध बहुत पुराने हैं। भारत के दर्शन और धर्म से रूस प्रभावित होता रहा है। व्यापार-संबंधी सहयोग भी पुराना है। इधर जो अनुसंधान हुए हैं वे भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि दोनों देशों में काफी समय से आदान-प्रदान होता रहा है। बेकाल झील के किनारे जो भूमि है वह बौद्धों का स्वप्न-देश है, और वहाँ रेशमी कपड़ों तथा कागज पर लिखे जो ग्रंथ मिले हैं उनका केवल ऐतिहासिक महत्त्व ही नहीं है, सांस्कृतिक महत्त्व भी है। इसी पुस्तक में अन्यत्र प्राचीन संबंधों की कुछ झलक दी गई है, इस स्थान पर तो आधुनिक युग के संदर्भ में दोनों देशों के मिलते हुए स्वरों की दुंदुभी का घोष अपेक्षित है।

२ सितम्बर १६४६ को नेहरू ने राष्ट्रीय सरकार बनाई। यद्यपि तब तक भारत ब्रिटिश सरकार का ही एक अंग था किंतु नेहरूजी ने पूरी दृढ़ता के साथ कार्य आरंभ किया। रूस के प्रति उनकी सद्भावना काफी पुरानी थी। जिस वर्ष नेहरू ने लाहौर कांग्रेस में 'पूर्ण स्वतंत्रता' का प्रस्ताव पास कराया उसी वर्ष से रूस की यात्रा कर चुके थे। उन दिनों रूस, क्रान्ति के बाद, अपना स्वरूप धारण करने लगा था। तब मॉस्को द्रोस्कियों का एक छोटा नगर था। द्रोस्की पुराने ढँग का एक रिक्शा होता था जिसके ४ पहिये होते थे और घोड़ों द्वारा खींचा जाता था। इसमें ३, ४ आदमी बैठ सकते थे, और रफ्तार ६-७ मील प्रति घंटा होती थी। इसे आप बम्बई की पुरानी बग्घी कहिए। इस समय धर्म और समाज के प्रति रूस की नीति बड़ी कटु थी—धर्म को मानव का शत्रु समझते थे, और समाज के बंधनों को छिन्न-भिन्न करने की क्रिया जारी थी। लेनिन का प्रभुत्व स्थापित हो चुका था और पेट्रोग्राड लेनिनग्राड में परिवर्तित हो गया था। पश्चिम के देश रूस को एक बागी के रूप में देखते थे।

## हमारे राजदूत

सन् १६४७ में भारत स्वतंत्र हुआ और उसी वर्ष दोनों देशों में राजनैतिक संबंध स्थापित हुए। श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को रूस में भारत का

प्रथम राजदूत नियत किया गया। इसके पहले भी नेहरू ने सोवियत प्रतिनिधियों को अपना अभिवादन भेजा था। यू एन ओ में जो प्रतिनिधि मंडल श्रीमती पंडित के साथ गया था वह पहले ही राजनैतिक संबंध स्थापित करने की बात तै कर चुका था, और जब श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को गौरव कर्म के लिए नियुक्त कर दिया गया तो मैत्री के पग दृढ़ हो गए। इसके उपरान्त हमारे देश के चोटी के विद्वान और भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन मॉस्को में भारत के राजदूत नियुक्त हुए। वे उन दिनों ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में तुलनात्मक धर्म के प्रोफेसर थे। इनके पश्चात्, काफी समय तक बड़ी सफलता के साथ राजदूत पद की प्रतिष्ठा का निर्वाह करने वाले, भारतीय विदेशी सेवा के एक प्रमुख सदस्य, श्री के पी एस मेनन राजदूत हुए। इनका कार्य काल १९५२ से १९६१ तक रहा। सन् १९६४ में जब मैं मॉस्को गया तो श्री कौल भारत के राजदूत पद पर आसीन थे, और आज श्री केवलसिंह इस पद को सुशोभित कर रहे हैं।

## नेहरू की दूसरी यात्रा

श्री मेनन के राजदूत-काल में नेहरू ने रूस को दूसरी बार देखा। अब वे भारत के प्रधान मंत्री और जनता के प्राण थे। सन् १९५५ की यह यात्रा सोवियत जन मानस पर अंकित हो गई। नेहरू का स्वागत वास्तव में सम्राटों जैसा हुआ। क्रेमलिन में नेहरू के सम्मान में जो भोज दिया गया वह क्रेमलिन के इतिहास में एक घटना है। १० जून को हुए उस समारोह में नेहरू ने कहा—"शांति की बात कहना और बात है, और शान्ति की कामना दूसरी। रूस एक महान् देश है, और महानता के साथ उत्तरदायित्व होता है। मुझे विश्वास है कि यह महान् देश शांति के विस्तार में अपने उत्तरदायित्व का समुचित उपयोग करेगा।" नेहरू ही ऐसे प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें साम्यवादी न होते हुए भी वहाँ बोलने का अवसर दिया गया। तीन दिन मॉस्को में रहने के पश्चात्, अगले ८१० दिनों में उन्होंने सपूर्ण सोवियत भूमि को देखा। उनके देश दर्शन की औसत १००० मील प्रति दिन थी। नेहरू जी के प्रति सोवियत जनों का बड़ा प्रेम था, बड़ी श्रद्धा थी। जहाँ कहीं वे गए अपार भीड़ ने उनका स्वागत किया। चलते समय नेहरू के शब्द थे—'सोवियत संघ क्षेत्रफल में ही बड़ा नहीं, बल्कि उसका हृदय भी विशाल है।' वहाँ के समाचार

पत्रों ने लिखा था कि कहीं कहीं तो मीलों तक नेहरू की गाड़ी फूलों पर चली। हम लोग सभी जानते हैं कि नेहरू जी को फूलों का बड़ा शौक था, और एक लाल गुलाब तो सर्वदा उनके हृदय के निकट रहता था। इस लाल गुलाब में वे किसका दर्शन करते थे यह तो नेहरू जी के मन की बात है, लेकिन अनेक अवसरों पर यह देखा गया कि जब नेहरू पर फूलों की बरसात होती, तो वे उन्हें बड़े चाव से लपकते और बच्चों के निकट आने पर उतने ही शौक से उन पुष्पों को वितरित कर देते। नेहरू के स्वागत में पश्चिम जैसी उदासीनता नहीं थी, पूर्व जैसा उल्लास था। उनके साथ उनकी पुत्री और हमारी वर्तमान प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी भी थीं। इंदिरा जी के व्यक्तित्व से भी लोग बहुत प्रभावित हुए, और कुछ लोगों ने तो मीलों दौड़कर उन्हें फूलों के गुच्छे भेंट किए। सोवियत पत्रों में नेहरू के वक्तव्य प्रकाशित हुए, अनेक चित्र भी प्रकाशित हुए। उनके वहाँ जाने के कुछ ही दिनों बाद उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'डिस्कवरी ऑव इंडिया' का रूसी अनुवाद हुआ।

इसमें संदेह नहीं कि नेहरू का व्यक्तित्व इतना प्रतिभाशाली था कि वे जहाँ गए वहीं उनकी जयजयकार हुई। उन्हें शान्ति का अग्रदूत समझा जाता था, और आधुनिक भारत का निर्माता। सोवियत नेताओं से उनकी जो बातचीत हुई वह काफी महत्वपूर्ण थी। उन्होंने सर्वदा इस बात पर जोर दिया कि विश्व की प्रमुख शक्तियाँ स्थायी शान्ति के लिए कृतसंकल्प हों। उस समय के प्रधान मंत्री बुलगानिन ने कहा था, 'यदि पश्चिम की शक्तियाँ नेहरू को उसी तरह समझें जैसा हम समझते हैं तो विश्व का बड़ा कल्याण हो।' इसी प्रकार के भावों से भरे नेहरू जी अपनी उसी यात्रा के दौरान लंदन भी गए, जहाँ उन्होंने रूस की विचार-धारा को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।

## रूसी नेताओं का भारत-आगमन

इसी वर्ष नवम्बर माह में बुलगानिन और ख्रुश्चेव भारत पधारे। उन्होंने देश का लम्बा दौरा किया। मास्को में जहां नेहरू के स्वागत में १ लाख व्यक्ति आए वहां दिल्ली के रामलीला मैदान में ५ लाख व्यक्ति जमा हो गए, और कलकत्ते में तो करीब ३० लाख। स्वागत के उस दृश्य का वर्णन करते हुए उस समय के पत्रों ने लिखा था, 'विशाल मानव-समुदाय का ऐसा समुद्र उमड़ा कि स्वागत में आमंत्रित चार सौ व्यक्तियों में से राजभवन तक पहुंचना किसी

के लिए सम्भव न था। अर्द्धरात्रि तक भीड़ के तूफान उठते रहे, और अगले दिन रूसी नेताओं तथा नेहरू के भाषणोपरान्त ही मानव समुद्र की ये लहरें विलीन हुईं।' रूसी नेताओं ने बम्बई, पूना, बेंगलोर, जयपुर, उटकमण्ड, कोयम्बटूर, आगरा आदि अनेक स्थानों की यात्राएं कीं। वे काश्मीर भी गए। स्थान स्थान पर उनके भव्य स्वागत हुए। जब वे राजस्थान की राजधानी जयपुर में पधारने को थे तो सरकार की ओर से यह विज्ञप्ति प्रकाशित हुई कि जो भी अध्यापक या विद्यार्थी रूसी नेताओं के दर्शनार्थ जाएंगे उनकी छुट्टी रहेगी। उन दिनों मैं सरदारशहर मे प्रिंसिपल था। बड़ा उत्साह था कॉलेज में, और काफी अध्यापक तथा विद्यार्थियों ने जयपुर जाकर रूसी नेताओं के दर्शन की इच्छा व्यक्त की। मैं भी उन लोगों के साथ जयपुर गया। जयपुर में इतनी भीड़ थी, और मेहमानों के प्रस्तावित जुलूस मार्ग के दोनों ओर इतनी बड़ी संख्या मे लोग खड़े थे कि कभी पहले दिनों का दशहरा याद आता था, कभी तीज। दोनों नेताओं को देखने का यह अच्छा अवसर था। मैंने निकट से देखा। खु्रुश्चेव छोटे कद के काफी तगड़े दिखाई पड़े। उनका ललाट जगमगा रहा था, बालों से रहित सिर दर्पण सदृश चमकता था। बुलगानिन की एडवर्डकट दाढ़ी और भव्य मुख मण्डल उनके सौजन्य के प्रतीक थे। शाम को रामनिवास बाग मे एक बड़ा स्वागत-आयोजन हुआ, जिसमे खु्रुश्चेव को सिरोपाव भेंट किया गया। खुश्चेव के सिर पर पचरगा राजस्थानी साफा बांधा गया और जनता बड़े उत्साह से 'रूसी-हिन्दी भाई-भाई' का तुमुल घोष करने लगी। खु्रुश्चेव का भाषण बहुत जोरदार था। उनके भाषण का अनुवाद शायद उसी लम्बे रूसी ने किया जिसे ८-९ वर्ष पश्चात् मैंने मास्को में खु्रुश्चेव के साथ देखा। तब, अर्थात् १९६४ मे, १९५५ की दीप्ति उनके मुख मण्डल पर दिखाई नहीं दी—अवस्था का तकाजा रहा हो।

उनकी भारत-यात्रा के अवसर पर तरह तरह की बातें चल निकली थीं। कोई कहता था कि वे रूस की ओर से भारत को आश्वस्त करने आए हैं। कोई कहता कि खु्रुश्चेव ने नेहरू से कह दिया है, 'कोई भी संकट हो, डरना नहीं। काश्मीर के पहाड़ पर चढ़ कर मुझे पुकारना, मैं फौरन आ जाऊंगा। आवाज देने भर की तो देर लगेगी।' रूसी मेहमानों की यह यात्रा बड़े उत्साहपूर्ण वातावरण में हुई और भारतीयों के हृदयों में सोवियत संघ के प्रति पूर्ण सद्भावना प्रतिष्ठित हो गई। उनके 'नमस्ते' ने बहुत दिनों तक

विदेशियों को प्रेरित किया, और आज भी कुछ विदेशी 'नमस्ते' या 'नमस्कार' करते हैं। ऐसा प्रतीत होता था कि रूसी नेता भारतीयों के हृदय में बस गये हैं। अपनी नीति को स्पष्ट करते हुए उन्होंने बार-बार कहा था, 'भारत अपनी नीति पर चले, सोवियत संघ अपनी नीति उस पर थोपना नहीं चाहता।' उन्होंने नेहरू को एशिया का अग्रगण्य नेता बताया और भारत की उन्नति का जिकर करते हुए कहा, 'उन्नति की यह धारा इतनी तेज है कि इसने सारे कूल-किनारों को तोड़ दिया है।' गांधीजी की उन्होंने बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने अपनी यात्रा में इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि काश्मीर भारत का अभिन्न अंग है।

## खु्श्चेव भारत में दूसरी बार

सन् १९६० में एक बार फिर खु्श्चेव भारत पधारे। पिछली बार वे पार्टी के महासचिव थे, इस बार रूस के प्रधान मंत्री। इन चार वर्षों का जिकर करते हुए उन्होंने कहा था कि इस बीच भारत और सोवियत संघ ने मित्रता को मजबूत करने के लिए भारी कदम उठाए हैं। दिल्ली के हवाई अड्डे पर हार्दिक स्वागत के पश्चात उसी दिन खु्श्चेव ने भारत की संसद में भाषण दिया। उन्होंने घोषणा की कि शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धांत के आधार पर ही समस्त विवादग्रस्त अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान होना चाहिए। भिलाई उनके मस्तिष्क में हमेशा रहता था। उन्होंने कहा—'मेरी कामना है हमारे दोनों देशों की मित्रता उतनी ही मजबूत हो जितना मजबूत भिलाई में बना हुआ इस्पात।' अगले दिन दिल्ली के नागरिकों ने स्वागत किया। उस स्वागत में खु्श्चेव ने पूंजीवाद के बारे में कहा था—'पूंजीवाद एक बढ़िया घोड़ा था, पर अब वह टट्टू है और चारों पैरों से लंगड़ाता है।' भोज के अवसर पर भी उन्होंने कुछ इसी प्रकार का भाषण दिया। उनकी आवाज भिलाई कारखाने में भी गूंजी। १६ फरवरी की संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया था कि भारत और सोवियत संघ का आर्थिक सहयोग बढ़ता रहेगा। भिलाई लोहा-इस्पात कारखाना, राँची में मशीन बनाने का कारखाना, निवेली के बिजली-घर, कोरबा की कोयला-योजना, बरोनी की रिफाइनरी—सभी कुछ उस सहयोग के प्रतीक हैं। अपने भाषण के अन्तर्गत खु्श्चेव कुछ नारे भी लगाते थे, जैसे—'महान् भारत गणराज्य जिंदाबाद!', 'सोवियत भारत मित्रता चिरस्थायी और अटूट हो!' 'सारी दुनिया में टिकाऊ शांति जिंदाबाद!'

'हिंदी रूसी भाई भाई !' कलकत्ते में एक बार जो फिर समारोह हुआ यह वहाँ की तीसरी यात्रा थी। इस यात्रा मे खु्रुश्चेव ने भारत के अतिरिक्त अफगानिस्तान, बर्मा और इंडोनेशिया का भी दौरा किया था। लौटती बार वे कलकत्ता होकर ही मॉस्को गए। करतलध्वनि के बीच उन्होंने कहा था—यह सोवियत संघ ही है जो ससार में सबसे अधिक शक्तिशाली होने पर भी कूटनीति और राजनीति मे बल प्रयोग करना नही चाहता। सामान्य तथा पूर्ण निरस्त्रीकरण का प्रस्ताव रखने वाला यह पहला देश है। उन्होंने यह शुभ कामना व्यक्त की—'समय आएगा जब आपका देश, आर्थिक दृष्टि से विकसित राज्यों मे अपना उपयुक्त स्थान लेगा, जब भारत में निर्मित वस्तुएँ उत्कृष्ट कोटि की होंगी और सारे विश्व मे वितरित होंगी।'

स्वदेश लौटने पर खु्रुश्चेव ने जो भाषण दिया उसमे राजस्थान के सूरतगढ फार्म की विशेष रूप से चर्चा की। उन्होंने कहा—'सूरतगढ में भारत के सूरज की गर्म किरणों के नीचे उपजाऊ धरती पर बिल्कुल नए ढग की मशीनों की ताकत देखने को मिलती थी। धरती जोतने वाले मशीनों का प्रयोग दक्षता के साथ करते थे।' सूरतगढ का उदाहरण भारत सरकार को यह सोचने का कारण प्रदान करता है कि भारत के विभिन्न राज्यों मे ऐसे ही बड़े बड़े नए फार्म कायम किए जायें। श्री नेहरू को भी इस फार्म पर गर्व था उनका कहना था कि यदि देश मे सूरतगढ़ जैसे सौ फार्म हो जायें तो देश की खाद्य समस्या हल हो जाए। भिलाई कारखाने को भी खु्रुश्चेव ने प्रशसा के साथ याद किया और इसे भारत का बडा औद्योगिक केन्द्र बताया। उनकी मान्यता थी कि कोई भी राज्य भारी उद्योगों के बिना, बड़े कारखाने, फैक्ट्री और मिलों के बिना अपने प्रजातंत्र का सफलता के साथ विकास नहीं कर सकता। भारी उद्योग किसी देश के बल और शक्ति का स्रोत हैं, उसकी स्वाधीनता का आधार हैं।

## राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन

सन् १९६४ मे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन सोवियत सघ के राजकीय दौरे पर गए। लेखक उन दिनों मॉस्को मे ही था और राष्ट्रपति के कई स्वागत समारोहों में शामिल हुआ। विदाई-समारोह में भी हवाई अड्डे पर उपस्थित था। एक प्रकार से राष्ट्रपति और लेखक ने एक ही समय मॉस्को

से उड़ानें लीं—राष्ट्रपति आयर्लैंड पधारे और लेखक स्वदेश। इस यात्रा का वर्णन अन्यत्र दिया जा चुका है।

लालबहादुर शास्त्री

पंडित नेहरू के पश्चात् लालबहादुर शास्त्री भारत के प्रधानमन्त्री हुए। लालबहादुर शास्त्री की ताशकंद यात्रा एक विशेष प्रसंग में थी। इस समय तक कोसिगिन सोवियत संघ के प्रधान मंत्री पद पर प्रतिष्ठित हो चुके थे, और भारत-पाक सम्बन्धों को मैत्रीपूर्ण बनाने में सक्रिय थे। सन् १९६५ में जो दुर्भाग्यपूर्ण भारत-पाक संघर्ष हुआ उसने सभी चिन्तकों को इस बात की ओर प्रेरित किया कि विश्व-शान्ति के क्षेत्र में भारत-पाक-मैत्री बहुत आवश्यक है। यह मुठभेड़ कुछ हल्की नहीं थी, बल्कि जोधपुर का नागरिक होने के नाते मुझे पता लगा कि केवल जोधपुर पर ही सैकड़ों की तादाद में बम गिराये गये थे। मैं उन दिनों जोधपुर नहीं था—एक अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस की प्राच्य भाषा-सभा का सभापतित्व करने टोकियो आमंत्रित किया गया था। जापान में अखबारों में निरन्तर इस संघर्ष की बातें पढ़ता था। टोकियो में पाक और इण्डोनेशिया के नागरिकों द्वारा भारतीय दूतावास के सामने प्रदर्शनों की योजनाएं भी बनाई गई, और इस बात को प्रमाणित करने की चेष्टा की गई कि भारत आक्रामक है। इसमें सचाई कितनी है इसे तो सभी विचारशील व्यक्ति जानते हैं, परन्तु दोनों देशों के जन-धन की बहुत क्षति हुई।। सोवियत संघ, जो सर्वदा से ही सहअस्तित्व में विश्वास रखता है, एक बार फिर आगे आया और उसने भारत के लालबहादुर शास्त्री तथा पाकिस्तान के अयूब खां को इस विचार से ताशकंद में आमंत्रित किया कि दोनों देशों के नेता पारस्परिक विचार-विनिमय के द्वारा संघर्ष समाप्त कर दें, और आपसी सम्बन्धों को मैत्रीपूर्ण बनाने की ओर सचेष्ट हों। उन दिनों का सभी को स्मरण होगा जब सारे विश्व की आंखें प्रतिक्षण ताशकंद-समझौते की ओर लगी हुई थीं। ऐसा प्रतीत होने लगा था कि सम्मेलन सफल नहीं होगा, किन्तु जादू की तरह यह समाचार पढ़ा गया कि दोनों देश मैत्रीपूर्ण व्यवहार के लिए तत्पर हो गये हैं, और इस भावना को आगे बढ़ाने के लिए निरन्तर कार्य किया जाएगा। आज भी ताशकंद-भावना दोनों देशों के सम्मुख उपस्थित है और आशा यही करनी चाहिए कि दोनों देशों के लिए इसका परिणाम हितकारी होगा। हमें इस समझौते की भारी कीमत चुकानी पड़ी। वैसे तो हम मानते हैं—'हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि

हाथ', परन्तु लालबहादुर शास्त्री ताशकन्द से भारत लौट कर नहीं आ सके, उनका शव ही यहां लाया गया। पर उनका बलिदान लोगों की जबान पर सर्वदा प्रशंसा का विषय बना रहेगा।

## इंदिरा गांधी

हमारी प्रधान मंत्री कई बार सोवियत संघ की यात्रा कर चुकी हैं। वैसे तो अपने पूज्य पिता के सामने ही वे अपने व्यक्तित्व की छाप लगा चुकी थीं, परन्तु अपने प्रधान मंत्रित्व काल में भी उनका स्वागत बड़े सम्मान और स्नेह के साथ हुआ है। कुछ लोग अब कहने लगे हैं, और किसी सीमा तक हमारे कतिपय नेता भी यह मानने लगे हैं कि भारत के प्रति रूस के दृष्टिकोण में कुछ परिवर्तन हुआ है क्योंकि रूस ने पाकिस्तान के साथ भी कई करार किए हैं और सहायताएँ भी दी हैं परन्तु प्रधान मंत्री ने कई अवसरों पर कहा था कि किसी अन्य देश से मैत्री होना हमारे देश के प्रति कटुता साबित नहीं करता। योरुप के पूर्वी देशों की यात्रा करते समय श्रीमती गांधी मास्को ठहरीं, और अक्टूबर क्रांति की ५०वीं जयन्ती के अवसर पर भी, सोवियत संघ के निमंत्रण पर, वे वहां पधारीं। ७ नवम्बर १९६७ को होने वाली सैनिक परेड का इन्होंने भी निरीक्षण किया इस अवसर पर प्रधान मंत्री ने सोवियत प्रधान मंत्री को शुभ कामनाएँ अर्पित कीं। उन्होंने कहा था, 'आपका राष्ट्र उन्नति करे, आपका देश समृद्ध हो और विश्व शांति में आपके प्रयास सफल हों, जिससे मानव का हित हो। दोनों देशों की मित्रता चिरस्थाई हो।' यहां भारत में भी इस जयन्ती के अवसर पर अनेक समारोह हुए थे, और प्रधान मंत्री की यह यात्रा सोवियत-संघ में बहुत प्रसन्नता और सम्मान की सूचक हुई।

## कोसिगिन

इसी वर्ष जनवरी मास में सोवियत संघ की मंत्रि परिषद् के अध्यक्ष कोसिगिन राजकीय यात्रा पर भारत पधारे। सन् १९६४ में कोसिगिन इस पद के लिए निर्वाचित किए गए थे, मेरे भारत लौटने के कुछ ही समय पश्चात्। पालम हवाई अड्डे पर उनका जोरदार स्वागत हुआ। एक प्रकार से कोसिगिन की यह चौथी भारतीय यात्रा थी। उनकी प्रथम यात्रा लगभग ७ वर्ष पूर्व हुई थी, जब उन्होंने भारत की योजना और आर्थिक विकास पर विशेष ध्यान दिया था। इस बीच दोनों देशों के बीच सहयोग में काफी वृद्धि हुई। अपनी यात्रा

के समय कोसिगिन ने राजघाट, शांतिवन और विजयघाट पर पुष्पांजलियाँ अर्पित की। इनके सम्मान में दिए गए भोज के अवसर पर भारत की ओर से कहा गया कि भारत को सोवियत संघ की मैत्री पर गर्व है। कोसिगिन ने भी इस बात की कामना व्यक्त की कि सभी विश्व में शान्ति हो और भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध अच्छे हों। उन्होंने गणराज्य दिवस की परेड भी देखी। इस अवसर पर राष्ट्रपति टीटो भी शामिल हुए थे। इस प्रकार यह एक महत्त्वपूर्ण संयोग था, जब विश्व के ३ देशों के प्रधान मंत्री भारत के इस महा-पर्व पर उपस्थित थे। नागरिक अभिनन्दन के अवसर पर दिल्ली के मेयर श्री हंसराज गुप्त ने अपने भाषण में कहा था, 'कोसिगिन सोवियत जनता के ही महान् नेता नहीं हैं, वरन् विश्व की प्रख्यात विभूति हैं जो कठोर परिश्रम, न्याय तथा अपने देशवासियों और सम्पूर्ण मानवता की सेवा की अदम्य लगन के फलस्वरूप आज इस महान् पद पर पहुंचे हैं।' उस अवसर पर सोवियत प्रधान मंत्री का कथन था, 'पारस्परिक सहयोग से बने कारखाने भारतीय अर्थतंत्र को विकसित करने और विदेशी निर्भरता से मुक्ति दिलाने में सहायता करेंगे। ये कारखाने भारतीय जनता के रहन-सहन को उन्नत करने में भी सहायता पहुंचाते हैं।' तालियों की गड़गड़ाहट के बीच उन्होंने घोषणा की, 'हमारी दोस्ती को कोई नहीं तोड़ सकता। हमारे सम्बन्ध अटूट हैं। और वे हमारे दोनों देशों के तथा विश्व-शान्ति के हित में दिन पर दिन मजबूत होते जाएँगे।'

लालकिले में नागरिक अभिनंदन के पश्चात् कोसिगिन ने लोक-नृत्यों को भी देखा। उन्होंने हरिद्वार तथा ऋषिकेश की यात्रा भी की, जहाँ वे विद्युत-उपकरण कारखाने तथा एण्टी-बायोटिक्स कारखाने को देख कर प्रसन्न हुए। अपने भारत-प्रवास में वे इस बात को भी नहीं भूले कि उन्हें उस महान् नेता की पत्नी से भी मिलना है जिसने शांति के लिए इतना त्याग किया। दोनों देशों द्वारा प्रकाशित संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों पक्ष विश्व-शान्ति को सुदृढ़ करने में पूर्ण विश्वास रखते हैं और संयुक्त राष्ट्र-संघ-चार्टर के सिद्धान्तों तथा आदर्शों में अपनी निष्ठा रखते हैं। दोनों पक्षों का मत था कि चार्टर का पालन सख्ती के साथ किया जाए, जिसमें संयुक्त राष्ट्र-संघ अधिक मजबूत और कारगर बन सके।

## डॉ० जाकिरहुसेन

एक राष्ट्रपति का स्वागत समारोह किस प्रकार होता है यह मैं अपने

मॉस्को प्रवास में देख चुका हूँ। हमारे वर्तमान राष्ट्रपति कुछ ही सप्ताहों पूर्व सोवियत संघ के राजकीय दौरे पर पधारे थे। वे लगभग १० दिन तक सोवियत संघ में रहे और कई स्थानों की यात्रा की। सभी स्थानों पर उनका भव्य स्वागत हुआ। सोवियत नेताओं से उनकी बड़ी स्पष्ट वार्ता हुई और भारत का रुख बताने में उन्होंने सभी बातें सामने रखीं। लेनिनग्राड में उन्होंने हरमिटेज म्यूजियम की बड़ी प्रशंसा की। वे मध्य एशिया के दौरे पर भी गए, और कई स्थानों पर उन्हें ऐसा आभास हुआ जैसे वे भारत के ही किसी प्रांत में हों। सोवियत संघ में भारत के प्रति मैत्री-भावना से वे प्रभावित हुए, और लौटते समय उन्होंने कहा था कि उनकी यात्रा बड़ी सुखद रही। डॉ० जाकिर-हुसैन राजनीतिक नेता होने के साथ साथ बड़े विद्वान भी हैं, अपनी सोवियत यात्रा के अवसर पर उन्होंने वहाँ की संस्कृति और साहित्य की भी अनेक बातें जानने की चेष्टा की, और यह देख कर उन्हें प्रसन्नता हुई कि दोनों देशों में कुछ सांस्कृतिक समानताएँ भी हैं।

इसके अतिरिक्त भारत और रूस के विद्वान, संसद-सदस्य, सांस्कृतिक मंडल, इंजीनियर और सेनाओं के अधिकारी बराबर आते जाते रहते हैं। दोनों देशों के बीच इस बात की पुष्टि कई बार हुई है कि इस प्रकार का आना जाना बराबर बना रहे, ताकि दोनों देशों के बीच सद्भावना और मैत्री निरंतर बढ़ती रहे।

'आगत-स्वागत' का यह क्रम निश्चय ही दोनों देशों को निकट लाने में महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। कई बार भारतीय बालकों को भी सोवियत संघ जाने के अवसर मिले हैं—बालकों का पारस्परिक मिलन दृढ़ मैत्री की नींव डालता है। अनेक अवसरों पर भारतीय युवक आमन्त्रित हुए हैं, और दोनों देशों की सांस्कृतिक परिषदें तो इस ओर बहुत ही प्रयत्नशील हैं।

---

# इनसे मिलिए

रूस के जन-जीवन को समझने के लिए कुछ व्यक्तियों से मिलना आवश्यक होगा। अधिक उपयुक्त तो यह होता कि वहाँ कुछ दिनों के लिए रहा जाता, पर संभवत: हमारे पाठक इतना समय नहीं दे सकेंगे, अत: हम विविध क्षेत्रों में काम करने वाले कुछ व्यक्तियों से उनकी भेंट कराते हैं। घबराएँ नहीं, कुछ जलपान का प्रबंध भी होगा, क्योंकि रूसी जन आतिथ्य में भी किसी से पीछे नहीं हैं।

## कोम्यूनार्क फार्म

चलिए हम आपको मॉस्को के ही पास एक राजकीय फार्म में ले चलते हैं—फार्म का नाम है 'कोम्यूनार्क फार्म'। यह एक विस्तृत फार्म है जिसका क्षेत्रफल लगभग दस हजार हेक्टर होगा। दूध, मांस और अंडे तथा आलू और चारा उत्पादित करने के लिए यह मॉस्को की बहुत सहायता करता है। कहीं जाने से पहिले सूचित कर देना बहुत ही लाभदायक होता है—यह दर्शक को भी लाभकारी है और आतिथ्यकर्ता को भी। लंदन में जब मैं एक डबल रोटी तथा केक की फैक्ट्री देखने गया तो पहले से ही समय आदि का निश्चय कर लिया था। यथासमय उनकी गाड़ी आई और हम को लिवा ले गई। और भी कई व्यक्ति आए हुए थे। एक छोटी सी फिल्म दिखाई, और फैक्ट्री का विधिवत् दर्शन आरंभ हुआ। स्थान-स्थान पर चीजें चखीं, जब कार्यक्रम समाप्त हुआ तो उपहार के पैकिट दिए गए। देखने से पहले ही जलपान की व्यवस्था की गई थी, और वहाँ का आवश्यक साहित्य, एक कापी और पेंसिल, नोट आदि लेने के लिए, दिए गए थे। इस सोवियत फार्म पर भी सूचना करा दी गई थी अत: उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा थी। पहुँचते ही द्वार पर अगवानी की गई। अंग्रेजी और रूसी अगवानी में एक भेद मालूम हुआ—पहली में औपचारिकता कुछ अधिक थी और दूसरी में आत्मीयता। मैंने कई अवसरों पर देखा है कि अंग्रेजों का आतिथ्य एक बँधी हुई पद्धति से चलता है, जिसकी तैयारी हफ्तों पहले की जाती है, सभी लोगों का ध्यान उस पर केन्द्रित होता है और अतिथि को भी औपचारिकता का पालन करना पड़ता है। यूरोप के अन्य देशों में भी कुछ ऐसा ही है, पर शायद इंगलैंड की अपेक्षा कम। रूस

पै यह औपचारिकता इतनी प्रतीत नहीं होती। यह तो स्वाभाविक ही है कि जब कोई विदेशी जाता है तो सभी चैतन्य हो जाते हैं, और अपने भातिथ्य से प्रभावित करने की चेष्टा करते हैं।

आत्म श्लाघा किसे प्रिय नहीं होती ? सभी बताना चाहते हैं कि उनकी उपलब्धियाँ क्या हैं, वे क्या करते हैं, भविष्य के लिए उनके क्या स्वप्न हैं, और किन बातों में उन्हें विशिष्टता प्राप्त है। इस फाम के बारे में बताया गया कि लगभग ११०० मजदूर काम करते हैं, और ७२५० टन दुग्ध का उत्पादन होता है। पिछले ५ वर्षों में उन्होंने अपनी क्षमता मे ७५% की वृद्धि की है। अंडों का उत्पादन भी १० लाख से बढ़कर १४।। लाख हो गया—३०% की वृद्धि। उनका अनुमान है कि उनकी प्रगति २५% प्रति वर्ष के हिसाब से अगले पांच वर्षों तक होती रहेगी।

'कितना काम करना पड़ता है, और वेतन के रूप में कितना मिलता है?' पूछने पर पता लगा कि एक मजदूर का कार्य दिवस ७ घटों का होता है, और वेतन लगभग १५० रूबल अर्थात् (२५०)। काफी अच्छा वेतन है। इस पर कुछ बोनस भी मिलता है, परन्तु शर्त यह है कि आपको अपना नियत काम नियत समय पर करना पड़ेगा। कुछ लोग तो पांच मास तक का बोनस प्राप्त कर लेते हैं। भोजन की व्यवस्था कार्य क्षेत्र पर ही होती है, और यह काफी सस्ती होती है। योरप मे इस प्रकार की व्यवस्था प्राय सर्वत्र देखी गई कि कार्य-क्षेत्र में सचालित आहार गृह सस्ते दामों पर जलपान, भोजन आदि की व्यवस्था कर देते हैं। इण्डिया पब्लिक लाइब्रेरी के कैण्टीन मे १ प्याला चाय का दाम १ पैनी दे कर मैं आश्चर्यचकित हो गया था। इतना सस्ता तो विश्वविद्यालय कैण्टीन मे भी न था। एक और अच्छी बात यह है इस फाम का एक आराम गृह कालेसागर पर भी है—सुन्दर स्वास्थ्यप्रद समुद्र तट, और आपका व्यय होगा केवल ५० प्रतिशत, बाकी का प्रबन्ध आपकी ट्रेड यूनियन करेगी। यदि छुट्टी मनाने मे आपने अधिक व्यय किया तो आनन्द आधा रह जाता है। यदि आप नैनीताल जा कर ७०) प्रतिदिन व्यय करें तो हमेशा जेब को सम्भालना होता है। पर यदि आनन्द और स्वास्थ्यप्रद स्थान में खर्च भी कम करना पड़े तो आनन्द की मात्रा द्विगुणित हो जाती है। बुढ़ापे में पेंशन लीजिए, और अशक्त होने पर भी इस सुविधा का लाभ उठाइए।

मजदूर के फ्लैट पर

यह तो आपने फार्म देखा और फार्म की व्यवस्था सुनी। पर यह भी तो

देखिए—ये लोग रहते किस प्रकार हैं। रूस में निर्माण का कार्य जोरों पर है। मास्को में ही प्रति वर्ष १ लाख से अधिक फ्लैट तैयार होते हैं। जब मैं लौटते समय हवाई अड्डे की ओर आ रहा था तो देखा कि कितनी ही लम्बी पंक्तियों में फ्लैट बनाने का काम चल रहा है। फ्लैट होते छोटे हैं परन्तु अधिक से अधिक लोगों को फ्लैट देने की चेष्टा की जाती है।

तो चलिए फार्म पर काम करने वालों में से किसी का घर भी देख लें। सड़क के दोनों ओर ६ मंजिलों के भवन बने हुए थे, जिनमें फार्म पर काम करने वालों के फ्लैट थे। हम एक फ्लैट पर पहुँचते हैं। यह काम करने वाली एक लड़की का फ्लैट है। वह पढ़ती भी है, और काम भी करती है। उसके साथ उसके माता-पिता भी रहते हैं। दो कमरों के इस फ्लैट में स्नान, रसोई, स्टोर आदि की व्यवस्था है। फ्लैट केन्द्र-धमित है और इसमें बिजली तथा गैस की व्यवस्था है। गर्म और ठण्डे पानी के नल भी हैं। एक टेलिविजन, एक रेडियो और एक टेप-रिकार्डर भी दिखाई देते हैं। एक सोफा सेट है, एक दीवान और दरवाजों पर पर्दे। काफी साफ सुथरा फ्लैट है।

फ्लैट में घुसते ही एक सामान्य प्रश्न उठता है—इसका किराया क्या है? और जब यह मालूम होता है कि इसका किराया ८ रूबल है तो आश्चर्य होना स्वाभाविक है। यह आश्चर्य और भी बढ़ जाता है जब यह पता चलता है कि इसमें बिजली, गैस और पानी का खर्च भी शामिल है। इस परिवार में चार व्यक्ति हैं—लड़की जो पढ़ती है और काम भी करती है, उसका भाई जो एक इंजीनियर है और उनके मां-बाप जिन्हें कार्यमुक्त होने पर पेंशन मिलती है। कुल ४०० रूबल हो जाता है, परंतु किराया केवल ८ रूबल—आय का केवल ५%। अपने यहाँ तो यह प्रतिशत १५ और २० तक प्रायः हो जाता है। अब आप आए हैं तो थोड़ा जलपान भी कर लीजिये, और आतिथ्य-सत्कार में जुटी नीना कुमारी को धन्यवाद देते हुए विदा कीजिये।

## एक फैक्ट्री

फार्म से अब एक फैक्ट्री में चलिए। यह देखिए मॉस्को से निकलते ही थोड़ी दूर पर एक विशालकाय औद्योगिक संस्थान। इसमें बुनाई का काम होता—सूत, ऊन, नाइलोन आदि सभी प्रकार की सामग्री काम में ली जाती है—इससे मर्द, औरत, बच्चे और खिलाड़ी सभी की आवश्यकता की पूर्ति होती है। काम करने वालों की संख्या होगी कोई २४००, और उत्पादन लगभग ७

करोड़ वस्त्र प्रतिवर्ष। इस संस्थान में काम करने वाली प्राय महिलाएँ हैं—पुरुष तो ५ प्रतिशत ही होंगे। आप देर से भी पहुँचें तब कोई बात नहीं, आपके स्वागतार्थ भारी भीड़ होगी, और उपयुक्त पेय तथा रूसी चाकलेट आपके सम्मुख उपस्थित होंगे। भीनी भीनी सुगंधियुक्त सोडा और मजेदार चाकलेट खाकर आप बहुत प्रसन्न होंगे। यदि चाहें तो सुगंधित पानी पीजिये। फैक्ट्री में प्रवेश करने पर आप देखेंगे कि प्राय सभी यन्त्र सोवियत मेक के ही हैं। कहीं-कहीं जर्मन एवं इटेलियन मेक यन्त्र मिल जाते हैं। प्राय सभी यन्त्र स्वचालित हैं। और एक ही मजदूर तीन चार मशीनों की देखभाल करता है। यदि जरा सी भी कोई खराबी हो जाए, यदि धागा भी टूट जावे तो मशीन अपने आप बंद हो जाती है और तब तक नहीं चलेगी जब तक खराबी दूर न हो जाए। ऐसा नहीं है कि कर्मचारियों का सामाजिक जीवन अवरुद्ध हो। उन्हें पारस्परिक प्रतियोगिता के अवसर दिए जाते हैं। क्लबों में गोष्ठियाँ होती हैं, पर कॉफी तथा स्नैक बिना नहीं। समय समय पर पुराने तथा नये कार्यकर्ता मिलते हैं। नवयुवकों को वृद्धों के अनुभव का लाभ होता है, तथा वृद्ध नवयुवकों से स्फूर्ति प्राप्त करते हैं और आपकी जानकारी बढ़ाते हैं। अनेक प्रकार की प्रतियोगिताएँ होती हैं। एक प्रतियोगिता की बात जान कर तो आपका बहुत ही मनोरंजन होगा। यह प्रतियोगिता थी कि नव दम्पतियों में सर्वोत्कृष्ट पति कौन है। आप यह भी पूछेंगे कि सर्वोत्कृष्ट पत्नी के लिए प्रतियोगिता क्यों नहीं हुई। पर प्राय महिलाओं द्वारा चालित इस संस्थान में आपको तत्काल उत्तर मिलेगा—"पत्नियाँ तो सभी अच्छी होती हैं। प्रतियोगिता का प्रश्न ही नहीं उठता।" मुझे एक जापानी कहावत याद आई। उसमें बताया गया है कि रसोइयों में सबसे उत्कृष्ट चीनी रसोइया, (शायद हम लोगों को उसका भोजन पसंद न आए), पतियों में सर्वोत्कृष्ट अमरीकी पति, और पत्नियों में जापानी पत्नी। यहाँ मैं यह भी स्वीकार कर लूँ कि मुझे इन तीनों में से किसी एक का भी अनुभव नहीं है। मुझ जैसे शाकाहारी को चीनी रसोइयों की करामात का पता कैसे लग सकता है। पत्नी के लिए मैं अवस्था की दूसरी ओर पहुंच चुका हूँ, और पत्नी का प्रश्न तो उठता ही नहीं है।

फैक्ट्री के अन्दर बच्चों के खेलकूद का भी प्रबंध है। फुटबॉल तथा वॉली बाल, झूले और सी सॉ बच्चों को आनन्द प्रदान करते हैं और सूर्य का आह्लादकारक प्रकाश तो योरपीय जीवन में, प्राय. अपेक्षित रहता है। यहाँ मैं यह

निवेदन करदूं कि भारतीय सूर्य और भारतीय आकाश योरुप में रहने वालों की ईर्षा के विषय हैं। मेरे पास बराबर पत्र आते रहते हैं। 'आप हमें अपनी थोड़ी धूप भेज दें, बदले में हम आपको अपनी वर्षा और सर्दी भेज देंगे।' यदि कहीं भेज सकते तो यह विनिमय दोनों ओर कितना सुख प्रदान करता।

## वेतन-स्तर

अब मजदूरों और इंजीनियरों से भी बातें कर लीजिए। सबसे पहली बात इनके वेतन का पता लगाने की है। प्रशिक्षण काल में यह मात्रा लगभग ६०० रु० होती है, और मजदूर का सामान्य वेतन ८००-९०० रु०। यह १२००-१३०० रु० महीने तक बढ़ सकता है। बड़े इंजीनियरों को लगभग १५०० रु० और छोटे इंजीनियरों को १२००-१२५० रु०। फैक्ट्री की डायरेक्टर जिसे सबसे अधिक वेतन मिलता है लगभग १८०० रु० प्राप्त करती है। इस प्रकार सारा ढांचा ६०० से १८०० रु० तक के बीच में है। किसी भी भारतीय को यह देख कर बहुत आश्चर्य सा होता है, और उसके सामने अनेक प्रश्न आते हैं। भारत में ऐसा क्यों नहीं? यहां तो किसी को १५ रु० मिलते हैं तो किसी को १५००० रु०। ऐसा क्यों? रूस में छुट्टियां शायद कुछ कम मिलती हैं। साल में पूरे वेतन पर केवल २८ दिन की छुट्टी। यहां भी ट्रेड यूनियन महत्वपूर्ण है और यदि प्रशासन और ट्रेड यूनियन के विचारों में अन्तर होता है तो ट्रेड यूनियन की बात मानी जाती है। छुट्टी के संबंध में इस संस्थान में आप एक और बात भी जानना चाहेंगे। यहां स्त्रियों की संख्या अधिक है। प्रसूतावकाश ४ महीने का होता है—दो महीने बच्चा होने से पहले और दो महीने बच्चा होने के बाद। बच्चा होने वाली महिला को कार्यावधि भी कम कर दी जाती है, तथा अपेक्षाकृत हलका काम दिया जाता है। कार्य-मुक्त होने की अवधि ५५ वर्ष है, लेकिन पुरुषों के लिये ६० वर्ष है। अवकाश के उपरांत प्रत्येक मजदूर पेंशन पाता है।

यहां भी आपकी इच्छा होगी कि हम संस्थान में काम करने वाले किसी व्यक्ति का निवास-स्थान देखें। हम चाहते थे कि एक ऐसा निवास-स्थान देखें जिसमें कोई एक परिवार रहता हो। परंतु यहां तो प्रायः सभी लड़कियाँ कुंवारी थीं, इसलिये एक समस्या पैदा हो गई, फिर भी किसी तरह एक परिवार को देखने का प्रबंध हुआ। हम उस परिवार में पहुँचे। पति और पत्नी

दोनों ही काम करते हैं—पत्नी किसी फैक्ट्री मे, और पति कहीं अन्यत्र एक मिकनिक हैं। उनकी एक पुत्री भी थी स्वेतलाना। यह नाम मुनते ही आपका ध्यान स्टालिन की पुत्री की ओर आकर्षित हो जायेगा। आजकल तो नहीं किंतु कुछ समय पूर्व स्वेतलाना के समाचार मुखपृष्ठ पर छापे जाते थे। उनके द्वारा लिखित सामग्री का प्रकाशन अमेरिका मे बड़े ऊंचे दामों पर खरीदा गया। उस परिवार मे हमें मालुम हुआ कि दोनों की आमदनी लगभग २५०० रु मासिक है। पर यहाँ भी आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मकान, बिजली, गैस और पानी का खर्चा केवल ५५ रु ही है। भोजन मे इन लोगों को अवश्य अधिक खर्च करना पड़ता है और वेतन का तिहाई भाग इस मद को देना होता है। इसके पश्चात् कपड़ों पर लगभग १६% व्यय होता है और सिनेमा, थियेटर आदि मदों पर १०% रखे जाते हैं। पढ़ाई कुछ मँहगी मालुम होती है। क्योंकि बच्चों की किंडरगार्टन कक्षा का व्यय लगभग ७० रु मासिक है। अखबार, पत्र-पत्रिकाओं के लिये भी लगभग २५ रु मासिक का खर्च रखा जाता है। दो खर्च और हैं—एक है पति के लिये सिगरेटों का—८५ रु की सिगरेट पी जाते हैं पति महोदय। पत्नी धूम्रपान नहीं करती, पर उसने बीमा के लिये थोड़ी सी रकम सुरक्षित रखी है। यह सब मिलकर वेतन का पौन हो जाता है। बाकी चौथाई छुट्टियों के लिये बाकी रहता है। आश्चर्य तो अवश्य होता होगा कि भोजन पर इतना खर्च क्यों होता है ? पर पता लगा कि इस परिवार का आतिथ्य उच्च कोटि का है, और मित्र आते ही रहते हैं।

## पुस्तकों की दुकान

अब आपको हम मॉस्को के गोर्की बाजार मे एक पुस्तक संस्थान मे ले चलते हैं। कितनी सामग्री प्रस्तुत करता है यह संस्थान। सोवियत राज्य के ही नहीं विदेश के अनेक लेखक यहां आपको मिलेंगे—उनकी अपनी भाषा मे और रूसी अनुवाद के रूप मे। आप शेक्सपियर और डिकिन्स ही नहीं देखेंगे बालजेक और टैगोर भी देखेंगे। टैगोर को ही देखिये उनकी कृतियों की ४० लाख प्रतियाँ छप चुकी हैं। शायद इतनी प्रतियां अन्य देशों मे तो क्या भारत मे भी नहीं छपीं। सोवियत राज्य की ही ६० भाषाएँ हैं और इसके अतिरिक्त अन्य देशों की ५० भाषाओं में कार्य होता है। इजवस्तिया की प्रतिदिन ८० लाख प्रतियां और प्रावदा की ७० लाख छपती हैं। यदि संघ के सभी पत्र-पत्रिकाओं को जोड़ा

जाए तो प्रति वर्ष १८३० करोड़ प्रतियाँ छपती हैं। यह शायद संपूर्ण विश्व का तिहाई है। सोवियत संघ में पुस्तकालय सेवा भी काफी विकसित है। शायद चार लाख पुस्तकालय होंगे, जिनमें दो लाख शैक्षणिक संस्थानों में। प्रकाशन संस्थानों में काफी भीड़ रहती है। डोमलिनिको (पुस्तक संस्थान) के अतिरिक्त आम रास्तों पर भी किताबें तथा समाचार-पत्र बिकते हैं। उन्हें देखकर ऐसा मालूम होता है कि वहां सड़कों पर दो ही चीजें अधिक बिकती हैं—एक आइसक्रीम और दूसरी पुस्तकें। रूस में सड़कों पर आइसक्रीम बहुत बिकती देखी गई, और मैंने स्वयं भी कई बार इसका उपभोग किया। औद्योगिक प्रदर्शनी की उस आइसक्रीम को तो मैं नहीं भूल सकता, जो मैंने रंग-बिरंगे फव्वारों को देखते हुए अपने मित्रों के साथ खाई थी। इसलिए नहीं कि वह बड़ी मजेदार थी किंतु इसलिए कि उसके खाने से भारत लौटने तक मेरे दांत में दर्द बना रहा।

## डिपार्टमेण्टल स्टोर्स

आप बाजार में आ ही गए हैं तो थोड़ा और बढ़ चलिए। गोर्की मार्केट से सीधे चलिए और लालचौक में पहुंच जाइए। वहाँ आपको अनेक प्रकार के बड़े-बड़े स्टोर मिलेंगे। लालचौक के बाईं ओर आपको 'गुम' नाम का स्टोर दिखाई देगा—बहुत बड़ा, कई मंजिलों का और काफी भरा हुआ। उधर बॉलशोई के पास आपको केन्द्रीय स्टोर मिलेगा और यदि आपके साथ बच्चे भी हैं तो आपको 'देत्स्की', में भी जाना होगा, शायद दाम अधिक देने पड़ेंगे। लालचौक के उस बड़े स्टोर से *यादगार के रूप में मैंने जो माला खरीदी* उसके १२ रूबल यानी १०० रु० दिए। मुझे दुख तो तब हुआ जब मेरी पुत्री कुसुम ने जिसके लिए यह माला खरीदी गई थी इसे बिलकुल नापसंद कर दिया, और मेरी पत्नी ने भी इसी बात की ताईद की। 'मुर्गी जान से गई और मियांजी को स्वाद ही नहीं आया।' मैंने तो न जाने किस प्रकार विदेशी मुद्रा बचा कर यह माला खरीदी पर यहाँ पर यह किसी को अच्छी ही न लगी।

योरोप के अन्य देशों की तरह सोवियत संघ में भी वस्तुओं पर उनका मूल्य लिखा रहता है, और सारे देश में यह मूल्य एक-सा होता है। आप कोई भी चीज खरीदिए दाम लिखे हुए हैं, सौदा करने की आवश्यकता नहीं।

## निर्वाचित प्रतिनिधि

आप यह भी चाहेंगे कि रूस में निर्वाचित किसी प्रतिनिधि से भी बातें

करलें। मैं आपको मॉस्को के एक खंड द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि के पास ले चलता हूँ। इस प्रांत में ४५००० हजार व्यक्ति रहते हैं, और इसका क्षेत्रफल १२०० हेक्टर है। रूस में चुनाव की पद्धति कुछ विचित्र है। कोई भी व्यक्ति अपने को चुनाव का प्रत्याशी नहीं बना सकता। किसी सार्वजनिक संस्था, मजदूरों की सुसाइटी, फैक्ट्री की सभा, किसानों का समुदाय या कार्यालय के कर्मचारी नामांकन करते हैं। हम जिन महाशय के पास आपको ले आए हैं उनका नाम 'पयोन' है, और इनका नामांकन रेल के कर्मचारियों द्वारा किया गया था। हमारे देश की तरह चुनाव के दिन छुट्टी नहीं होती, वरन् छुट्टी के दिन चुनाव होता है। सारे दिन एक समारोह सा दिखाई देता है, और लोग अच्छे अच्छे कपड़े पहन कर वोट देने जाते हैं। चुनाव कुछ होता ही ऐसा है। हमारे देश में भी यह एक उत्सव का दिन होता है, और यदि आप राजस्थान के किसी निर्वाचन-क्षेत्र में महिला मतदान के केन्द्र पर जाएँ तो आपको रंगबिरंगे वस्त्रों का एसा सुरुचिपूर्ण दृश्य मिलेगा कि आप इन्द्र धनुषी छटा को भी भूल जाएँगे। मूल मानवीय वस्तुओं में समानता हुआ करती है, और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि दोनों देशों में मतदान का दिन एक त्योहार जैसा होता है।

अपने चुने हुए प्रतिनिधि से नागरिकों को बहुत सी आशाएँ होती हैं। मकान की समस्या स्कूलों की समस्या, बाग बगीचे, औषधालयों का प्रबन्ध, चिकित्सालयों का प्रबंध, सड़कों की मरम्मत, नई दुकानों का खोलना, प्रकाश और पानी, परिवहन—सभी कुछ तो प्रतिनिधि के जिम्मे होता है। काम को सम्यक् रूप से चलाने के लिये चुने हुए प्रतिनिधि अपने जिम्मे काम बाँट लेते हैं, और उन पर ध्यान देते हैं। चुने जाने पर वे अपना काम नहीं छोड़ देते, परन्तु अपने काम के पश्चात् सोवियत के कार्यालय में शाम को इकट्ठे होते हैं और योजनाएँ बनाते हैं, तथा उपलब्ध प्रगतियों का अनुशीलन करते हैं। उनका कार्य केवल प्रस्ताव पास करना ही नहीं, बल्कि उनको कार्यान्वित कराना भी है। यह डिप्टी विधायक ही नहीं, प्रशासक भी है, और मतदाताओं से घनिष्ट सम्पर्क रखता है—वह जनता और सरकार के बीच की कड़ी है। किसी भी समय वह जनता से मिल सकता है। ये लोग अपने अलग अलग विभाग बना लेते हैं जैसे आवास, व्यापार, शिक्षा, संस्कृति, सांस्कृतिक मामले। और इस प्रकार मिल जुल कर काम को आगे बढ़ाते हैं। उन्हें स्थानीय जनता

बहुत समय तक अपने पेशे में कार्य करने के उपरान्त सन् १९५६ में उन्होंने प्रोफेसरी से अवकाश प्राप्त किया, किन्तु उनका साहित्यिक कार्य अबाध गति से चलता रहा। उनकी पत्नी उनकी अच्छी देखभाल करती हैं। देखिए वे प्यार से कह रही हैं—'मेरे पति को आराम करने के लिए कहिए कुछ मनोरंजक बातें कीजिए—वे बहुत कमजोर हैं परन्तु उनका मेज पर बैठना घटता ही नहीं'।

> 'क्या आप मेज पर काम करते थकते नहीं ?' प्रश्न किया गया सिमरनाव से
>
> 'मन पसंद काम करने में कोई थकावट नहीं होती। मैं भी क्या करूँ ? प्रूफ तो देखने ही पड़ते हैं। मेरे मुद्रक बराबर महाभारत के प्रूफ भेज रहे हैं।'

इतनी सी बात कह कर क्षमा-याचना करते हुए वे फिर प्रूफ देखने में लग गए। जरा उनकी टेबल पर तो देखें, क्या-क्या पुस्तकें रखी हैं। यह तो थी भगवद्गीता है—मुखपृष्ठ पर एक मंदिर का चित्र अंकित है। हाथ में गीता देखकर सिमरनाव कहने लगे—

> 'जिस प्रकार पानी की एक बूंद में सूर्य की छाया दिखाई पड़ती है, इसी प्रकार प्राचीन भारत के सभी दार्शनिक विचार इस पुस्तक (गीता) में अभिव्यक्त हुए हैं।

यह पूछने पर कि उन्होंने भारतीय साहित्य और भाषा-विशेष कर संस्कृत का अध्ययन कहां किया तो उनका उत्तर था—

मेरी प्रेरणा का स्रोत थी रवि बाबू की गीतांजलि। गीतांजलि का रूसी अनुवाद पढ़ कर मैं भारतीय दर्शन के अधिकाधिक निकट आने लगा। भारतीय संस्कृति और दर्शन का समग्र रूप महाभारत में मिलता है। सम्भवतः विश्व-साहित्य की कोई अन्य कृति इसका मुकाबला नहीं कर सकती। किस्से की बात है, बड़ी प्रतीक्षा करनी पड़ रही थी रेलवे स्टेशन पर। मैं शहर की सड़कों पर घूमने लगा। पुरानी पुस्तकों की एक दुकान पर संस्कृत व्याकरण की एक पुस्तक दिखाई दी, और स्टेशन पर प्रतीक्षा के साथ साथ संस्कृत भाषा का मेरा अध्ययन शुरू हो गया। कोश की सहायता से संस्कृत भाषा पढ़ने लगा और लगभग १० वर्षों में कुछ क्षमता प्राप्त कर ली।' सन् १९३० से मैं ने महाभारत

के अनुवाद का कार्य हाथ में लिया, और रूसी क्रान्ति के समय किया हुआ मेरा साहसिक विचार चरितार्थ होने की दिशा में आगे बढ़ा। अनवरत परिश्रम करने के उपरान्त सन् १९५५ मे अनुवाद का पहला खण्ड प्रकाशित हुआ, २५ वर्ष की घनघोर तपस्या का सुपरिणाम। फिर तो एक के बाद एक खण्ड प्रकाश में आने लगे।

उनकी गीता पर लिखा हुआ था, 'मैं इस ग्रंथावलि को भारत तथा सोवियत राष्ट्र के भाईचारे को समर्पित करता हूँ।' भारत-सोवियत सांस्कृतिक सोसाइटी की राष्ट्रीय परिषद् के अध्यक्ष के० पी० एस० मेनन के प्रति उनका बड़ा सद्भाव था। उनका स्वागत करते हुए स्मिरनाव का जो चित्र प्रकाशित हुआ वह शिवशंकर तथा सरस्वती मेनन के अलबम में एक प्रिय चित्र होगा। लीजिए मैंने आप लोगों को भी इस प्रसिद्ध विद्वान से मिला दिया। इनका प्रसिद्ध आदर्श वाक्य था, 'सत्य ही सर्वोपरि है।'

### बच्चों का बाग

अब चलिए बच्चों के बाग में। देश के बच्चों को समुचित रूप से योग्य बनाने के हेतु रूस में काफी चेष्टा की जाती है। जन्म से उनके बड़े होने तक बड़ी दत्तचित्तता के साथ उनकी देखरेख की जाती है। यह देखिए बाल-नेताओं का एक प्रासाद। शीशे का बना हुआ यह महल सूर्य की किरणों में पूरी तरह चमक रहा है। इस के सामने ही सौर-मण्डल का एक मॉडल है जिसमें, इस प्रासाद में प्रवेश करते समय बच्चे यह देख लें कि विश्व कितना विस्तृत है, और उसमें वे कितनी प्रगति कर सकते हैं। इसी प्रकार का एक मॉडल मास्को की स्थायी औद्योगिक प्रदर्शनी के सामने भी है, जिसने रूस की अन्तरिक्ष विजय को चिरस्थायी बना दिया है। बच्चों का यह प्रासाद कई मंजिलों का है और खूब सजा हुआ है। छोटे बच्चों के हॉल में हाथी, ऊंट, भालू और तरह-तरह के जानवर हैं। साथ ही अनेक देशों के बच्चों की बनाई हुई गुड़ियाएँ भी हैं। बड़े बच्चों के लिए अनेक वस्तुओं से भरा हुआ एक खेल का कमरा, तथा संगीत और नृत्य के प्रेमियों के लिए तत्सम्बन्धित कमरे हैं। इन सभी के साथ योग्य शिक्षक भी हैं। बच्चे यहां उत्पादन कला में भी क्षमता प्राप्त करते हैं। उनके बनाए चित्र, छाया-चित्र और मूर्तियां द्रव्योपार्जन करती हैं। लड़कियों के लिए रसोई बनाने और सिलाई की व्यवस्था है। इस प्रासाद में पढ़ने के कमरे

और प्रयोगशालाएँ भी हैं। एक मत्स्यशाला है, जिसमें विविध प्रकार की मछलियाँ संग्रहीत हैं। बच्चों को यन्त्रों से स्वाभाविक प्रेम होता है और वे तरह तरह की चीजें बनाना चाहते हैं। अनेक प्रकार के मॉडल बनाये जाते हैं, और वे प्रदर्शन के हेतु रखे जाते हैं। इस प्रासाद में ३ हजार बच्चों के लिए स्थान है। इसके ७०० समुदाय हैं और ३२५ अध्यापक उनसे सम्बन्धित हैं। किसी बड़े नगर में एक बड़ी नवयुवक-शाला होती है, और उसके विविध भागों में अन्य छोटी शालाएँ होती हैं। इन शालाओं में ७-१८ वर्ष तक के बच्चे और किशोर प्रवेश पाते हैं, किन्तु फीस कुछ नहीं लगती। ७ वर्ष से कम अवस्था के बच्चे किंडरगार्टन तथा नर्सरी की व्यवस्था में हैं। किंडरगार्टन में काम पर जाते समय माँ-बाप अपने बच्चों को छोड़ जाते हैं, और लौटते समय वापिस ले जाते हैं। इस बीच इन बच्चों को वहाँ हलका व्यायाम कराया जाता है, जलपान का प्रबन्ध होता है, और कुछ पढ़ाई भी होती है।

## स्टालिन से भेंट

अब हम आपको एक ऐसे व्यक्ति से मिलाते हैं जो किसी समय विश्व के चार बड़ों में था। द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान उस व्यक्ति को जो ख्याति मिली वह इतिहास में मोटे अक्षरों में अंकित है। इसमें तो सन्देह नहीं कि इस व्यक्ति का व्यक्तित्व महान है। इनकी नीति के सम्बन्ध में कुछ विरोधी मत हो सकते हैं, पर एक समय था जब इनके नाम से विश्व सचेत हो जाता था। इस लौह पुरुष का नाम स्टालिन है। इनसे भेंट करना कोई सामान्य काम नहीं। रूस के अनेक उच्चाधिकारी और बड़े बड़े देशों के राजदूत भी इनसे मिलने में सफल नहीं हुए। इसलिए इनसे भेंट करने के लिए हमें किसी माध्यम का आश्रय लेना होगा, और यह माध्यम यदि भारतीय ही हो तो आसानी होगी। इस कार्य के लिए हमें रूस में भारत के राजदूत पद्मभूषण डा० के० पी० एस० मेनन की सहायता लेनी होगी। वे रूस में एक लम्बे समय तक भारत के राजदूत रहे, और आज भी भारत सोवियत मैत्री को दृढ़ करने में संलग्न हैं।

किसी भी देश के राजदूत को अपने परिचय पत्र दूसरे देश के सर्वोच्च अधिकारी को प्रस्तुत करने पड़ते हैं, और इस कार्य के लिए श्री मेनन को स्टालिन की मृत्यु से कुछ ही दिनों पूर्व अवसर मिला। आप भी उनके साथ चलिए,

ओर उस कक्ष में पहुँचिए जहां स्टालिन से भेंट होने वाली है। साढ़े सात बजे का समय है, मेनन राजदूतावास से रवाना हो रहे हैं। आज उनका ड्राइवर अपने को विश्व का सबसे उत्तम चालक समझता है, क्योंकि उसकी सम्भावना में स्टालिन की एक झलक लगभग निश्चित सी हो चली है। आप भी देख लीजिए स्टालिन को उनके उसी रूप में, जिसमें आपने उसके चित्र देखे हैं। पार्टी की यूनिफार्म और ऊंचे गले का कोट, घनी मूंछें जो न जाने कितना रहस्य छिपाए हुए हैं, गम्भीर आकृति जिसकी पृष्ठभूमि में कितनी राजनैतिकता है। ठीक ८ बजे मेनन को स्टालिन के कमरे में प्रविष्ट कराया गया। वे खड़े थे आगे बढ़े, हाथ मिलाया, और बातचीत की टेबिल की ओर बढ़ चले। दोनों आमने-सामने बैठे, भाषा की कठिनाई थी, इसीलिये रूसी दुभाषिया साथ था। स्टालिन की दाहिनी ओर विदेशी मामलों के मंत्री मलिक थे, इधर मेनन के साथ उनके सेक्रेटरी।

स्टालिन आराम से कुर्सी पर बैठे, और कहने लगे, 'राजदूत महोदय! मैं आपकी सेवा में हूं'। इसका अभिप्राय यही हुआ कि मेनन साहब बातचीत का आरम्भ करें। यह स्वाभाविक था कि सर्वप्रथम उन्हें भेंट के लिए धन्यवाद दिया जाए। उन्होंने कहा कि प्रधान मंत्री होने के नाते विदेशी राजदूतों से मिलना उनका कर्त्तव्य है। पर इन पांच वर्षों में वे कितने राजदूतों से मिले ? केवल तीन से! मेनन साहब ने औपचारिकता का प्रदर्शन करते हुए भारत के प्रधान मन्त्री का अभिवादन और उनके स्वास्थ्य के लिये शुभकामनाएँ अर्पित कीं। इसके उत्तर में उन्होने अपनी ओर से अभिवादन और शुभ कामनाएँ भेजने के लिये कहा। इसके पश्चात् श्री मेनन ने विदेशी कार्यालय की प्रशंसा करते हुए प्राप्त आतिथ्य के लिये धन्यवाद दिया। इस पर स्टालिन ने जो उत्तर दिया वह दृष्टव्य है। उन्होंने कहा 'सोवियत संघ के तो चरवाहे भी आतिथ्य के गुणों से पूर्ण हैं—कम से कम हम उनसे तो अच्छे हैं ही'। सोवियत संघ के लोग अन्य जातियों और राष्ट्र के लोगों को अपने समान ही समझते हैं, और भारत के व्यक्तियों के प्रति तो विशेष रूप से उनकी अति आतिथ्यपूर्ण भावना है।'

स्टालिन ने पूछा, 'भारत की भाषा उर्दू है या हिन्दू ?' 'हिंदी' के स्थान पर 'हिंदू' ही कहा गया था। 'क्या सभी भाषाएँ एक परिवार की हैं ?' गुजराती भाषा के बारे में विशेष रूप से पूछा शायद इसलिए कि महात्मा गांधी गुजराती थे। भाषा के बारे में फिर पूछा—'क्या पाकिस्तान अपनी

एक भाषा का विकास कर रहा है ?'। जब यह बताया गया कि 'भारत के खेमों की भाषा' उर्दू में अरबी और फारसी के शब्द विशेष रूप से बढ़ाने का प्रयास पाकिस्तान के द्वारा किया जा रहा है, तो स्टालिन ने कहा—'तब तो यह एक वास्तविक राष्ट्रीय भाषा नहीं हो सकती।'

स्टालिन अधिक नहीं बोलते थे, सुनना अधिक पसंद करते थे, और सुनते समय दा दा' कहते रहते थे। अमेरीका, फारमूसा, जापान आदि के प्रसंग पर उन्हें अधिक दिलचस्पी थी। उनका यह भी कहना था कि यदि कोई देश अपनी रक्षा करना चाहता है तो उसकी स्वयं की सेना इस योग्य होनी चाहिए। हवाई शक्ति में उनका बहुत विश्वास था, क्योंकि उनकी मान्यता थी कि हवाई शक्ति के अभाव में रक्षा का काम कारगर नहीं हो सकता। धर्म की बात उन्होंने सामने आने ही न दी। भारतवर्ष की धर्म-निरपेक्ष नीति पर उनको सतोष था और वे इस बात को मानते थे कि धर्म कोई भी क्यों न हो, राष्ट्र की एकता पहले है। स्टालिन के संबंध में अनेक बातें कही जाती हैं, पर हमें तो उनसे मुलाकात करनी थी, जो हो गई। यदि इस मुलाकात में कुछ देर हो जाती तो फिर यह संभव न था, क्योंकि उनकी जीवन-ज्योति थोड़े ही दिनों पश्चात् प्रलय ज्योति में लीन हो गई।

## ग्रामीण क्लब

आइए आपको एक ग्रामीण क्लब में घुमा लाएँ। ग्राम का नाम है गोमोने तोवो—यह लेनिनग्राड क्षेत्र में है। सुहावनी ग्रीष्मकालीन सध्या है, और क्षितिज पर सूर्य टिका हुआ है। जिस सड़क से हम जा रहे हैं उसके दोनों ओर मकान हैं। यह मार्ग काफी हरा-भरा है। क्लब बड़ी तो नहीं है, पर काफी स्थान है। दिन का काम पूरा हो चुका है, और लोग नई पोशाकों में क्लब पहुंच रहे हैं। ये देखिये कितने लड़की लड़के एकत्र हो गए हैं—आप भी उनमें मिल जाइए। लड़कियां एक दूसरी तरफ के कमरे में चली जाती हैं। ये दस-ग्यारह हैं और सभी काम करती हैं, तथा सायंकालीन कक्षाओं में शिक्षा भी प्राप्त करती हैं। अब लड़कियाँ स्वाभाविक गति में गा रही हैं, उनको कोई प्रयास नहीं करना पड़ता—ये पुरानी पद्धति के रूसी गीत भी गाती हैं, और कुछ नए भी, साथ ही कुछ पक्के गाने भी सुनाई पड़ते हैं।

क्लब में एक भवक दद भी है। पीतल का बाजा, बॉलरूम बच्चों की

नृत्य कक्षा भी है। अब हॉल में आइए। आज कोई खेल या कंसर्ट तो है नहीं, पर रंगमंच के सामने संगीतज्ञ बैठे हुए हैं। यहाँ अनेक लड़के लड़कियाँ वाद्य-यंत्रों के साथ उपस्थित हैं। वे एक नृत्य की तैयारी कर रहे हैं। एक लम्बा आदमी उनको प्रशिक्षण दे रहा है और ध्यानपूर्वक प्रत्येक को बता रहा है। प्रत्येक बालक-बालिका की प्रगति को जाँचा जा रहा है। इस क्लब में बहुत से लोग शामिल होते हैं, और कभी-कभी भाषण भी होते हैं। कुछ गांवों की कला-मंडलियां घूमती भी रहती हैं, और प्रचार-कार्य करती हैं। जब खेतों में अधिक काम होता है तो क्लबों में जाने वालों की संख्या घट जाती है बाहर के लोग भी अपने गीत सुनाने के लिए आते रहते हैं।

## रूसी विवाह

किसी देश के सम्बन्ध में उसके जन-जीवन का ज्ञान बहुत मनोरंजक और उपयोगी होता है। इसमें सन्देह नहीं कि क्रांति के बाद सोवियत संघ बनने पर लोगों के रहन-सहन में अंतर आ गया। हमारे जीवन का एक पक्ष बहुत महत्त्व-पूर्ण है—यह है विवाह तथा परिवार। आज का वैवाहिक रूप और पारि-वारिक गठन रूस में भी वैसा ही हो चला है जैसा कि पश्चिम के अन्य देशों में। इतना ही क्यों भारत में भी पश्चिम की प्रथा बढ़ती जा रही है, और अनेक सिविल शादियाँ होती हैं। आज रूस में समाज, धर्म, राष्ट्रीयता, जाति किसी प्रकार की रुकावट नहीं डाल सकते। आजकल वहां सीधी-सीधी प्रथा यह है कि जब कोई जोड़ा शादी करना चाहे तो वे एक प्रार्थना पत्र दे जो स्थानीय सोवियत या बड़े-बड़े शहरों में बने विवाह-प्रासादों में प्रेषित कर दिया जाता है। कुछ ही दिनों बाद दूल्हा-दुलहिन अपने संबंधियों के साथ वहां पहुंच जाते हैं, जिससे उनकी शादी का पंजीकरण किया जा सके। अब तक वैवाहिक अंगूठियाँ पहनने का रिवाज़ नहीं था, लेकिन द्वितीय महायुद्ध के बाद पुरानी प्रथा पुनः चालू हो गई है। विभिन्न वर्गों में विवाह की पद्धति कुछ अलग होती है लेकिन विवाह के बाद दावत अवश्य होती है और उपहार भी प्राप्त होते हैं। दुलहिन सफेद कपड़े पहनती है। प्राचीन रूस में विवाह की पद्धति लगभग ऐसी ही होती थी जैसी हमारे देश में।

शादी का आरम्भ 'स्वातोवस्तवो' अर्थात् वर और वधू के माता पिता की बातचीत से होता था और उसके बाद 'परोस्वातानियो' यानी सगाई की

रस्म होती थी। उसके बाद दहेज के लिए कपड़े, उपहार और लेन-देन का प्रबंध होता था। विवाह से पहले लड़की को 'म्हाई थोई' की प्रथा करनी पड़ती थी, तब शादी, फिर भोज।

कन्या का विवाह माता पिता के द्वारा तय होता था। लड़की रोती थी, उसकी बहिनें और सहेलियां रोती थीं। माँ भी रोती थी। रूस का बहुत सा लोक साहित्य इससे भरा हुआ है। जब लड़का लड़की को पसन्द कर लेता था तो उसके माता पिता लड़की वाले के घर 'स्वात्ता' यानी बिचोलिए को भेजते थे। शाम को लड़की वालों के घर खूब तयारियां की जाती थीं, निकट-संबंधी बुलाए जाते, खाना-पीना होता तथा रोशनी की जाती थी। लड़के और उसके रिश्तेदारों के आने के समय लड़की एक बड़ी चादर ओढ़े कोठरी में बैठती। बाहर वाले कमरे में आना उसके लिए वर्जित था। जब समय आता तो लड़की के माता पिता से लड़की देने की प्रार्थना की जाती, और इस पर 'स्वात्ता' कहते तो 'हाथ दीजिए'। लड़की कोठरी में रोती और विलाप करती, अपने मुख को हाथों से ढक कर रुदन करती, परन्तु ये आंसू व्यर्थ थे। पिता हाथ थोता, मोमबत्ती जलाता और संबंध पक्का होता। लड़का और उसके रिश्तेदार चाय पीते और खाते, साथ ही दहेज की बातें भी पक्की करते। आखिर लड़का पूछता, 'क्या लड़की देख सकते हैं?' तब लड़की को कोठरी से लाया जाता, वह बिचारी दुपट्टा ओढ़े आती, और पिता को संबोधन करके अपना रुदन जारी रखती और फिर वापिस कोठरी में चली जाती।

## विदा के आँसू

विवाह का दिन निश्चित करके वे लोग वापिस लौट जाते और लड़की वालों के दहेज की तैयारी शुरू हो जाती। आँसू बहाने में एक सप्ताह बीत जाता। शनिवार के दिन लड़की रोती रोती सारे गाँव में घूम कर अपने रिश्तेदारों को विवाह के लिये निमन्त्रित करती। हर घर में लोग उसका स्वागत करते, खिलाते-पिलाते। सारे गाँव की युवतियां इकट्ठी होतीं। इसके बाद चोटी खोलने की क्रिया होती। कुंवारी लड़कियां एक चोटी गूंथती थीं, और विवाहिता दो चोटियां। कुंवारी की चोटी खोलने का अर्थ था—उसके बीते जीवन, पिता के घर और स्वतन्त्रता को विदाई देना। लड़की रोती हुई कहती—

तुम सुनो धवल हंसनियां
प्यार और स्नेहभरी मेरी सहेलियों

मैं तुम्हें एक काम सौंपती हूँ
काम मित्रता का पर कठिन नहीं।
तुम उतार लो श्वेत हंसनियों
मेरे इस तूफानी सिर से
अमूल्य और ज़रीदार चादर को
छोटे-छोटे मनकों और फीते को
खोलदो गांठें उलझी हुई
तुम खोलदो फीते सुर्ख रंग के
तुम खोलदो दो चोटी की डोरी को।

आख़िर चोटी खोली जाती, लड़की को स्नान कराया जाता। एक बार वह फिर प्रार्थना करती अपनी कुंवारी सुन्दरता को वापिस लेने के लिए। उसके बाद लड़की को उपहार दिए जाते। लड़की सबको नमस्कार करती, आंसू बहाती। अब लड़का अपने मित्रों के साथ वहां आता, और लड़की के लिए 'बेलिज़ा' (शृंगारदान) लाता। दूसरे दिन दिखावे की तैयारी होती। बरात की खूब ख़ातिर की जाती, युवतियाँ जमघट बनाकर अच्छे गीत गातीं। लड़की का पिता लड़की को मेज के पास लाता जहां लड़का पहले से ही खड़ा रहता। माता पिता का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद लड़की को गिरजेघर में ले जाया जाता, और शादी सम्पन्न होती।

इधर लड़की वालों के यहां लड़के-लड़की का विवाह होता, उधर दूल्हा-दुलहिन का इन्तजार होता। जब लाल कमीज और माथे पर गुंथा हुआ सेहरा पहिने दूल्हा, चमकदार कपड़े पहिने हुए दुलहिन को लाता तो सब लोग उनका स्वागत करते। दुलहिन की कमर पर हरे रंग की पेटी, कंधों पर रेशमी रूमाल और सिर पर नारंगी रंग का दुपट्टा होता। जब दरवाजे पर पहुँचते, तो दरवाजा रोकने की क्रिया होती। दूल्हा जब किवाड़ खटखटाता, दुलहिन आंखें नीची किए हुऐ खड़ी रहती। जब मकान के अन्दर देहली पर पैर रखते तो दूल्हे की मां स्वागत करती, तथा वारफेर करती। ये वारफेर भेड़ की खाल में लपेटी दो रोटियों से होता था, फिर बधाइयां दी जातीं। कुछ ही देर पश्चात् लड़की के रिश्तेदार सन्दूक और डिब्बों में भर कर दहेज लाते, और सब लोगों का खान पान होता। पूरा गाँव घर में इकट्ठा हो जाता था, और बड़ा सुन्दर वातावरण रहता।

विवाह-भोज

अंतिम कार्य 'प्रिमउदनोस्तोल' अर्थात् विवाह भोज होता था। सब लोग इधर उधर हो जाते, अन्दर से एक जुलूस निकलता जो बिचौलियों के साथ दूल्हा और दुलहिन का होता था। इस अवसर पर दुलहिन पील भरतास का सूट पहनती थी और जामुनी रंग की ओढ़नी, सिर पर सफेद रूमाल होता था। बार बार कपड़े इसलिये बदले जाते थे कि कहीं नजर न लग जाए। दुलहिन मेज के पास आकर चादर बिछाती और सबको नमस्कार करती। सब स्त्रियाँ मिलकर ऊंचे स्वर में गातीं और गृहस्थी की भावी समृद्धि की कामना करती। मेज पर खाद्य पदार्थ रख दिये जाते। मेहमान गीत गा गा कर मेज के इद गिर्द नाचते। इसके बाद हारमोनियम की धुन, पाँव की टप टप, प्लेटों का शब्द, गीतों की ध्वनि मिलकर एक विचित्र संगीत प्रस्तुत करते। दूल्हा और दुलहिन अतिथियों को शराब पेश करते, और वे शराब पीकर खाली प्याले में कुछ पैसे डालते। विवाह में सास, ससुर, चचिया ससुर, चचिया सास, घर के परिवार के अन्य लोगों के लिये उपहार की वस्तुएँ आती थीं। इस समय के गीतों में वे ही भाव हैं, पद्धतियों का वही रूप है जो भारत में अब तक पाया जाता है। लड़की के विलाप का भी वही रूप है जो भारतीय परिवारों में लड़की को विदा करते समय देखा जाता है।

हाँ, मत पीस मुझ बिचारी को
लाल सुंदरी को
दुखिया को पीड़िता को
तू कायलिया को, आंसुओं से गीली को।

*प्रिय पाठको !*

आपको सोवियत संघ का दर्शन करा दिया, अनेक व्यक्तियों से साक्षात्कार करा दिया। इस सब का उद्देश्य था हम लोगों के द्वारा भारत तथा सोवियत संघ के विविध पक्षों को अच्छी तरह से समझना, और उभयपक्षीय मैत्री को सुदृढ़ बनाना।"

*भारत-सोवियत मैत्री अमर रहे !*